देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

9 772395 711007

Impact Factor
8.642

ISSN : 2395-7115
February 2025
Vol.-21, Issue-2

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

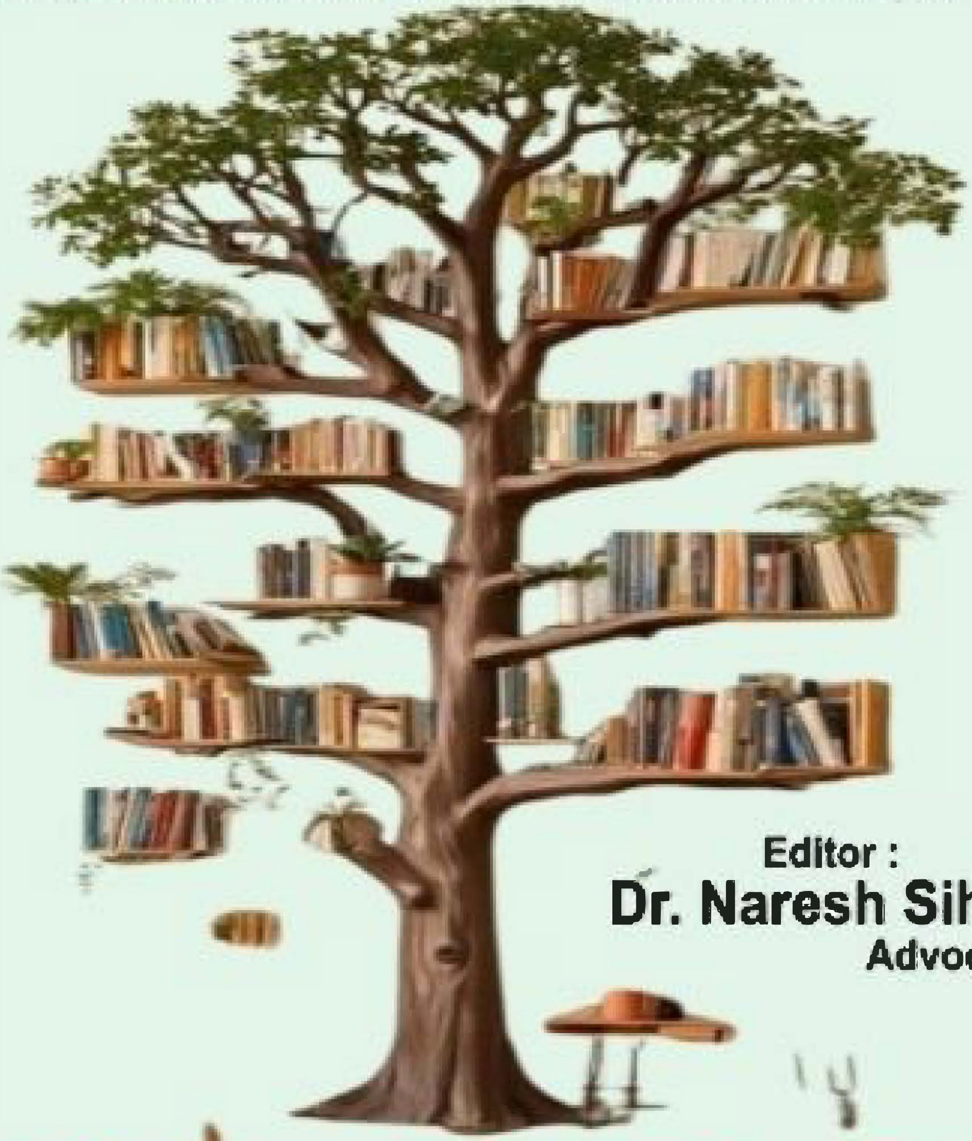

Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित
JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 21 ISSUE-2 (फरवरी 2025) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :
चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट
एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :
गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

प्रो. राधेमोहन राय
पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान।

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

माई मनीषा महंत
किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. विनोद कुमार
हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
नेपाल

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. पायल लिल्हारे
अमरशहीद चंद्रेशेखर आजाद
शा.स्ना.महा. निवाड़ी, मध्यप्रदेश

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टाँटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
त्रिवन्तपुरम, केरल

डॉ. शिवकरण निमल
राजस्थान

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
वाराणसी

डॉ. मानसिंह दहिया
हरियाणा

डॉ. नीलम आर्या
उत्तर प्रदेश

डॉ. रवि सुण्डयाल
जम्मू कश्मीर

प्रो. नरेन्द्र सोनी
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. रोहतास
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. इस्पाक अली
प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

प्रो. रेखा रानी
गवर्नमेंट कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

डॉ. संजीव कुमार विश्वकर्मा
शासकीय महाविद्यालय,
लवकुश नगर, मध्य प्रदेश

डॉ. परमानन्द त्रिपाठी
एचओडी एजुकेशन, एल.एन.डी.
कालेज, मोतिहारी, बिहार

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	**पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)**
खाता धारक का नाम	:	**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी**
बैंक खाता संख्या	:	**1182000109078119**
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

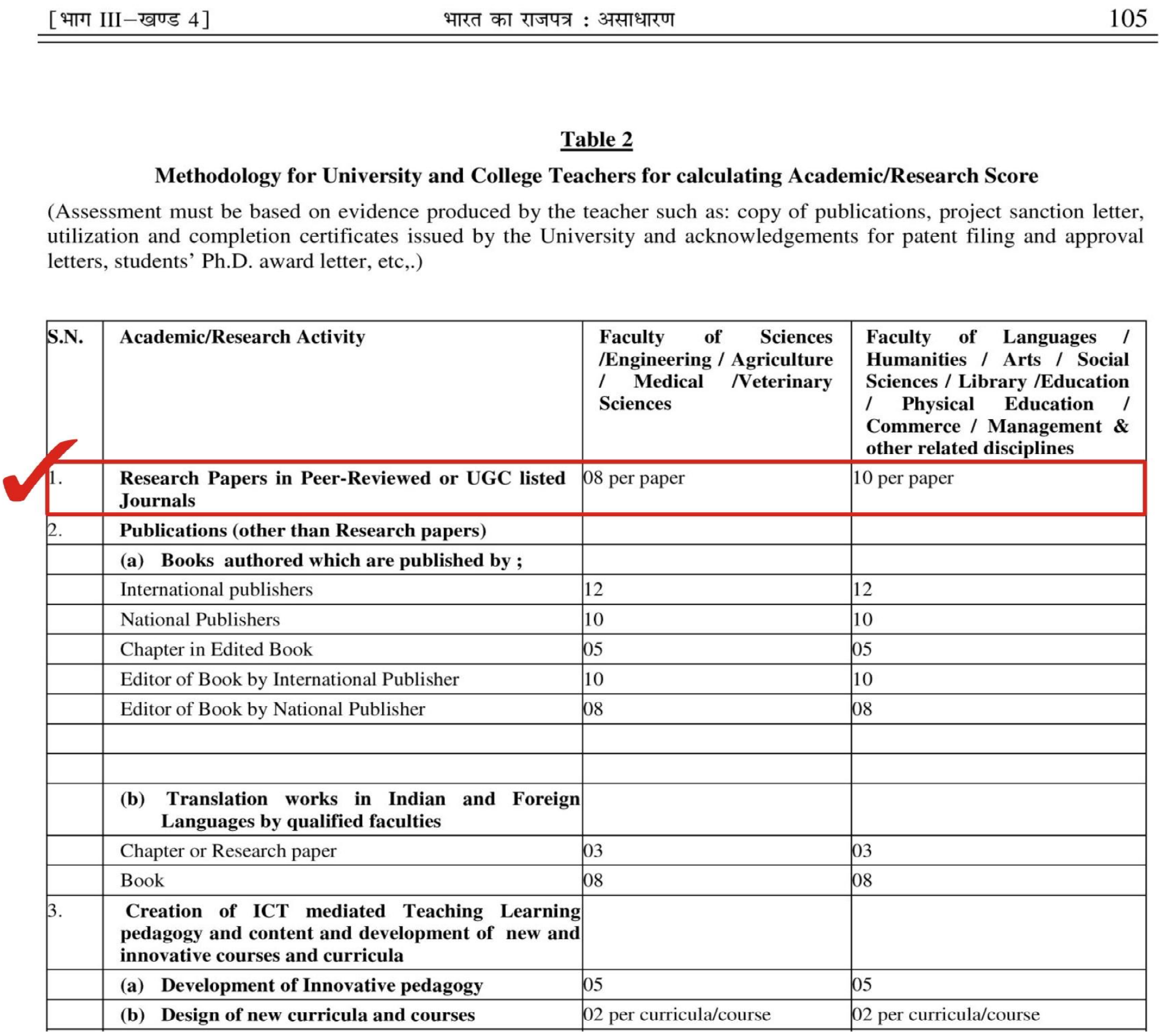

[भाग III—खण्ड 4]   भारत का राजपत्र : असाधारण   105

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
✓ 1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमणिका - फरवरी 2025

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहग	10-10
2.	निर्गुणधार के कवियों की स्त्री-संबंधि धारणाएँ	डॉ० प्रशांत केतु	11-15
3.	भोटिया जनजाति की अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के उन्नयन में भारतीय आधुनिक शिक्षा प्रणाली का योगदान	डॉ० बी०पी० देवली	16-21
4.	दबी हुई जिंदगियां: ‘सूर्याने अनिन्जा ओरु स्त्री' उपन्यास में समलैंगिकता और नारी संघर्ष का टकराव	श्रीवर्षा मोहन	22-26
5.	SEASONAL PATTERN OF BIRD DISTRIBUTION ON MOUNTAIN AND HUMAN INFLUENCE	Abhishek Rollan	27-30
6.	कमर मेवाड़ी की कहानियों का मूल्यांकन	विकास कुमार	31-33
7.	हिमाचल प्रदेश के प्रमुख जनजातीय लोक नृत्य : अवलोकन	अंजली कुमारी, डॉ० मलकीयत सिंह	34-39
8.	विद्यापति के काव्य में सामाजिक दर्शन	डॉ० पूनम देवी, सुमन कुमार	40-42
9.	प्रभा खेतान- ‘अन्या से अनन्या' चुनौतियाँ एवं संघर्ष	विक्रम सिंह दईया	43-45
10.	साहित्य और समाज का अंत:संबंध	डॉ. विक्रम बालकृष्ण वारंग	46-51
11.	‘प्रियप्रवास' काव्य में विप्रलंभ मधुर रस-विधान-प्रतिष्ठा	दिनेश कुमार बड़ोला	52-55
12.	माध्यमिक छात्रों की नागरिकता जागरूकता	डॉ. निबेदिता प्रियदर्शनी	56-62
13.	SYNTHESIS OF BIS (8 HYDROXYQUINOLINE) ZINC(II) COMPLEX	Kamlesh Kumar Meena	63-65
14.	कोरोना काल और तेजेन्द्र शर्मा की कहानी	जवाहर रंजन पंडा	66-72
15.	‘प्रियप्रवास' में वक्रोक्ति विधान	दिनेश कुमार बड़ोला	73-76
16.	मणिपुर में सशस्त्र विद्रोह	डॉ. शक्ति जायसवाल	77-80

17.	ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ : ਨਾਟ-ਸੰਵਾਦ	ਡਾ. ਸੋਨੀਆ ਦੇਵੀ	81-84
18.	हिंदी उपन्यासों में श्रमिक वर्ग संघर्ष का चित्र	प्रिंस कुमार	85-90
19.	श्री राधसर्वेश्वरशरणदेवाचार्य विरचित काव्यों में नैतिक एवं मानवीय मूल्य	डॉ. भेषराज शर्मा, लक्ष्मण राम शर्मा	91-97
20.	गीता में इन्द्रिय ज्ञान के सूत्र	राजेंद्र	98-106
21.	भारत का प्रथम आम चुनाव एक महापर्व एवं चुनौतियां	सुरेश कुमार	107-110
22.	खानवा युद्ध और राणा सांगा	भोजाराम	111-114
23.	ज्योतिषशास्त्र और राजस्थान लोक साहित्य का घनिष्ठ संबंध: एक अध्ययन	सिमरन कोठारी	115-120
24.	नीलोत्पल मृणाल के उपन्यास डार्क हॉर्स के विभिन्न पात्रों का संवाद	प्रो. ब्रजलता शर्मा, प्रियंका यादव	121-124
25.	शोध/अनुसंधान क्या है ? गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान	Dr. Rashmi	125-132
26.	नारी व्यथा का दस्तावेज : डॉ० मीना अग्रवाल	सुमन देवी	133-136
27.	आधुनिक समाज में विवाह-विच्छेद एक अभिश्राप	अंजली गुप्ता, डॉ. बिहारी लाल द्विवेदी	137-138
28.	"हिन्दी उपन्यासों में वृद्धजनों की दशा एवं दिशा"	लूसी कुमारी	139-140
29.	पर्यावरण संरक्षण, मानव सचेतना एवं स्वास्थ्य	डॉ. मनोज दीक्षित	141-146
30.	बदीउज़्ज़माँ के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति : एक अवलोकन	खुशबू सिन्हा	147-149
31.	कबीर दास के निर्गुण भक्ति काव्य में रहस्यवाद के अंश	कविता यादव	150-153
32.	Myriad Shades of 'The Urban Conciousness in Ezekiel's Select Poems	Apoorva	154-159
33.	कबीर की भक्ति व उसका प्रभाव	मनमोहन सिंह नेचवा	160-165
34.	FOREIGN AID AS FOREIGN POLICY DEVICE	Dr. Renu Bala	166-169
35.	प्रेमचंद के कथा साहित्य में दलित-जीवन-यथार्थ	कैलाश पंडित	170-175

36.	मानव जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों की प्रासंगिकता	नेहा कुमारी	176-179
37.	अटल भूजल योजना के अन्तर्गत नीम का थाना पंचायत समिति का एक अध्ययन	राजेश जाट	180-186
38.	देश विभाजन का भारतीय मुस्लिम मन:स्थिति पर प्रभाव (विशेष सन्दर्भ : छाको की वापसी उपन्यास)	तृप्ति त्रिपाठी, डॉ. दयाल प्यारी सिन्हा	187-190
39.	रामफल चहल की एकांकियों में अभिनेयता	सुमन, डॉ. माया मलिक	191-193
40.	श्रद्धाराम फिल्लौरी के उपन्यास भाग्यवती में चित्रित शिक्षा की महत्ता	डॉ. सपना शर्मा	194-197
41.	अनुराग कश्यप की फिल्मों में डार्क कॉमेडी	रवि कुमार	198-204
42.	‘अधिगम का एकमात्र आधार अभ्यास' को उजागर करती संतराम वत्स्य की कहानी 'अभ्यास का महत्त्व'	डॉ. हरप्रीत कौर	205-206
43.	कामायनी का दर्शन और आनंदवाद	डॉ. आर. के. वर्मा	207-211

संपादकीय

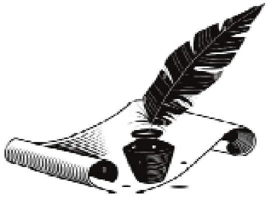

प्रिय पाठकों!

शोध, समाज और संस्कृति के विकास का आधार स्तंभ है। यह न केवल ज्ञान के नये आयाम खोलता है, बल्कि हमें अतीत से सीखकर भविष्य की दिशा निर्धारित करने में भी सहायक होता है। **बोहल शोध मंजूषा** के फरवरी अंक में, हम उन विविध विषयों पर प्रकाश डाल रहे हैं जो समाज, शिक्षा, विज्ञान, और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं।

आज के वैश्विक परिवेश में शोध का महत्त्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है। विज्ञान और तकनीक प्रगति के साथ-साथ मानवीय मूल्यों और सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के लिए गहन अध्ययन की आवश्यकता है। शोध न केवल समस्याओं के समाधान का माध्यम है, बल्कि यह नवाचार और सृजनशीलता को भी प्रोत्साहित करता है।

शोध की गुणवत्ता और इसकी प्रासंगिकता सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है कि शोधकर्त्ता मौलिकता, सटीकता और नैतिकता का पालन करें। शोध का उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्ति तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि यह समाज के व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। एक उत्तम शोध वही है जो समाज की समस्याओं को समझने और उनके प्रभावी समाधान प्रस्तुत करने में सक्षम हो।

बोहल शोध मंजूषा का संपादकीय मंडल इस अंक में विभिन्न शोधार्थियों और विद्वानों द्वारा प्रस्तुत अद्यतन शोध कार्यों को प्रकाशित कर गर्व का अनुभव कर रहा है। हमारा प्रयास है कि इस मंच के माध्यम से नवीनतम शोध प्रवृत्तियों को साझा किया जाए और ज्ञान के क्षेत्र में नवीन दिशाओं को प्रोत्साहित किया जाए।

आशा है कि यह अंक हमारे पाठकों और शोधकर्त्ताओं के लिए प्रेरणादायक सिद्ध होगा तथा उन्हें अपने शोध कार्यों में नवीन दृष्टिकोण अपनाने हेतु प्रेरित करेगा। हम भविष्य में भी ज्ञान और नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

संपादक
बोहल शोध मंजूषा

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 11-15
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

निर्गुणधारा के कवियों की स्त्री–संबंधि धारणाएँ

डॉ0 प्रशांत केतु, हिन्दी विभाग,
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

हिन्दी साहित्य के ‘मध्यकाल’ को विद्वानों ने साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधर पर दो भागों में विभक्त किया है– पूर्व मध्यकाल अर्थात् भक्तिकाल तथा उत्तर मध्यकाल अर्थात् रीतिकाल। मोटे तौर पर भक्तिकाल को दो भागों में बाँटा गया है– निर्गुण काव्य–धरा और सगुण काव्य–धरा। इन दो प्रमुख धराओं को पुनः दो भागों में विभाजित किया गया है। निर्गुण काव्य–धरा के अन्तर्गत एक भाग में ज्ञानाश्रयी काव्य–धरा के कवियों को स्थान दिया गया है तो दूसरे भाग में प्रेमाश्रयी काव्यधरा के कवियों को स्थान दिया गया है। इसी प्रकार सगुण काव्य–धरा के अन्तर्गत एक ओर कृष्ण काव्य–धरा के कवियों को स्थान दिया गया है तो दूसरे भाग में रामभक्ति काव्य–धरा के कवियों को स्थान दिया गया है।

ज्ञानाश्रयी शाखा के कवियों की स्त्री संबंधि धरणाएँ :–

स्त्रियों के प्रति ज्ञानाश्रयी शाखा के संतों का दृष्टिकोण परम्परागत ही रहा है। इस व्यवहार के पीछे उनके सामाजिक एवं जातीय संस्कार हैं। इनके काव्य में परम–तत्त्व की प्राप्ति ही मुख्य विषय है। इन कवियों ने अपनी कविताओं में या तो ईश्वर की महिमा का गुणगान किया है या साध्ना–पथ में व्यवधन डालने वाले तत्त्वों की व्यंजना की है। संतों ने स्त्री को साध्ना–पथ के बाध्क रूप में देखा और उन्होंने स्त्री के रम्या एवं माया रूप की निंदा की है। स्त्री को जैन और नाथ कवियों ने भी योग–मार्ग की बाध और उसके संसर्ग को पुरूष का नाश करने वाला बताया है। गोरखनाथ ने स्त्री–संसर्ग से होने वाले दुष्परिणामों का उल्लेख किया है ‘‘नदी तीरे विरवा नारी संगे पुरूषा अलप जीवन को आसा।’’[1] अर्थात् नारी के संसंर्ग में लीन पुरूष सरिता के तट पर स्थित अनिश्चित जीवन वाले वृक्ष के समान है। संतों का मानना यह था कि स्त्री का कामिनी रूप मोक्ष–प्राप्ति में बाध्क है। उन्होंने जहाँ स्त्री को देवी, माता, पत्नी, पतिव्रता एवं सती के रूप में वर्णित किया है, वहाँ उसका गुणगान किया है। मोक्ष–प्राप्ति उसका उद्देश्य था, अतः उस तक पहुँचने में जिस तत्त्व ने व्यवधन उपस्थित किया, उसी की निंदा संतों ने की है। संतों ने स्त्री के विभिन्न रूपों की कल्पना की है– कामिनी, माया, पत्नी, दासी, गुरू, पतिव्रता, सती और कहीं–कहीं स्वयं को स्त्री के रूप में कल्पित किया है। मूल रूप से देखा जाय तो संतों ने स्त्री के दो रूपों की चर्चा की है– एक तो उसका कामिनी रूप जिसे संत कवियों ने गर्हित एवं त्याज्य बताया है, दूसरा उसका सती एवं पतिव्रता रूप जो संतों को मान्य एवं ग्राह्य है।

संतों ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में कामिनी एवं कनक की निंदा की है। स्त्री के प्रति आसत्तिफ एवं प्रेम बु(एवं विवेक का हरण कर लेता है–

‘‘नारी सेती नेह, बुध्दि विवेक सबही हरै।
कार गंवावै देह, कारिज कोई नां सरै।।’’[2]

कबीरदास कहते हैं कि स्त्री के प्रति प्रेम, बु(एवं विवेक सबका ही हरण कर लेता है। हे जीव! तुम इस स्त्री–प्रेम में अपनी शत्तिफयों का ह्रास क्यों कर रहा है? इससे कोई कार्य भी सपफल नहीं होता है। स्त्री तीन गुणों का नाश करती है। वह जिस पुरूष के पास रहती है, वह भक्ति, मुक्ति एवं ज्ञान को कभी नहीं प्राप्त कर सकता है–

''नारी नसावै तीन गुन, जो नर पासै होई।
भगति मुकुति निज ग्यांन में पैसि न सकई कोई।''3

संत कवियों ने जीवन के परमार्थ के रूप में भक्ति को स्वीकार किया है और इस परमार्थ की उपलब्धि में बाध्क होने वाले सभी विषयों की निंदा की है। लौकिक जीवन के वे सारे तत्त्व जो साध्क के मार्ग में बाध उत्पन्न करते हैं, संतों की दृष्टि में त्याज्य हैं। उन बाध्क तत्त्वों में कनक और कामिनी आते हैं। कनक या सम्पत्ति के भोग के द्वारा मनुष्य आत्मविनाश करता है। इसी प्रकार आत्मविनाश का दूसरा प्रबल माध्यम स्त्राी है। स्त्राी के व्यक्तित्व के विविध पक्ष हैं– किन्तु उसका कामिनी रूप साध्क के साध्ना–पथ में बाध्क बनता है। इसी कारण संतों ने स्त्राी के कामिनी रूप की निंदा की। स्त्राी जो केवल रमणी है, शरीर है, माया है, उसकी निंदा करना संतों का उद्देश्य था। कबीर आदि संत जब नारी की निंदा करते हैं, तो उनका आशय नारी के सामंती रूप की निंदा करना होता है। ध्यातव्य है कि स्त्राी को सामंती व्यवस्था में सम्पत्ति या ध्न के रूप में देखा जाता था। सामंती दृष्टि स्त्राी को कभी पूर्ण मनुष्य के रूप में नहीं देखती थी। वह स्त्राी को मात्रा शरीर समझती थी और संत जब स्त्राी की निंदा करते हैं तो उसके सामंती रूप की निंदा करते हैं अर्थात् उसके कामिनी रूप की भर्त्सना करते हैं।

संतों के अनुसार सच्ची स्त्राी वही है जो पतिव्रत्य का पालन करती है और सदैव पति की आज्ञा मानती है। पतिव्रता स्त्राी का सर्वस्व पति होता है, इसलिए पतिव्रता की लज्जा भी उसके पति की लज्जा है। कबीरदास पतिव्रता स्त्राी की प्रशंसा करते हैं। वे भक्त एवं पतिव्रता स्त्राी को एक ही कोटि में रखते हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि ''कबीरदास भक्त और पतिव्रता को एक कोटि में रखते थे। दोनों का ध्र्म कठोर है, दोनों की वृत्ति कोमल है, दोनों के सामने प्रलोभन के दुस्तर–जंजाल है, दोनों ही कांचन ध्र्मी हैं.... बाहर से मृदु भीतर से कठोर, बाहर से कोमल, भीतर से पुरूष। सबकी सेवा में व्यस्त पर एक ही आराध्किा पतिव्रता ही भक्त के साथ तुलनीय हो सकती है।''4 इस प्रकार संतों ने पतिव्रता स्त्राी को महान माना है। उन्होंने पतिव्रता स्त्राी को अनन्य भक्ति का आदर्श माना है। वे पतिव्रता स्त्राी के प्रति अत्यंत विनत हैं क्योंकि ऐसी स्त्रिायाँ मंगल–विधयनी शक्ति से सम्पृक्त होती हैं। इसीलिए स्त्राी के कटु निंदक कबीर भी पतिव्रता स्त्राी को सम्मान–जनक दृष्टि से देखते हैं। उनके अनुसार वह स्त्राी सम्मान योग्य है जो पति के प्रति एकनिष्ठ भाव से समर्पित है और निष्ठापूर्वक पतिव्रता का पालन करती है।

पतिव्रत्य का चरम विकास सतीत्व में होता है। मध्यकालीन पितृसत्तात्मक व्यवस्था ध्र्मप्रायणता के कारण सती प्रथा में कोई दोष नहीं देखती थी, वरन् उसे सम्माननीय समझा जाता था। संतों ने सती को साध्ना का आदर्श माना। सती जो पति प्रेम में चिता पर बैठकर भस्म हो जाती है। इस अनन्यता और परम त्याग को वे संत साध्ना का आदर्श मानते हैं। कबीर कहते हैं–

''डगमग छांड़ि दे मन बौरा।
अब तौं जरें मरें बनि आवै, लीन्हौं हाथि सिंघौरा।
होइ निसंक मगन होइ नाचै, लोभ मोह भ्रम छांड़ै।
सूरा कहा मरन तैं डरपै, सती न संचे भांड़ै।''5

सूपफी कवियों की स्त्राी संबंधी धरणाएँ :–

सूपफी कवियों ने स्त्राी की पराधीनता एवं विवशता को अपनी रचनाओं में चित्रिात किया है। सूपफी कवियों ने लोक–प्रचलित आख्यानों को अपनी रचनाओं का आधर बनाया। लैला–मजनू, शीरी–पफरहाद के जो किस्से लोक में प्रचलित थे, जिन प्रेम कथाओं को जनता में लोकप्रियता मिली हुई थी, उनका पुनर्प्रस्तुतीकरण और उसके माध्यम से अलौकिक प्रेम व्यंजना, ईश्वरीय प्रेम की अभिव्यक्ति उन्होंने की। सूपफी काव्य में प्रेमाभिव्यंजना के व्यापार में ईश्वर को हमेशा 'स्त्राी' का रूपक दिया गया। जायसी का 'पद्मावत' जो सूपफी प्रेमाख्यान परम्परा का सर्वाध्कि प्रसि(महाकाव्य है, उसमें पद्मावती ईश्वर का रूपक है, जिसकी खोज में जीवात्मा ;रत्नसेनद्ध भटकता है, माया ;नागमतीद्ध बार–बार उसके मार्ग को रोकती है, लेकिन आत्मा–परमात्मा से मिलन के लिए व्याकुल है। सूपफी प्रेमाख्यानों में इसी प्रकार के ऐसे अनेक प्रसंग मिलते हैं जिनमें स्त्राी को महत्ता एवं उत्कृष्ट स्थान दिया गया है।

जायसी के 'पद्मावत' की कथा चाहे सिंहलद्वीप की हो या चित्तौड़गढ़ की या दिल्ली दरबार की, वह एक ओर मध्यकालीन भारत के सामंती समाज में स्त्री की पराधीन स्थिति, उसे भोग की वस्तु समझने की पुरूष मनोवृत्ति को प्रस्तुत करती है तो दूसरी ओर वह पुरूष की तुलना में स्त्री को नैतिक, आध्यात्मिक एवं बौद्धिक दृष्टि से श्रेष्ठ एवं उत्कृष्ठ दिखाती है। 'पद्मावत' के 'मानसरोदक खंड' में स्त्री की पराधीन स्थिति का मार्मिक चित्रण हुआ है। पद्मावती अपनी सखियों के साथ मानसरोवर में स्नान करने जाती है। वहाँ वह विवाहोपरांत जीवन की पराधीनता के बारे में सखियों से वार्त्तालाप करती है–

"ऐ रानी मन देखु विचारी। एह नैहर रहना दिन चारी।
जौ लहि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहि जौं खेलहु आजू।।
पुनि सासुर हम गौनब काली। कित हम, कित एह सरवर पाली।।
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलिकै खेलब एक साथा।
सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेही। दारून ससुर न आवे देहीं।।
पिउ पिआर सब ऊपर सो पुनि करै दहुं काह।
दहुँ सुख राखै की दुख दहुं कस जनम निबाह।"[6]

इसी प्रकार 'मधुमालती' में रूपमंजरी मधुमालती व प्रेमा को विदाई के समय उपदेश देती है–

"सासुही उतर न दीनी काऊ। सइं दुइ जूनि परवारनि पाउ।
हँसि के पेलबि सासु कै मार। पलटि उत्तर नहीं दीवी वारी।
सासु क बोहव परिधि सिर लीबी। ऊँच बोल नहीं उत्तर दीबी।"[7]

अर्थात् ससुराल में सास के किसी भी बात का प्रत्युत्तर नहीं देना। उनके बोल या वचन को हमेशा सुनना व मानना। ऊँचे आवाज में कभी किसी से नहीं बोलना। 'मृगावती' में रूपमति की माँ रूपमति को ससुराल जाते समय यही उपदेश देती है–

"सासु ननद कहुँ उतर न दीजै। जौ वै कहहिं सो सिर पर कीजै।।
बिनु पूछै बकत न मुंह खोली। मधुरे वचन परजन सैं बोली।।
पिउ चाहैं सहज इन चलिए। नित नौत नौत सेंउ रहिये।।"[8]

यह स्त्री पराधीनता का चित्रण तुलसी की अपेक्षा कम स्पष्ट नहीं है। सूफी काव्य में स्त्री की स्थिति के विषय में कहा गया है कि "स्त्री का सम्मान नहीं था, उसे सदैव अपना सीस चरणों पर झुकाए रहना पड़ता था। उसकी बुद्धि तुच्छ एवं हीन मानी जाती थी। स्त्री शिक्षा का अभाव था। कुमारी कन्याओं की स्थिति समाज में दयनीय थी। वे अपने विचार व्यक्त करना चाहती थीं किन्तु भय एवं लोकलज्जा उन्हें नहीं करने देती थी। विवाह के संबंध में नायिका अपनी स्वतंत्र सम्मति देना चाहती थी, किन्तु ऐसा देवी संयोग से ही संपन्न हो पाता है। माता–पिता स्त्री के स्वतंत्र चुनाव को कुल–कलंक समझते थे और उसके प्रेम की सूचना पाकर उसे महल में बंद कर देते थे। कन्या को केवल सुनने का अधिकार था अपना मत प्रकट करने का नहीं।"[9] इस प्रकार स्त्री की पराधीनता एवं विवशता को निःसंदेह व्याकुल बनाती है।

सूफी कवियों ने स्त्री को 'प्रेम–साधना' के साध्य के रूप में देखा। सभी सूफी कवियों ने स्त्री के सौन्दर्य का चित्रण किया है। "इस स्त्री–सौन्दर्य–चित्रण के दो पक्ष हैं – आध्यात्मिक एवं नख–शिख वर्णन। सूफियों का मानना है कि ईश्वर सौन्दर्य–रूप है। सृष्टि का समस्त सौन्दर्य ईश्वर का ही प्रतिरूप है। जागतिक सौन्दर्य की सृष्टि ईश्वर की ही इच्छा से हुई है। जहाँ सौन्दर्य है वहीं प्रेम है तथा सौन्दर्य और प्रेम मिलकर सुख की सृष्टि करते हैं।"[10] इस प्रकार, स्त्री सौन्दर्य–चित्रण में आध्यात्मिक पुट भी है। जायसी के 'पद्मावत' में अनेक ऐसे स्थल हैं जहाँ पद्मावती दिव्य सुंदर स्त्री है–

"प्रथम सो जोति गगन निरमई। पुनि सो माथे मनिभई।।
पुनि वह जोति मातुघट आई। तेहि आंदर आदर बहुपाई।।"[11]

सूफी कवियों का स्त्री सौन्दर्य चित्रण का आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दोनों पक्ष है। स्त्री के सौन्दर्य से जो प्रेम उत्पन्न होता है, वह आध्यात्मिक इश्क–हकीकी होता है और उस प्रेम को पुष्ट करने वाला विरह भी आध्यात्मिक ही है। अर्थात् परमात्मा के सौन्दर्य से साधक के मन में प्रेम उत्पन्न होता है। प्रेम की अनुभूति चार प्रकार की होती है – दाम्पत्य भाव से, परिग्रह भाव से ;अनेक पत्नी के प्रतिद्ध, प्रकृति के

उद्दीपन से ;प्रथम दृष्टि सेद्ध और पूर्वराग जनित प्रेम। प्रेममार्गी कवियों के प्रेमाख्यानों में चौथे प्रकार के प्रेम को प्रधनता दी गयी है। पूर्वराग की उत्पत्ति प्रिय के गुणों को सुनने से, चित्रा दर्शन से, स्वप्न दर्शन से अर्थात् साक्षात् दर्शन से होती है। 'पद्मावत', 'अनुराग बांसुरी' आदि में गुणों के सुनने से प्रेम की उत्पत्ति हुई है। 'चित्राावली' आदि में चित्रा दर्शन से, 'इंद्रावती', 'युसुपफ–जुलेखी' आदि में स्वप्न–दर्शन से और 'मधुमालती' आदि में साक्षात् दर्शन से पूर्वराग का उदय होता है।

इस प्रकार सूपफी काव्य में स्त्राी के प्रति सर्वोच्च आदर–भाव की व्यंजना हुई है। जहाँ वीरगाथाओं में स्त्राी को बलपूर्वक तलवार की नोंक पर वरण करने का उल्लेख मिलता है, विद्यापति के काव्य में स्त्राी को विलास के उपकरण के रूप में देखा गया, संतो के काव्य में स्त्राी को कामिनी, माया आदि के रूप में समझा गया, वहीं सूपफी काव्य में पुरूष प्रेम का याचक बना और स्त्राी प्रेम की स्वामिनी बनी। यहाँ स्त्राी शु(मानवी के रूप में समादृत हुई है। मध्यकालीन समाज के सूपफी काव्य में स्त्रिायों की स्थिति को भी विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। मध्यकालीन भारत के सामंती समाज में स्त्राी की पराधीन स्थिति एवं उसे भोग की वस्तु समझने की पुरूष मनोवृत्ति को भी सूपफी कवियों ने दर्शाया है। अतीत की सारी उपलब्धियों का वर्त्तमान के साथ संबंध को परिभाषित करने से ऐतिहासिक अनुशासन से परिभाषित बोध और अनुभूति का क्षेत्रा हमारे सामने खुलता है और तब अतीत के अनुभव के प्रति हम उत्साहित नहीं बल्कि जिज्ञासु हो जाते हैं। अनुभव के भीतर एक नई अंतर्वस्तु पैदा हो जाती है, जो निरंतर प्रश्नों और व्याकुलताओं का सामना करने में सार्थक बनाने वाली महत्त्वपूर्ण संकल्पना रही है। मनुष्य निरंतर प्रगति की ओर उन्मुख रहा है – यह प्रगति या विकास कैसे हुआ है ? क्या मनुष्य का विवेक और अविवेक समय के साथ बदलता है या मनुष्य के विवेक और अविवेक इतिहास के भीतर सामाजिक–आर्थिक शत्तिफयों के संघर्ष में प्रतिपफलित होते हैं जिनमें सनातन या तत्त्व बोधत्मकता के मुकाबले ऐतिहासिक अंतर्वस्तु होती है।

जायसी उन सूपफी कवियों में से हैं जिन्होंने सत्य की उपलब्धि कर ली थी कि लोक कथाएँ लोकरूचि को आकर्षित करने के साथ समाज के शिष्ट वर्ग को भी आकर्षित करती है। इसीलिए जायसी समेत सभी प्रमुख सूपफी कवियों ने एक ओर अपने धर्म को लोक बोध के रूप में उतारा और वहीं साहित्य द्वारा अपनी भावाभिव्यंजना को लोकोन्मुखी बनाया। लोक प्रचलित कथानक को सूपफी कवियों ने बड़ी कुशलता से काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया। सामाजिक, आर्थिक शत्तिफयों के संघर्ष बिन्दु पर ऐसे कथानक एक ओर रचना का सिपर्फ मनोवेगों की अभिव्यक्ति बनकर ही नहीं रहते हैं बल्कि साथ ही मनोवेगों को भावों में संघटित करने के उद्देश्य से किसी उपयुक्त प्रसंग के उद्भावना के काम आते हैं। इन कथानकों के बिना मानवी कल्पनाशीलता का वह प्रतिपफल प्रकट नहीं हो सकता जो व्यावहारिक यथार्थ में गूँथा हुआ है। जायसी कृत 'पद्मावत' के कथानक को इस दृष्टि से विश्लेषित करने पर एक साथ मध्ययुगीन समाज में पुरूष मानसिकता और स्त्राी की स्थिति सामने आ जाती है।

प्रेममार्गी कवियों का उद्देश्य सिपर्फ आख्यान कहना नहीं है। वे मध्ययुग में स्त्राी की स्थिति को व्याख्यायित करते हैं। स्त्राी आध्यात्म में भी सबसे बड़ी बाध है और काम के क्षेत्रा में वह केवल उपभोग की वस्तु है। ''उसकी अपनी कोई स्वतंत्रा सत्ता और अस्मिता नहीं है। कवि ने उस आध्यात्मिकता और कामुकता से भरे समाज में नागमती की 'प्लेसिंग' इस तरह से की है कि नारी की सामाजिक हैसियत अत्यंत त्राासद रूप में उभरती है।''[12] पति पुरूष है और उसे मध्ययुगीन समाज में अपरिचित अधिकार है। दूसरी ओर स्त्राी यदि वह रानी भी है, जिसे राज–काज में भी भाग लेने का भी प्रशासनिक अधिकार प्राप्त होता है, अपनी पटरानी होने की स्थिति के बावजूद सामाजिक तौर पर शून्य से अधिक कुछ भी नहीं है। एक तोता मारने पर उसे उसका पति मृत्युदंड सुना सकता है। ऐसे समाज में वह स्त्राी जिसको कोई प्रशासनिक अधिकार नहीं हो, उसकी स्थिति क्या होगी ? जायसी इसकी कल्पना पाठक के ऊपर छोड़ देते हैं। नागमती का राजमहिषी पद से स्खलन यही नहीं रूकता। रत्नसेन पद्मावती के रूप–सौन्दर्य का वर्णन सुनकर उसके प्रति आकर्षित हो जाता है और पद्मावती से मिलने के लिए वह राज–काज छोड़कर योगी वेश में निकल पड़ता है। नागमती प्रेमाकुल होकर पति से गृह–त्याग न करने का निवेदन करती है। 'हमहुँ साथ होइब जोगनी' का आग्रह करती है। 'जहवाँ राम तहवाँ सँग सीता' वाले आदर्श का अनुगमन करना चाहती है लेकिन सामंती मनोवृत्ति से ग्रसित उसका पति रत्नसेन उसकी बातों पर ध्यान नहीं देता और कहता है –

''तुम्ह तिरिआ मति हीन तुम्हारी। मरखा सों जो मतै घर नारी।'' अर्थात् स्त्राी होने के कारण वह अल्पबुर्(वाली है और घर में स्त्राी की बातों को मानने वाले मूर्ख होते हैं। ऐसी उक्ति एक राजा अपनी पटरानी के लिए कहता है। इससे स्पष्ट है कि स्त्राी–जाति के लिए पुरूष वर्ग की सोच क्या थी ? जो स्त्राी रानी है, उसे प्रशासनिक अध्किार प्राप्त है, पटरानी है, लेकिन उसकी सलाह का कोई महत्त्व नहीं है और यही स्त्राी के प्रति पुरूष मानसिकता है।

निष्कर्षतः संतों ने परमात्मा को पुरूष रूप में एवं आत्मा को स्त्राी–रूप में कल्पित किया है। परब्रह्म के प्रति वही प्रतीति है जो पति के प्रति पत्नी की होती है। वे दाम्पत्य जीवन के अंतरंग प्रसंगों की अनुभूतियों को प्रस्तुत करते हैं। उनकी रति–भावना का स्वरूप मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आत्मपीड़क माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि स्त्राी के आत्मसमर्पण स्वभाव होने के कारण संतों ने स्वयं को स्त्राी के रूप में कल्पित किया है। संतों ने स्त्राी के पतिव्रता, सती, कामिनी, माया आदि रूपों के अतिरिक्त उसको पत्नी, माता, दासी एवं गुरू के रूप को भी चित्रित किया है। संतों ने जहाँ स्त्राी के कामिनी एवं माया के रूप को निंदनीय माना वहीं उसके पतिव्रता, सती, माता एवं पत्नी के रूप को सराहा।

भक्तिकालीन कवियों में जायसी एकमात्रा ऐसे कवि हैं जो समाज में स्त्राी–जाति की दयनीय स्थिति को लेकर समग्र रूप से गंभीर हैं, इसलिए वे कहीं भी स्त्रियों के संबंध् में हल्के ढंग से कोई टिप्पणी नहीं करते। जहाँ भी मौका मिलता है, चाहे रत्नसेन का सिंहलद्वीप के लिए प्रस्थान करते समय उसकी माता का विलाप हो या पत्नी नागमती की करूणगाथा या रणभूमि में जाते समय बादल की माता की गाथा के प्रसंग हो, जायसी के स्त्राी की पुरुष निर्भरता को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। स्त्राी के ऊपर सदियों से स्थापित इस पुरूष प्रभुत्व को यथावत् दिखाने के बाद जायसी यहीं पर अपने कवि–कर्म की इतिश्री नहीं समझ लेते अपितु उसे वे चुनौती देते हैं।

संदर्भ–ग्रंथ सूची :–

1. गोरखबानी, गोरखनाथ, पृ॰–137
2. कबीर ग्रंथावली, डॉ॰ श्यामसुंदर दास, पृ॰–31
3. वही, पृ॰–40
4. कबीर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ॰–161
5. कबीर वाड्मय, डॉ॰ जयदेव सिंह एवं डॉ॰ वासुदेव सिंह, पृ॰–170
6. पदमावत् ;मानसरोवर खण्डद्ध, माताप्रसाद गुप्त, पृ॰–120
7. मध्ुमालती, मंझन, पद–501, पृ॰–449
8. मृगावती, कुतुबन, पद–13, पृ॰–406
9. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूपफी कवि और काव्य, डॉ॰ सरला शुक्ला, पृ॰–185
10. चित्राावली, उसमान, पृ॰–13
11. पदमावत्, माताप्रसाद गुप्त, पद–50, पृ॰–112
12. उपन्यास का समाजशास्त्रा, गरिमा श्रीवास्तव, पृ॰–303

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 16-21
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भोटिया जनजाति की अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के उन्नयन में भारतीय आधुनिक शिक्षा प्रणाली का योगदान

डा0 बी0पी0 देवली, असि0प्रोफेसर भूगोल
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गोपेश्वर (चमोली)

सारांश

''विश्व की सर्वोत्तम भौगोलिक संरचनायुक्त पर्वतमाला नगाधिराज हिमालय की अनेक श्रेणियों पर हजारों वर्षों से विभिन्न जनजातियां निवास कर रही हैं। इन्हीं में से एक जनजाति 'भोटिया' हिमालय की मुख–मुद्रा व गंभीरता के समान उत्तराखण्ड राज्य के सीमान्त जनपदों के महान व मध्य हिमालय की स्वेत धवलायुक्त उपत्यकाओं में निवास करती हैं। स्वतंत्रता के डेढ़ दशक तक इनके जीवन यापन का मुख्य आधार परम्परागत बकरी पालन के साथ ही तिब्बत से वस्तु विनिमय संबंधित व्यापार था। अपने वर्षों पुरानी परम्परागत व्यापारिक कला में निपुण भोटिया लोग प्रारम्भ में भारतीय आधुनिक शिक्षा को अपनी अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के उन्नयन का आधार नहीं बना पाये, क्योंकि तत्कालीन समय में बकरी पालन व तिब्बत के साथ वस्तु विनिमय व्यापार में भारतीय आधुनिक शिक्षा का अधिक महत्व नहीं था। व्यापार में बोल–चाल की भाषा या बोली परम्परागत थी। इसलिए शैक्षणिक वातावरण भी परम्परागत था। तिब्बत व्यापार के समय भोटिया वर्ग के अधिकांश लोग सरकारी सेवा दासता का प्रतीक मानते थे। अभिभावकगण अपने पाल्यों को सरकारी अथवा गैर सरकारी क्षेत्रों में सेवा करने के इच्छुक नहीं रहते थे। इस प्रकार की सेवाओं को बंधन के रूप में मानत थे, बल्कि तिब्बत व्यापार को स्वच्छन्द व अधिक रुचिकर मानते थे। कुछ ही जागरुक परिवार आधुनिक शिक्षा के महत्व को समझते हुए अपने पाल्यों को हिमालय की सुरम्य वादियों से दूर उच्च स्तर प्राप्त शिक्षण संस्थानों में अध्ययन हेतु भेजते थे। इससे स्पष्ट था कि भोटिया वर्ग में आधुनिक शिक्षा के प्रति वह लगाव नहीं था जैसा कि स्थानीय अन्य वर्गों में था। चीनी बदनीयत के चलते सन् 1962 में चीन द्वारा भारत की संप्रभुता पर प्रहार करने से भारत–तिब्बत व्यापार पूर्ण रूप से बन्द हो गया था। यह भोटियों के जन–जीवन व अर्थव्यवस्था पर एक गहरा प्रहार था, जिस कारण इनकी अर्थव्यवस्था बुरी तरह चरमरा गई थी। इस आघात के पश्चात् भोटिया लोगों के सामने जीवन यापन का यक्ष प्रश्न खड़ा हो गया था। इनके लम्बे संघर्ष के पश्चात् सन् 1967 में सरकार द्वारा इन्हें अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में आरक्षण प्राप्त हुआ। किसी भी प्रकार की सेवाओं में आरक्षण का लाभ शिक्षित होने पर ही प्राप्त हो सकता था। इसलिए भोटिया लोग आधुनिक शिक्षा की ओर तीव्र गति से अग्रसर होने लगे। परिणामस्वरूप अधिकांश शिक्षितों को अनेक प्रकार की सरकारी सेवाओं में अवसर प्राप्त होने लगा। शिक्षित समाज अपने अधिकारों के प्रति सजग होने के साथ–साथ कुटीर उद्योग को अपनी अर्थव्यवस्था का आधार बनाने लगा। सरकारी अनुदान/सहायता आदि प्राप्त होने लगी। इससे इनके सामाजार्थिक विकास के साथ–साथ अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के उन्नयन में अत्यधिक परिवर्तन देखने को मिलता है। अतः यह स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड राज्य के भोटिया जनजाति की अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के उन्नयन में भारतीय आधुनिक शिक्षा प्रणाली की बहुत बड़ी भूमिका रही है।''

प्रस्तावना :

मानव इतिहास में प्राचीनकाल से ही हिमालय क्षेत्र को मानव सभ्यता व प्रेरणा का आधार माना जाता रहा हे। अनेकों धार्मिक–साहित्यिक ग्रंथों में हिमालय क्षेत्र का वर्णन व उसके महत्व को दर्शाया गया है। विश्व की समस्त पर्वतमालाओं में से संभवतः हिमालय के अनुरूप अन्य किसी पर्वतमाला को अराध्य के रूप में पूजा

जाता हो अथवा मानव विकास में सहायक के रूप में जाना जाता हो। विश्व की सर्वाधिक मानव बसाव युक्त श्रृंखलाएं भी हिमालय में विराजमान हैं तथा अनेक विविधताओं युक्त मानव समुदाय भी इसी हिमालय क्षेत्र में अति मनभावन प्राकृतिक वातावरण के साथ जीवन व्यतीत कर रहे हैं। हिमालयी आदिवासी वर्गों के संरक्षण व जीवन यापन के लिए यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही अहम रहा है। यही आदिवासी वर्ग धीरे–धीरे जनजाति शब्द से पुकारे जाने लगे। किन्तु पश्चिम मध्य हिमालय क्षेत्र में निवास करने वाली भोटिया समुदाय को आदिवासी वर्गों के समान नहीं माना जा सकता है। अर्थव्यवस्थागत अवरुद्ध परिस्थितियों के कारण इन्हें बाध्य होकर अनुसूचित जनजाति वर्ग/श्रेणी को ग्रहण करना पड़ा। अन्यथा तत्कालीन समय में हिमालयी शीत जलवायु क्षेत्र के अन्तर्गत कठिन परिस्थितियों में स्वच्छन्द जीपन यापन करने वाला परिश्रमी भोटिया वर्ग के समान अन्य कोई वर्ग रहा हो। यह वर्ग प्राचीन सुसंस्कृति से परिपूर्ण, मैत्रीपूर्ण वातावरणयुक्त अटूट सामाजिक बंधनों में बंधा कठोर शरीर युक्त रहा है। प्रत्येक वर्ष सैकड़ों मील की व्यापारिक पैदल यात्रा तथा शीतकालीन व ग्रीष्मकालीन पड़ावों व अधिवासों तक जीवन यापन की दैनिक सामग्रियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक स्वयं व पशुओं की सहायता से पैदल ले जाना इनके अतीत में बीते कठोर जीवन को बंया करता है। आज भी इनके कुछ परिवारों में ऋतुविक स्थानान्तरण के समय उक्त दृश्य देखने को मिलता है।

सीमान्त क्षेत्र होने के कारण भारत सरकार द्वारा सन् 1962 में हुए युद्ध के पश्चात् इनके ग्रीष्मकालीन ग्रामीण क्षेत्रों में सुलभ यातायात हेतु मोटर मार्गों का निर्माण होने लगा। परिणामस्वरूप इनके ग्रीष्मकालीन अधिवास क्षेत्रों में अनेक प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते हैं। सुलभ यातायात का सबसे बड़ प्रभाव इनके ग्रामीण अवसंरचनागत बदले भूदृश्यों में स्पष्ट दिखाई देता है। यह परिवर्तन प्रमुख दो आधारों पर धीरे–धीरे हुए। प्रथम सरकार द्वारा इनके ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात मार्गों के विभाग सहित अनेक प्रकार की विकास योजनाओं को क्रियान्वित किया गया। दूसरा प्रत्येक गांव में प्राथमिक शिक्षण संस्थानों की स्थापना होने से आरक्षण प्रदत्त लाभ को मध्यनजर रखते हुए शत–प्रतिशत पाल्य आधुनिक शिक्षा की ओर उन्मुख होने लगे। शिक्षा का माध्यम आधुनिक व पूर्ण रूप से हिन्दी व अंग्रेजी भाषाओं पर आधारित था। इनके आधार पर शैक्षणिक प्रमाण–पत्र प्राप्त युवा सरकारी क्षेत्रों में आरक्षण आधारित रोजगार प्राप्त करने लगे। सरकारी अनुदान/सहायता से कुटीर उद्योग आधुनिक तकनीकियुक्त होने लगे। हिमालय क्षेत्र में अनेकों आयुर्वेदिक जड़ी–बुटियों की परम्परागत पहचान रखने वाले भोटिया लोग इन्हें अपनी अवरुद्ध अर्थव्यवस्था का आधार बनाने लगे। यह आधार इनके सामाजार्थिक परिवर्तन के प्रमुख रूप से रहे। लगभग पांच दशकों के पश्चात् आज भोटिया जनजाति की अवरुद्ध अर्थव्यवस्था में अत्यधिक सुधार दिखाई देता है, जिसमें प्राथमिक रूप से इनकी स्वयं की लगन व परिश्रम रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य :

प्राचीनकाल से कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में कृषि विहीन किन्तु परम्परागत वस्तु विनिमय पर जीवन यापन करने वाले समुदाय पर अचानक युद्ध की मार जब इनकी अर्थव्यवस्था को चकनाचूर कर दे तब परिश्रम व शिक्षा के स्तर से ही अर्थव्यवस्था में सुधार हो पाता है। भोटिया जनजाति की तत्कालीन अर्थव्यवस्था परम्परागत शिक्षा आधारित थी। आधुनिक शिक्षा का प्रभाव कम था। प्रभावित अर्थव्यवस्था से उबरने के लिए आधुनिक शिक्षा की सर्वाधिक आवश्यकता थी, जिसे प्राथमिक स्तर से व सार्वभोम रूप में ग्रहण करना आवश्यक था। आरक्षण का शत–प्रतिशत लाभ भी तभी प्राप्त हो पाता तब शैक्षणिक वातावरण अनुकूल होता। तत्कालीन परिस्थितियों में शैक्षणिक वातावरण अनुकूल न होने के कारण भोटिया समुदाय के लोग आरक्षण का उच्च स्तरीय लाभ प्राप्त नहीं कर पाये। आज आधुनिक शिक्षा की व्यापतता के पश्चात् ही आरक्षण से लाभान्वित होकर भोटिया जनजाति में आशातीत परिवर्तन देखा जा सकता है। अतः इस अध्ययन के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं–

1. भोटिया जनजाति की परम्परागत शिक्षा आधारित वस्तु विनिमय अर्थव्यवस्था का अध्ययन करना।
2. अवरुद्ध अर्थव्यवस्था के दुष्परिणामों को स्पष्ट करना।
3. अवरुद्ध अर्थव्यवस्था से उबरने में आधुनिक शिक्षा की भूमिका।

ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिवेश :

हिमालय क्षेत्र प्राचीनकाल से ही अनेक मानव वर्गों के विकास का क्षेत्र रहा है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष में आर्यों से भी पूर्व यक्ष, किन्नर, किरात, नाग, खस आदि इस क्षेत्र में निवास कर चुके हैं। हिमालय एक

वृहद–विस्तार युक्त क्षेत्र के साथ ही हिमालय से उद्‌गमित अनेक नदियों की घाटियों से अलग–अलग भागों में विभक्त है, जो मानव वर्गों को भी अनेक प्रकार से अलग–अलग वर्गों में उनकी पहचान कराता है। इसीलिए सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र में अनेकों आदिवासी समाज देखने को मिलते हैं, जिन्हें अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के नाम से जाना जाता है। उत्तराखण्ड राज्य का विस्तृत हिमालयी भू–भाग अनेक भौतिक विभागों में बंटा हुआ है। यहां निवास करने वाले मानव समुदायों अथवा प्रजातियों की उत्पत्ति के संदर्भ में मानवशास्त्री एकमत नहीं हैं मानव शास्त्रियों का मानना है कि इस क्षेत्र में मानव के शारीरिक स्वरूप/लक्षणों में अनेक भिन्नताएं विद्यमान अथवा प्रकट होने से राज्य के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में मंगोलियन मिश्रित प्रजाति, मध्यवर्ती व उच्च शिवालिक क्षेत्र में आर्यन प्रजाति तथा तराई–भाबर–मैदानी क्षेत्र में आर्यन व द्रविड़ियन सम्मिश्रित प्रजातियों के लोग बसे हैं। हिमालय के पश्चिमवर्ती मध्यभाग के उत्तरी क्षेत्र को अनेक विद्वानों द्वारा अपने अध्ययनों में भोट या भोटान्तिक शब्दों का प्रयोग किया गया। एस0एस0 पांगती ने अपनी पुस्तक ''भोटिया जनजाति'' में एटकिंशन को उद्धृत करते हुए स्पष्ट किया है कि उक्त क्षेत्र में स्थानीय लोगों से सामाजिक, शारीरिक, आर्थिक आदि से अन्तरयुक्त तिब्बत की भोट–सभ्यता के साथ सामंजस्य करके इन्हें भोटिया नाम दिया गया, जिसकी उत्पत्ति ग्यारहवीं शताब्दी के तातरी अभिलेखों में वर्णित है। उत्तराखण्ड राज्य के मुख्य रूप से उच्च हिमालयी क्षेत्र की सात घाटियों में निवास करने वाले भोटिया समुदाय के सात अलग–अलग वर्ग हैं, जिन्हें शोका, दारमी, चौंदासी, व्यांसी, तोलछा, मार्छा व जाड़ नामों से पुकारा जाता है।

भौगोलिक आधार पर उत्तराखण्ड राज्य में भोटिया जनजाति के सात वर्ग हिमालय की मनोहर वादियों में अति सुन्दर प्राकृतिक वातावरणयुक्त अलग–अलग नदी उपत्यकाओं में प्राचीनकाल से निवास कर रही हैं। हिमालय के हिमनदों से अनेक नदियों का उद्‌गम हुआ है, जो उच्च हिमालयी क्षेत्र के अन्तर्गत शीतकाल में बर्फ से आच्छादित रहती हैं और ग्रीष्मकाल में बहती रहती हैं। हिमालय की इन संकरी नदी–घाटियों के दोनों ओर तीव्र ढ़लानों तथा छोटी–छोटी नदी वेदिकाओं में भोटिया लोग अपने परम्परागत कुटीर उद्योग व पशुपालन के साथ निवास करते हैं। अनेकों धरातलीय विषमताओंयुक्त क्षेत्र में भौगोलिक कारकों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए इनकी अनेक पीढ़ियां बीत चुकी हैं। इनके निवास क्षेत्र को भोट प्रदेश अथवा भोटान्तिक क्षेत्र के नाम से जाना जाता रहा है। उत्तराखण्ड में इस क्षेत्र का विस्तार उच्च हिमालय के पूर्व में कुमाऊं क्षेत्र के अस्कोट से कपकोट तक काली गंगा, धौली गंगा, गोरी गंगा, पूर्वी राम गंगा तथा सरयू नदी का मल्ला दानपुर क्षेत्र, गढ़वाल के नीति (धौली गंगा घाटी), माणा (विष्णुगंगा घाटी), पश्चिम में जाड़ गंगा घाटी तक है। उत्तराखण्ड की इन अलग–अलग नदियों की घाटियों में भोटिया जनजाति के सातों वर्गो के लोग निवास करते हैं। भोटान्तिक क्षेत्र उच्च हिमालय के विषम धरातल में फैला हुआ है जहां शीत ऋतु में निवास करना अत्यधिक कठिन होता है। इसलिए भोटिया लोगों को अपने परम्परागत ग्रीष्मकालीन व शीतकालीन अधिवासों में ऋतुविक प्रवास करना पड़ता है। प्रवास की परम्परा प्राचीनकाल से चली आ रही है। इनके ग्रीष्मकालीन अधिवास उच्च हिमालय क्षेत्र के निश्चित स्थानों पर हैं, किन्तु शीतकालीन अधिवासों की सुनिश्चितता चीन युद्ध के पश्चात् बदलती रही तथा नगरीकरण व आधुनिकता के प्रभाव में आने से नगरीय क्षेत्रों में इनके अनेकों आवास देखने को मिलते हैं, जहां सामाजार्थिक रूप से इनमें अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता, परन्तु इनके कुछ वर्गों की बोलियां स्थानीय कुमाऊंनी व गढ़वाली बोलियों से भिन्न हैं, जिनमें तिब्बती भाषा के शब्दों का समावेश अधिक पाया जाता है। सांस्कृतिक आधार पर भी कुछ भोटिया वर्गों के सांस्कृतिक क्रियाकलाप स्थानीय सामान्य वर्गों से कुछ ही भिन्नता को दर्शाते हैं।

भोटिया जनजाति का संक्रमण काल से पूर्व सामाजार्थिक एवं शैक्षणिक परिवेश :

सामाजार्थिक परिवेश मानव जीवन यापन के आंकलन का आधार है। इसके द्वारा मानव वर्गों के पिछड़ेपन में सुधार लाया जा सकता है। अर्थात किसी भी समाज का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व आर्थिक चक्र सामाजिक परिवेश पर निर्भर करता है। मानव सभ्यता के इतिहास में मानव के विकास का प्रमुख आधार कृषि रहा है, किन्तु भौगोलिक व जलवायुगत विषमताओं के कारण अनेक क्षेत्रों में कृषि मानव अर्थव्यवस्था का आधार नहीं बन पाई। कालान्तर में उत्तराखण्ड राज्य का भोटान्तिक क्षेत्र भी भौगोलिक कारणों से बहुतायत कृषि उपजों के योग्य नहीं था। मात्र स्थानीय मौसमी निम्न उत्पादन युक्त अनाज फाफर, ऊवा आदि की खेती प्रचलन में रही। साथ ही पशुपालन के अन्तर्गत विशेषकर भेड़–बकरियां मांस उपयोग के लिए पाली जाने लगी, जो धीरे–धीरे भोटिया समुदायों की अर्थव्यवस्था का आधार बनती गयी। वाह्य जगत से दूर किन्तु

भेड़—बकरियों की बढ़ती संख्या के कारण भोटिया समुदाय के लोग पशु चारक के रूप में अपनी बकरियों को तिब्बत सीमा तक ले जाकर अर्द्ध यायावरी जीवन यापन करने लगे। तिब्बत वासियों से सम्पर्क होने पर मौसमी आवागमन में वृद्धि व भारवाहक भेड़—बकरियों के सहारे तिब्बत को अनाज व बदले में तिब्बत से नमक लाकर पर्वतीय ग्रामीण अंचलों में अनाज के बदले में वितरित करते थे। धीरे—धीरे भोटिया समुदायों का वस्तु विनिमय आधारित व्यापार वृहद स्तर प्राप्त करने लगा। पुरुष वर्ग व्यापार में संलिप्त होते रहे और महिलाएं गृह कार्यों के साथ ही परम्परागत ऊनी वस्त्रों की कताई—बुनाई में संलिप्त रहती थीं। इन कारणों से भोटिया समुदायों में आधुनिक शिक्षा के प्रति विशेष रुचि कम रहती थी।

शिक्षा किसी भी समाज का दर्पण व सामाजार्थिक विकास स्तर को पहचानने का मापक है तथा मानव जीवन में एक हथियार अथवा साधन के समान है, जो उसके मार्ग को सफल बनाता हे। विकासशील मानव अपने प्रारब्ध से ही अनेक कार्यो में संलिप्त होकर अपना पालन पोषण करता रहा। क्षेत्रीय प्राकृतिक व कृत्रिम पदार्थों की उपलब्धता तथा जलवायुगत विशेषताओं के आधार पर सामंजस्य स्थापित करता रहा। प्रारम्भ में स्थानीय बोलियां मानव समुदायों के आपसी आदान—प्रदान का आधार बनी रही। धीरे—धीरे वही बोलियां लिपियों में प्रचलन में आने लगी। भोटिया समुदायों के जीविकोपार्जन का आधार प्राचीनकाल में तिब्बत के साथ वस्तु विनिमय का रहा है। वस्तु विनिमय महान हिमालय की गहरी घाटियों को पारकर विकट परिस्थितियों के साथ ग्रीष्मकाल में ही होता था। महान हिमालय के इस ओर भारत भूमि में बोली जाने वाली स्थानीय पहाड़ी बोलियों के साथ—साथ हिन्दी—उर्दू सम्मिश्रित भाषाओं का प्रभाव तो महान हिमालय के उस पार हूणदेशी (तिब्बती) भाषा प्रचलन में थी। अनेकों सदियों तक वस्तु विनिमय का प्रचलन चलते रहने से व्यापारी वर्ग एक दूसरे की भाषा/बोलियों को परस्पर बोलने समझने लगे। इसलिए वस्तु विनिमय अथवा व्यापार का आधार परम्परागत भाषा अथवा स्थानीय बोलियां रही। प्राचीनकाल से दोनों ओर वस्तु विनिमय चलते रहने से भोटिया समुदाय के कुछ वर्ग खम्पा, मार्छा, जाड़ की बोलियां भोटिया समुदाय के अन्य वर्गों की स्थानीय बोलियों से भिन्न हैं परन्तु तिब्बती भाषा से मिलती जुलती हैं, जो आज भी उक्त वर्गों द्वारा आपस में बोली जाती हैं। वस्तु विनिमय के महत्व को समझते हुए भोटिया समुदाय के लोग तिब्बती भाषा को लिखना, पढ़ना, बोलने को अधिक महत्व देते रहे। इसीलिए अनेक भोटिया पुरुषों को भोट प्रदेश में तिब्बती भाषा में पढ़ाने हेतु शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया, क्योंकि कालान्तर में तिब्बती भाषा का ज्ञान इनके वस्तु विनिमय अथवा व्यापार के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण था।

संक्रमण काल का कारण एवं भोटिया जनजाति पर आधुनिक शिक्षा का प्रभाव :

भोटान्तिक क्षेत्र का इतिहास इस बात का गवाह है कि यहां के वासिन्दों ने भी मुगलों, चंदवंश, पंवार—परमार, गोरखों व अंग्रेजी हुकूमत की दासता सहीं थी। देश के स्वतंत्रता संग्राम में अनेक भोटियों की भूमिका इतिहास के पन्नों पर स्पष्ट दिखाई देती है। भोटिया समुदाय के लोग अपने परम्परागत व्यवसाय के साथ ही विदेशियों का विरोध करते रहे और देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ते रहे। देश की स्वतंत्रता के पश्चात् स्वाधीन भारत में लगभग डेढ़ दशक तक भोटिया समुदायों का परम्परागत तिब्बत व्यापार अगाध रूप से चलता रहा। यह किसी को भी मालमू न था कि भारत का पड़ोसी सामंतवादी राष्ट्र चीन की बदनियत भारत जैसे संप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र पर लगी है। चीन ने सन् 1962 में अचानक भारत की हिमालयी सीमा पर आक्रमण कर दिया था, जिसका भारतीय सेना ने डटकर मुकाबला किया। इसका अनेक सदियों से पश्चिमी तिब्बत के साथ व्यापार करने वाले सीमावर्ती भोटिया समुदायों को गहरा आघात लगा, क्योंकि युद्ध समाप्ति के साथ ही इनका परम्परागत व्यापार भी अनिश्चित काल के लिए पूर्ण रूप से अवरुद्ध हो गया था, जो भोटिया समुदायों के जीवन यापन अथवा अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार था। भोटिया समुदायों का सदियों पूर्व से चला आ रहा सामाजार्थिक चक्र मानो चकनाचूर हो गया। तत्कालीन समय में भोटिया समुदायों में आधुनिक शिक्षा का प्रभाव स्थानीय अन्य वर्गों की अपेक्षाकृत कम था, क्योंकि पारिवारिक सदस्य परम्परगत कार्यो में दक्ष होना चाहते थे जिसके लिए भारतीय आधुनिक शिक्षा अति आवश्यक नहीं थी। भोटिया समुदायों का सामाजार्थिक चक्र बुरी तरह प्रभावित होने के कारण इनके सामने प्रथम समस्या रोटी व रोजगार की थी। कृषि अभावग्रस्त क्षेत्र में रोटी प्राप्त करना कठिन विषय था। तत्काल स्थानीय रोजगार प्राप्त करना भी संभव नहीं था, क्योंकि पर्वतीय क्षेत्र पूर्ण रूप से उद्योग विहीन था। सरकारी क्षेत्र में भी तत्काल रोजगार प्राप्त करने की संभावनायें नगण्य थी।

भेड़ बकरियों द्वारा जो सामाग्री तिब्बत ले जाई जाती थी, उसका अब कोई महत्व नहीं रह गया था। अर्थात भार वाहक पशु आर्थिक सम्पन्न होते हुए भी अर्थविहीन होने लगे, क्योंकि तत्कालीन समय में बकरियों के मांस ही बिक्री आम प्रचलन में भी नहीं था तथा भेड़–बकरियों से प्राप्त होने वाले ऊन का भी अधिक आर्थिक लाभ नहीं था। तिब्बत से अनाज के बदले आयातित विशेष वस्तुएं जैसे पशमीना ऊन, चंवर पूंछ, नमक, सोहागा, भेड़ बकरियों व अच्छी नस्ल के घोड़ों का व्यापार जिनसे उच्च आर्थिक लाभ प्राप्त होता था, पूर्ण रूप से बन्द होने से भोटिया समुदायों के कुछ परिवारों को रोजी–रोटी की तलाश में दर–दर भटना पड़ा था तथा कुछ परिवारों को निर्वासित होना पड़ा था। अपने समुदायों की आर्थिक दुर्दशा को देखते हुए भोटिया समुदायों के सामाजिक चेतना जगाने वाले अनेक पहरियों ने राज्य व केन्द्र सरकार के सामने अपने समुदायों पर हुए चीनी प्रहार से चरमराई सामाजार्थिक व्यवस्था से अवगत कराया। इनके लम्बे संघर्ष (जो कि संक्रमण काल के रूप में व्याप्त था) के प्रतिफल पांच वर्षों के पश्चात् सन् 1967 में इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा प्राप्त हुआ। सरकारों द्वारा देय आरक्षण के अन्तर्गत इन्हें अनेक प्रकार के लाभ दिये गये। परन्तु आधुनिक शिक्षा के अभाव में भोटिया समुदायों का आम जनमानस सरकारी योजनाओं का तत्काल लाभ प्राप्त नहीं कर पाये, क्योंकि योजनाओं की जानकारी तथा उनको उपयोग में लाने के लिए आधुनिक शिक्षा प्रणाली के अनुरूप साक्षर/शिक्षित होना आवश्यक था। इसलिए भोटिया समुदायों को अपने सामाजार्थिक स्तर से उभरने में समय अधिक व्यतीत करना पड़ा।

7–आधुनिक शिक्षा की ओर बढ़ते कदम तथा उसका लाभ :

शिक्षा किसी भी समाज के विकास में बुनियाद के समान है। देश तथा राज्य में शिक्षा का स्तर उनमें निवास करने वाली जनसंख्या के सामाजिक स्तर को प्रकट करता हे। वैश्विक परिदृष्य के आधार पर समय के साथ–साथ शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिकता का परिवेश बढ़ता गया। विश्व को वेदिक ज्ञान देने वाले भारत को भी वैश्विक आधुनिक शिक्षा की ओर अग्रसर होना पड़ा। इसीलिए आज भारत के लोग विश्व के सभी क्षेत्रों में दिखाई देते हैं। भोटिया समुदायों के सामाजार्थिक चक्र पर जब चीनी आक्रमण का गहरा प्रभाव पड़ा तब इन्हें अपनी अर्थव्यवस्था की बुनियाद आधुनिक शिक्षा के साथ–साथ आगे बढ़ाने को विवश होना पड़ा, क्योंकि भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में धीरे–धीरे नयी शिक्षा प्रणालियों को अपनाया जा रहा था। चीनी आक्रमण के पश्चात् भोटिया समुदायों का तिब्बत से सामाजिक व व्यापारिक संबंध समाप्त हो गया था। इसलिए तिब्बती भाषा को पढ़ने लिखने का कोई औचित्य नहीं रह गया था। कृषि व उद्योग विहीन क्षेत्र के निवासियों को शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढना भी अति आवश्यक था। भोटिया समुदायों का जन–मानस यह भली–भांति समझ गया था कि बुरी तरह से प्रभावित अर्थव्यवस्था से उबरने का एक मात्र मार्ग आधुनिक शिक्षा को अपनाना होगा। तब इनके परिवारों ने अपने सभी पाल्यों को बिना भेद–भाव के पाठशालाओं में भेजना प्रारम्भ किया। आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों ने अपने–अपने पाल्यों को अध्ययन हेतु ग्रामीण वातावरण से दूर नगरीय सभ्यतायुक्त शिक्षण संस्थानों में प्रवेश हेतु भेजा। सामान्य आर्थिक स्थिति युक्त ग्रामीणों ने अपने पाल्यों को ग्रामीण क्षेत्रों के शिक्षण संस्थानों में अध्ययन हेतु प्रवेश दिलाना अति आवश्यक समझा। संक्रमण काल के समय इनके ग्रामीण क्षेत्रों में कठिन भौगोलिक विषमताओं के कारण पाल्यों को शिक्षण केन्द्रों तक पहुंचना अत्यधिक कष्ट प्रद ही नहीं बल्कि चुनौतीपूर्ण था। साथ ही प्राथमिक पाठशालायें कुछ ही बड़े गांवों में थीं। माध्यमिक शिक्षा के केन्द्र एक विकासखण्ड में एक या दो थे। उच्च शिक्षा के केन्द्र इनके निवास क्षेत्रों से सैकड़ों किलोमीटर दूर थे, जिनमें गिनती के धनाड्य परिवारों के बच्चे शिक्षा ग्रहण करते थे। तकनीकी गत शिक्षा केन्द्रों का पूर्ण अभाव था।

तत्कालीन उत्तर प्रदेश राज्य के सीमान्त क्षेत्र में सन् 1960 में पिथौरागढ़, चमोली व उत्तरकाशी का नये जनपदों के रूप में सृजन हुआ, जिनके सुदूरवर्ती विकासखण्डों धारचुला, मुनस्यारी, कपकोट, जोशीमठ, दशोली, भटवाड़ी एवं डुण्डा में भोटिया समुदायों के लोग अपने ग्रीष्मकालीन व शीतकालीन बस्तियों में प्राचीनकाल से निवास करते आये हैं। यह क्षेत्र विकास की दृष्टि से तभी आगे बढ़ पाया जब चीनी आक्रमण के पश्चात् इस सीमान्त क्षेत्र का सामरिक महत्व बढ़ गया एवं सन् 1967 में भोटिया समुदायों को अनुसूचित जनजाति घोषित किया गया। साथ ही सीमान्त क्षेत्रों में सैनिक छावनियां तथा अर्द्धसैनिक बलों को तैनात किया गया। भोटिया समुदायों के सामाजार्थिक विकास हेतु अनेक गांवों में प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना, माध्यमिक विद्यालयों का उच्चीकरण, चिकित्सा केन्द्रों की स्थापना, सरकारी गल्ले की दुकानें आदि सुविधाओं

के विस्तार से भोटिया समुदायों के लोगों में आधुनिक शिक्षा का प्रभाव होने लगा। प्रतिफल अनेक लोग सरकारी उपक्रमों का लाभ प्राप्त करके उन्नति के मार्ग पर चलने लगे। आज प्रतीत होता है कि भोटिया समुदायों के लोग अपने उस संक्रमणकाल से भलीभांति उबर चुके हैं, जो प्रथम दृष्ट्या इनके अपने कठिन परिश्रम का परिणाम है तथा सरकार द्वारा प्रदत्त आरक्षण के प्रतिफल राज्य तथा राष्ट्र के लगभग सभी क्षेत्रों में इनको स्थान प्राप्त हुआ है।

निष्कर्ष :

हिमालय क्षेत्र अनादिकाल से ही भारतीय जनमानस के संरक्षण एवं अनेक जनजातियों के सामाजार्थिक विकास का क्षेत्र रहा है। यों तो भारत के समस्त हिमालयी राज्यों में जनजातियां प्राचीन काल से निवास कर रही हैं, किन्तु हिमालय के पूर्वोत्तर राज्यों को भारतीय जनजातियों के गढ़ के रूप में जाना जाता है। मध्य हिमालय में उत्तराखण्ड राज्य के सीमान्त क्षेत्र में निवास करने वाले भोटिया समुदाय कर्मठ पशुचारक एवं परम्परागत वस्तु विनिमय/व्यापार करने वाला समुदाया था। सन् 1962 में चीन द्वारा भारत के सीमा क्षेत्र में आक्रमण करने से इनके सामाजार्थिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ने से भारत सरकार द्वारा इनको अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में रखा गया। हालांकि स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में आधुनिक शिक्षा प्रणाली का प्रचार–प्रसार तीव्र गति से हो रहा था। आरक्षित व पिछड़े वर्गों का आर्थिक स्तर कमजोर होने के कारण इनमें आधुनिक शिक्षा का प्रभाव न्यूनता को प्रकट करता था। भोटिया समूह के लोग अपने परम्परागत व्यवसाय में संलिप्त रहने के कारण आधुनिक शिक्षा की ओर अधिक अग्रसर नहीं हो पाये। चीनी आक्रमण के कारण जब इनकी अर्थव्यवस्था बुरी तरह प्रभावित हुई तत्पश्चात् इन्हें आरक्षण का लाभ दिया गया। शिक्षा ही एक प्रमुख माध्यम था जिससे आरक्षण का सम्पूर्ण लाभ प्राप्त किया जा सकता था। इसलिए भोटिया समूहों को आधुनिक शिक्षा की ओर अग्रसर होना आवश्यक था और भोटिया समूहों के लोग तीव्र गति से अग्रसर भी हुए। भोटिया लोग अपने अथक परिश्रम गहरी लगन तथा भारत तथा राज्य सरकारों द्वारा प्रदत्त आरक्षण के परिणामस्वरूप आधुनिक शिक्षा के सहारे अपने मुकाम तक पहुंच चुके हैं, आज इनका सामाजार्थिक स्तर अन्य जनजातियों के लिए प्रेरणास्रोत बन चुका है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डबराल, एस0पी0 (1962), उत्तराखण्ड के भोटान्तिक, वीरगाथा प्रकाशन, दुगड्डा गढ़वाल।
2. जोशी, ए0के0, (1963), भोटान्तिक जनजाति–ऐतिहासिक सांस्कृतिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययन, प्रकाश बुक डिपो, बरेली।
3. शर्मा, बी0आर0 (1985), हिमालय की पौराणिक जनजातियां, आर्य प्रकाशन मण्डल दिल्ली।
4. लाल, जी0एस0 (1986), भोटिया जनजाति के धर्म एवं रीति–रिवाज, हिमालयन निवासी और निसर्ग शोध पत्रिका सं0 4, हिमालय सेवा संघ, नई दिल्ली।
5. नौटियाल, शिवानन्द (1990), उत्तराखण्ड की जनजातियां, सुलभ प्रकाशन लखनऊ।
6. देवली, बी0पी0 (1991), हैबिटेट इकानोमी एण्ड कल्चर ऑफ ट्राइबल पीपुल इन चमोली डिस्ट्रिक्ट, ए ज्योग्राफिकल स्टडी, अप्रकाशित पीएच0डी0 शोध प्रबंध, बी0एच0यू0 वाराणसी।
7. बिष्ट, बी0एस0 (1992), भोटिया जनजाति, विवेक प्रकाशन दिल्ली।
8. पांगती, एस0एस0 (1992), मध्य हिमालय की भोटिया जनजाति, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. घोष, ए0 (2007), द भोटियाज इन इंडियन हिमालयाज, बी0आर0 पब्लिशिंग कारपोरेशन दिल्ली।

ईमेल–bpdevali@gmail.com, मो0 9411181511

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 22-26
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

दबी हुई जिंदगियां: 'सूर्याने अनिन्जा ओरु स्त्री' उपन्यास में समलैंगिकता और नारी संघर्ष का टकराव

श्रीवर्षा मोहन,शोधार्थी,
हिंदी विभाग, केरल विश्वविद्यालय

शोध सार : समाज के अनुसार, सेक्स का उद्देश्य केवल बच्चा पैदा करना है। वह तभी संभव है जब मर्द और औरत के बीच रिश्ता होता है न कि समलैंगिकों के बीच।शायद इसीलिए ही लोग आज भी यह गलत धारणा को लेकर बैठी हुई है कि समलैंगिकता एक विकल्प है।लेकिन आधुनिक विज्ञान ने इस धारणा को तोड़ दिया है। टेस्ट ट्यूब बेबी जैसी तकनीकों के साथ, बच्चे बिना सेक्स के भी पैदा किए जा सकते हैं। तो फिर सेक्स की वास्तविक ज़रूरत क्या है? क्या यह केवल जिस्मानी ज़रूरतों को पूरा करने और रिश्तों को मज़बूत करने के लिए है, या इसमें कुछ और भी है जो हमें समझने की ज़रूरत है? इस प्रश्न के पीछे एक और महत्वपूर्ण सवाल है क्या हम समलैंगिकता को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं? क्या हम समझते हैं कि समलैंगिकता एक प्राकृतिक और वैध विकल्प है, या हम इसे अभी भी एक पाप या अनैतिक मानते हैं? यह समय ै कि हम अपने दृष्टिकोण को बदलें और समलैंगिकता को एक नए दृष्टिकोण से देखें।

बीज शब्द : समलैंगिकता,सामाजिक दबाव,अस्तित्व और पहचान की लड़ाई,नारी विद्रोह,प्रतिरोध

शोध आलेख : के.आर मीरा द्वारा रचित "सूर्यने अनिंजा स्त्री" बाइबिल की जेसबेल रानी की कहानी से प्रेरित एक नॉवेल है। बाइबिल की जेसबेल एक शक्तिशाली और प्रभावशाली महिला थी, लेकिन उन्हें अपने पति और भगवान के खिलाफ विद्रोह के लिए जाना जाता है।इस नॉवेल में, डॉ. जेसेबल की कहानी को एक आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। प्रसिद्ध मलयालम लेखिका के. आर मीरा यह सवाल उठाती हैं कि क्या कोई महिला मानव इतिहास की मूल बुनियादों को हिला सकती है, जो पुरुष प्रभुत्व और पितृसत्ता द्वारा बनाई और स्थापित हैं? बाइबिल में जेसबेल ने ऐसा करने का प्रयास किया, उसके बाद कौन? लेखिका की इस सवाल का जवाब है "सूर्यने अनिंजा स्त्री"। यह उपन्यास पुरुष जगत के नियमों और विचारों पर सवाल उठाता है और अपने अस्तित्व को उनके सामने फेंक देता है।

यह उपन्यास उन मुश्किल परिस्थितियों के विरुद्ध एक स्त्री का सशक्त प्रतिरोध है जिसने उसके जीवन को नष्ट कर दिया।इस नॉवेल में एक विशिष्ट कथा चाप या विषय को पहचानना मुश्किल है, क्योंकि यह विविध विषयों और पात्रों को शामिल करती है। जेसवेल, एक डॉक्टर, घरवालों के तनाव और विमर्श के कारण जेरोम जार्ज नामक एक डॉक्टर के साथ विवाह करने को मजबूर होती है। वह फिर दो साल से अधिक समय तक एक दुखद विवाह में फंस जाती है।तलाक के लिए आवेदन करने को मजबूर करने वाली घटनाएं और उसके आसपास के लोगों की प्रतिक्रिया इस कहानी का केंद्र है। यह कोई ऐसी कहानी नहीं है जिसे आसानी से पढ़ा जा सके। एक नैतिक रूप से कठोर समाज द्वारा तिरस्कृत महिला की होने की डर में भावनाओं और जीने वाले दो समाज द्वारा विरस्कृत समलैंगिकों की भावनाओं को महसूस कराने के लिए डिज़ाइन किया गया है यह कहानी।

उसे आजादी प्राप्त करने के लिए जिन बंधनों से गुजरना पड़ता है, वे कथा के नाम में ही स्पष्ट हैं। समकालीन केरल में शक्ति और वासना के सूक्ष्म राजनीतिक खेल के माध्यम से, पुरुषों और महिलाओं की विकृत मानसिकता, उनकी गहराई से जड़ी यौन दोहरापन और महिलाओं के निजी और संवेदनशील जीवन क्षेत्रों पर पूर्ण नियंत्रण की प्रक्रिया महिलाओं के जीवन पर इन पन्नों में उजागर होती है, जो थोपे गए दमन की परतें दर्शाती हैं।

यह उपन्यास भारत में यौनिकता और यौन विषय के इर्द-गिर्द की पाबंदियों पर केंद्रित है। महिला की पीड़ा का वर्णन करते हुए, के. आर मीरा यह दर्शाती हैं कि शरीर एक क्रूस बन जाता है जिस पर हर मानव को सूली पर चढ़ाया जाता है।एक पुरुष से उम्मीद की जाती है कि वह 'मर्दाना की अपेक्षा के अनुसार व्यवहार करे। एक महिला से यह उम्मीद की जाती है कि वह 'स्त्रीत्व की अपेक्षा के अनुसार व्यवहार करे। एक ट्रांस व्यक्ति से यह उम्मीद रखी जाती है कि वह इस सामूहिक दायरे के बाहर रहे। एक समलैंगिक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह वास्तविक दुनिया से परे रहकर खुद की दुनिया बसाए।समाज इन सभी 'असामान्यताओं' के लिए विवाह को 'उपचार' के रूप में प्रस्तुत करता है। लेखक पाठक को उन सभी चोटों और जख्मों का अनुभव कराता है जो समाज उन पर लगाता है, जो उसकी निर्धारित राह से भटकने की हिम्मत करते हैं।समाज द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार चलना है, नहीं तो समाज से तिरस्कृत किया जाएगा, इसी डर के कारण आजकल लोग अपनी वास्तविक पहचान और चौन अभिव्यक्ति को छुपाने के लिए मजबूर हैं। यह डर और दबाव लोगों को अपनी असली स्वरूप में जीने से रोकता है।

के. आर मीरा का यह उपन्यास हमें एक ऐसी अवस्था में ले जाता है जहां समाज के दबाव और दवाव के कारण एक समलैंगिक व्यक्ति को अपनी यौन पहचान को छिपाकर एक महिला से शादी करनी पड़ती है। जेसेवल की शादी एक युवा डॉक्टर जेरोम जॉर्ज मरक्कार के साथ होती है, जो एक समलैंगिक है।यहाँ सवाल यह है कि उसने अपनी यौन अस्तित्व को क्यों छुपाया और एक

औरत से शादी करके उसे अपनी सच्चाई से क्यों दूर रखा? क्या यह समाज के दबाव और अपेक्षाओं के कारण था, या फिर कुछ और?

जेरोम की माँ के अनुसार, [1]"उसने दुनिया को दिखाने के लिए शादी की, समाज के सामने यही मेरी पत्नी है यह दिखावा करने के लिए। रसोई में काम करने के लिए, कपड़े धोने के लिए, घर संभालने के लिए उसे एक औरत चाहिए थी। उसने शादी सिर्फ इसलिए की है कि समाज की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए उसे एक औरत की आवश्यकता थी।[1]" यहाँ जेरोम की माँ के शब्दों से यह स्पष्ट होता है कि शादी केवल एक दिखावा था, जिसका उद्देश्य समाज को खुश करना था, न कि जेरोम की स्वनिधन श्वशी या संतुष्ठी। उसने उस औरत को जिसे उसने शादी के बंधन में बांध दिया, लेकिन कभी नहीं सोचा कि उसकी खुशी और स्वतंत्रता की क्या कीमत होगी।यहाँ गलती किसकी है? समाज की, जिसने अनुचित नियमों और अपेक्षाओं के साथ लोगों को मजबूर किया कि वे उसके अनुसार जिएं? या फिर जेरोम की, जिसने अपनी सच्ची पहचान छिपाकर शादी की और एक औरत की जिंदगी बर्बाद कर दी?क्या हम समाज की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए अपनी व्यक्तिगत खुशी और स्वतंत्रता की बलि देनी चाहिए? या क्या हमें अपनी सच्चाई को स्वीकार करने और समाज में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है जो हमें अपने जीवन और समाज के बारे में सोचने पर मजबूर करता है।

इस संदर्भ में, जेसेबल द्वारा अविनाश गुप्ता, जो उनके पति जॉर्ज मरक्कार के गे पार्टनर हैं, से कहा गया यह वाक्य एक गहरी सच्चाई को उजागर करता है: [2]"जब कोई व्यक्ति यह स्वीकार करता है कि वह जो है, वही है, तभी उसमें आत्मविश्वास पैदा होता है। क्या आपको दूसरे के रूप में जीने और दूसरे की तरह व्यवहार करने में शर्म नहीं आती?"[2] यह वाक्य हमें आत्म-स्वीकृति और आत्मविश्वास के महत्व की याद दिलाता है, और हमें यह पूछने के लिए प्रेरित करता है कि क्या हम वास्तव में अपने आप को स्वीकार कर रहे हैं या हम दूसरों की अपेक्षाओं के अनुसार जी रहे हैं।

जेसेबल की कहानी में एक महत्वपूर्ण संदेश है, जो समाज की संकीर्ण सोच और समलैंगिकता के प्रति गलत धारणाओं को उजागर करता है। जेसेबल समलैंगिकता के खिलाफ नहीं है, लेकिन वह समाज की उन मानसिकताओं का विरोध करती है जो समलैंगिकता को गलत समझती हैं और मानती हैं कि शादी कर लेने से सब कुछ ठीक हो जाएगा।यह विचारधारा ही थी जिसे उसने खारिज किया। अविनाश गुप्ता के साथ जेसेबल की बातचीत से यह साफ जाहिर होता है। वह कहती हैं, [3]"अविनाश, मेरी शिकायत तुम्हारी समलैंगिकता से नहीं है, क्योंकि मैं इसे किसी अपराध या कमी के रूप में नहीं देखती। मेरा विरोध तुम्हारे डरपोक रवैये से है, जो दूसरों के जीवन को बर्बाद करने तक चला गया। और इस पर तुम्हें कोई अपराधबोध नहीं है। मैंने तुम्हारे साथ क्या गलत किया? मैंने जेरोम के साथ क्या गलत किया?"[3]

जेसेबल का आक्रोश एक स्त्री की जिंदगी बर्बाद कर रखने पर व्यक्त किया जा रहा है, और यह सवाल उठाया जा रहा है कि [4]"क्या समाज की अनुमति न देने का समाधान यह है कि मुझे मेरा चाहा हुआ जीवन न दिया जाए?"[4] यह कहानी उन सभी व्यक्तियों पर सवाल उठाती है जो आज भी समाज के डर से अपने पहचान को छुपाते हैं, और यह पूछती है कि क्या यह सही है कि हम अपने सपनों और आकांक्षाओं को समाज की राय के सामने बलिदान कर दें?

[5]"कैसे कहें? अगर कह दिया तो आपका प्रतिक्रिया क्या होगी? क्या आप हमें स्वीकार करेंगे? आशीर्वाद देंगे? या फिर पत्थर फेंकेंगे, मारेंगे! दो डॉक्टरों के रूप में जो इज्जत, सम्मान और प्यार हमें मिला था, वह सब खत्म हो जाएगा। यह जानते हुए हम कैसे जोखिम उठा सकते हैं?हमारे सामने बस एक ही विकल्प बचा था अभिनय करना और आगे भी हम अभिनय करेंगे । लेकिन मैं ऐसा नहीं करना चाहता, यह दुनिया ऐसी है कि मुझे ऐसा करना पड़ रहा है। मैंने यह फैसला अपनी मर्जी से नहीं किया है, बल्कि यह दुनिया की स्थिति के कारण है कि मुझे ऐसा करना पड़ रहा है।"[5]

अविनाश गुप्ता द्वारा कहा गया यह वाक्य एक गहरी मानसिक स्थिति और समाज के दबाव को दर्शाता है। उनका यह बयान यह सवाल उठाता है कि समाज की संकीर्ण सोच और असहिष्णुता के कारण उन्हें अपना असली रूप छिपाकर अभिनय करना पड़ता है। वह समाज के डर से जीने के बजाय, खुद को छुपाने और झूठी पहचान बनाने के लिए मजबूर होते हैं। उनका यह कहना कि उन्होंने यह निर्णय अपनी मर्जी से नहीं, बल्कि समाज की स्थिति के कारण लिया, यह दर्शाता है कि वह व्यक्तिगत स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होना चाहते हैं, लेकिन समाज के डर और भेदभाव की वजह से ऐसा नहीं कर पा रहे हैं।यह सवाल कि "क्या हम उन्हें दोषी मान सकते हैं या उस समाज को?" गंभीर विचार का विषय है। अविनाश गुप्ता और उनकी जैसी स्थितियों में फंसे लोग किसी हद तक दोषी नहीं हैं, क्योंकि वे समाज के उन मूल्य और दबावों के शिकार हैं, जो उन्हें स्वीकृति और सम्मान नहीं देते। उनकी मानसिकता और संघर्ष समाज के असहिष्णु रवैये के खिलाफ खड़े होते हैं, जो उन जैसे लोगों को खुद को व्यक्त करने की स्वतंत्रता नहीं देते। इसलिए, दोष समाज पर ही डाला जा सकता है, जो अपने संकुचित विचारों से दूसरों को दबाता है और उन पर अपनी मानसिकता थोपता है।

जब एक व्यक्ति समाज द्वारा निर्धारित सामाजिक स्थिति से बाहर निकलकर अपने जीवन को जीने का प्रयास करता है, तो समस्याएं उत्पन्न होती हैं। समाज द्वारा बनाए गए इन सामाजिक स्थितियों से बाहर निकलकर जीना आज के समय में आवश्यक हो गया है।यह एक दुर्भाग्यपूर्ण वास्तविकता है कि हमारा समाज अभी भी विभिन्न आधारों पर लोगों को अलग-अलग देखता है, भले ही हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धांत अपनाते हैं और विविधता में एकता का आशय को उजागर करते हैं। यह एक चुनौती है जिसे हमें स्वीकार करना चाहिए और इसके खिलाफ लड़ना चाहिए। हमें अपने समाज को एक ऐसा स्थान बनाना चाहिए जहां सभी लोग समान रूप से

सम्मानित और स्वीकार किए जाते हैं, चाहे उनका यौन अभिविन्यास, जाति, धर्म, या अन्य आधार कुछ भी हो।

संदर्भ ग्रंथसूची

1 .सूर्याने अनिंजा ओरु स्त्री, के. आर. मीरा, डी सी बुक्स, कोट्टयम,2018, पृष्ठ: 239
2 . सूर्याने अनिंजा ओरु स्त्री, के. आर. मीरा, डी सी बुक्स, कोट्टयम,2018, पृष्ठ: 307
3. सूर्याने अनिंजा ओरु स्त्री, के. आर. मीरा, डी सी बुक्स, कोट्टयम,2018, पृष्ठ: 306
4. सूर्याने अनिंजा ओरु स्त्री, के. आर. मीरा, डी सी बुक्स, कोट्टयम,2018, पृष्ठ: 306
5 . सूर्याने अनिंजा ओरु स्त्री, के. आर. मीरा, डी सी बुक्स, कोट्टयम,2018, पृष्ठ: 309

Ph : 8138882199, mail id : sreevarshaayilyam@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 27-30
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

SEASONAL PATTERN OF BIRD DISTRIBUTION ON MOUNTAIN AND HUMAN INFLUENCE

Abhishek Rollan, Research Scholar, Department of zoology,
S.P.C. Govt. College, Ajmer (Rajasthan),
Affiliated with- M.D.S. University Ajmer (Rajasthan)

Abstract

The seasonal distribution patterns of birds on mountain habitats are investigated in this study, along with the effects of human activity on these patterns. We determine how seasonal change affects bird presence, breeding, and feeding behaviours in these distinct ecosystems by examining data from many areas. Birds' seasonal distribution is a crucial measure of the health of an ecosystem since they are extremely sensitive to changes in their surroundings. The results show a strong relationship between changes in bird distribution and human activities including resource exploitation, urbanization, and tourism. In regions where human influence is strong, seasonal rhythms are frequently disturbed, which may have ecological impacts. Developing successful conservation plans to save bird populations and their habitats requires knowledge of these processes.

Key Words: Seasonal patterns, human influence, conservation, urbanization.

Introduction:

Bird species that rely on seasonal variation for migration, nesting, and feeding find essential habitat in mountains, which are hotspots for biodiversity. Birds frequently migrate attitudinally, moving between altitudes to maximize resource use and adjust to change weather patterns (Martin et al., 2021). Global warming, habitat degradation, and other human-caused changes, however, severely threaten these cycles of nature. Given their great degree of mobility, birds are especially well-suited to these circumstances and frequently exhibit complex seasonal distribution patterns. Temperature, precipitation, food availability, and habitat structure are some of the biotic and abiotic variables that affect these patterns.

Different habitats are produced by the intricate interactions of plant types, temperature gradients, and altitude, which sustain both resident and migratory bird populations. Seasonal variations have a significant impact on bird behaviour and distribution; many species migrate latitudinally or altitudinally in order to maximize resource use.(Newton & Brockie, 2008).
The problems that highland birds encounter have taken on new dimensions as a result of the combined effects of climate change and human activity. Temperature ranges have changed as a result of climate change, affecting food availability and phenological cycles
(Chen et al., 2011).

Bird numbers are under additional stress due to loss of habitat and division brought on by human-induced changes including the process of urbanization growth in agriculture, and deforestation(Buckley, 2011).

Additionally, the increase of farming in lower elevation areas near mountains has produced ecological traps, where birds are drawn to habitats that appear attractive but are ultimately unsuited for life.(Hale & Swearer, 2016).

Mountain bird groups are also seriously threatened by the introduction of exotic species, which is made possible by human activity. It has been shown that native populations of birds are displaced by non-native predators and rivals, which lowers biodiversity and changes the dynamics(Simberloff et al., 2013).

Avian health and reproduction have also been negatively impacted by pollution from pesticides and other chemicals, which frequently come from agricultural waste water (Mineau & Palmer, 2013).

Objectives:

The purpose of this research is to investigate how human activity and seasonal environmental changes influence bird dispersion in Aravalli mountainous areas.

It aims to provide light on the ecological dynamics of mountain bird species and suggest conservation tactics by combining the most recent studies.

Literature Review:

1. **Seasonal Migration patterns** many bird species use seasonal migration as a vital survival tactic in response to shifting environmental circumstances. A survey of India's migrating bird species is given in this extensive book, which highlights the importance of semi-arid region like Rajasthan as migratory stopovers. (Grimmett et al., 2011).

   Importance of Urban Biodiversity: A Case Study of Udaipur Research The main objective of this project is to address the need for integrative research by examining the relationships between urban biodiversity and human activities in cities in the southern region of Rajasthan, India. We discovered that the local population benefited from biodiversity by learning about seasonal changes and enjoying aesthetics, and they were especially curious about phenological phenomena. Many animal groups, especially birds, and vascular plant species, in particular, are often abundant in urban areas.(Mehra et al., 2014).
2. **Importance of Mountainous Ecosystems** Planning a Wildlife Protected Area Network in India. Wild Institute of India. the Aravalli range's biological importance as a migratory corridor, emphasizing the vital habitats it offers to both local and migratory bird species (Rodgers, W.A Hemendra S, 1988).

   Effects of Global Climate Change on Birds Migration This study examine the effects of climate change on bird species' survival, habitats, and migration patterns worldwide (Arya & Mishra, 2015).
3. **Anthropogenic influences,** the research emphasize how bird populations in urban environments are impacted by structure, connectivity, and management. It emphasizes how size, disturbance, and vegetation structure affect Jhalawar's bird species. The results might have an effect on bird conservation and recommend including bird monitoring into planning and urban management.(Meena & Sultana, 2024)
4. **Conservation Efforts and Challenges**

   Role of community participation in biodiversity conservation in Indian arid zone. Journal of Arid environments(Varun & Dutta, 2020).

   The study emphasizes the importance of conserving tree species and protecting low and high-elevation areas in the Western Ghats by examining bird community structures over an elevation gradient (Raman et al., 2005).

   The study examines how urbanization affects bird niches, emphasizing the role of trees and other natural habitats such as wetlands and open places (Mehta et al., 2024).

   A brief overview of India's bird diversity is given in this chapter, along with a discussion of the species' present conservation issues and possible defence tactics (Rahmani, 2022).

The study reveals that climate change is affecting the distribution of bird species in India, with many predicted to lose their habitats within the next fifty years.

(Deomurari et al., 2023).

Methodology:

Study Area: The Aravalli range sikar was the site of the study, which included important sites including rugged and jeen mountain regions.

Geospatial Analysis: Satellite imagery and GIS tools were used to map habitat changes and correlate them with bird distribution.

Data collection: three seasons (winter, summer, and monsoon) have covered by field surveys. Birds species have recorded using line transects and point count techniques.

Community Involvement: Local communities have interviewed to get knowledge about traditional conservation methods and human pressures.

Data Analysis: Patterns and correlation have examined using statistical models, such as species distribution modelling.

Result:

Seasonal Distribution: Because of migratory inflows, species richness maximized in the winter. In reaction to climate, residents displayed altitudinal shifts.

Preferences for habitat: whereas degraded soils supported fewer species, forest regions and water bodies were essential for biodiversity.

Human Influence: The availability of bird habitat has been reduced by deforestation, and migratory routes have been impacted by development. Preserved groves under community management have among the positive benefits.

Discussion:

The results demonstrate the importance of the importance of Aravalli as a migratory corridor and are consistent with worldwide patterns of seasonal bird's dynamics. The necessity of participatory management techniques have emphasized by the identification of human activities as both risks and possibilities for conservation.

Conclusion:

The significance of protecting Rajasthan's highland environments for bird biodiversity is shown by this study. To lessen the effects of humans, conservation initiatives should prioritize community involvement, sustainable land use, and habitat restoration.

References:

1. Arya, R., & Mishra, A. (2015). *Impact of Global Climate Change on Migration of Birds*.
2. Buckley, R. (2011). Tourism and Environment. *Annual Review of Environment and Resources*, *36*(1), 397–416. https://doi.org/10.1146/annurev-environ-041210-132637
3. Chen, I.-C., Hill, J. K., Ohlemüller, R., Roy, D. B., & Thomas, C. D. (2011). Rapid Range Shifts of Species Associated with High Levels of Climate Warming. *Science*, *333*(6045), 1024–1026. https://doi.org/10.1126/science.1206432
4. Deomurari, A., Sharma, A., Ghose, D., & Singh, R. (2023). Projected Shifts in Bird Distribution in India under Climate Change. *Diversity*, *15*(3), 404. https://doi.org/10.3390/d15030404
5. Grimmett, R., Inskipp, C., Inskipp, T., Allen, R., Bowley, A., Byers, C., Cole, D., Cox, J., & Driessens, G. (2011). *Birds of the Indian Subcontinent* (Second edition). Christopher Helm.
6. Hale, R., & Swearer, S. E. (2016). Ecological traps: Current evidence and future directions. *Proceedings. Biological Sciences*, *283*(1824), 20152647. https://doi.org/10.1098/rspb.2015.2647
7. Martin, K., Altamirano, T. A., Zwaan, D. R. de, Hick, K. G., Vanderpas, A., & Wilson, S. (2021). Avian ecology and community structure across elevation gradients:

The importance of high latitude temperate mountain habitats for conserving biodiversity in the Americas. *Global Ecology and Conservation*, *30*, e01799. https://doi.org/10.1016/j.gecco.2021.e01799

8. Meena, R., & Sultana, F. (2024). A case study of bird biodiversity from a few urban green spaces in Jhalawar district, Rajasthan. *Journal of Entomology and Zoology Studies*, *12*(4), 187–192. https://doi.org/10.22271/j.ento.2024.v12.i4c.9363
9. Mehra, S. P., Mehra, S., & Sharma, K. K. (2014). Importance of Urban Biodiversity: A Case Study of Udaipur, India. In B. Maheshwari, R. Purohit, H. Malano, V. P. Singh, & P. Amerasinghe (Eds.), *The Security of Water, Food, Energy and Liveability of Cities: Challenges and Opportunities for Peri-Urban Futures* (pp. 403–418). Springer Netherlands. https://doi.org/10.1007/978-94-017-8878-6_31
10. Mehta, K., Koli, V. K., Kittur, S., & Sundar, K. S. G. (2024). Characteristics of bird niches in a small Indian city: Effect of migratory status, season, and environment variables. *Journal of Urban Ecology*, *10*(1), juae018. https://doi.org/10.1093/jue/juae018
11. Mineau, P., & Palmer, C. (2013). The impact of the nation's most widely used insecticides on birds: Neonicotinoid insecticides and birds. *American Bird Conservancy, Washington, DC.*
12. Newton, I., & Brockie, K. (2008). *The Migration Ecology of Birds*. Academic Press. https://books.google.co.in/books?id=P28caMMFRqYC
13. Rahmani, A. R. (2022). Indian Avian Diversity: Status, Challenges, and Solutions. In S. Kaur, D. R. Batish, H. P. Singh, & R. Kohli (Eds.), *Biodiversity in India: Status, Issues and Challenges* (pp. 175–190). Springer Nature Singapore. https://doi.org/10.1007/978-981-16-9777-7_9
14. Raman, T. R. S., Joshi, N. V., & Sukumar, R. (2005). *Tropical rainforest bird community structure in relation to altitude, tree species composition, and null models in the Western Ghats, India* (Version 1). arXiv. https://doi.org/10.48550/ARXIV.Q-BIO/0510033
15. Rodgers, W.A Hemendra S, P., H. S. (. (1988). Planning a wild protected area network in india. *Wildlife Institute of India, IN.*
16. Simberloff, D., Martin, J.-L., Genovesi, P., Maris, V., Wardle, D. A., Aronson, J., Courchamp, F., Galil, B., García-Berthou, E., Pascal, M., Pyšek, P., Sousa, R., Tabacchi, E., & Vilà, M. (2013). Impacts of biological invasions: What's what and the way forward. *Trends in Ecology & Evolution*, *28*(1), 58–66. https://doi.org/10.1016/j.tree.2012.07.013
17. Varun, K., & Dutta, S. (2020). *Understanding land-use response of bird communities in an arid ecosystem of India*. Ecology. https://doi.org/10.1101/2020.09.27.315473

Email ID- **abhishekrolla143@gmail.com**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 31-33
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

क़मर मेवाड़ी की कहानियों का मूल्याकंन

विकास कुमार, अतिथि शिक्षक,
राजकीय महाविद्यालय सांकड़ा, जिला जैसलमेर

क़मर मेवाड़ी के कहानी संग्रह क्रमशः है– 'उसका सपना', 'ऊंचे कद का आदमी' इन दोनों कहानी संग्रहों में संग्रहित कहानियों में मेवाड़ी की कहानी कला और सौन्दर्य का सर्वोत्तम रूप दिखलाई देता है। उनकी कहानियों में कल्पनात्मकता, नाटकीयता, द्वन्द्वात्मकता और मनोवैज्ञानिकता का पुट झलकता है।

उनकी कहानियों की विशिष्टता यह है कि वे किसी एक यथार्थ की अनेकायामी छवि नहीं उकेरती हैं बल्कि जीवन को खुली आँख से देखती हुई वह सब चित्रित करती है जो हमारे जीवन को किसी ने किसी रूप में बेहाल और बदहाल किये हुए है तथा जिससे निजात पाने की छटपटाहत उसमें मौजूद हैं।

मेवाड़ी जी की कहानियों को किसी सांचे में रखकर नहीं परखा जा सकता, क्योंकि वे जीवन की समस्याओं को ध्यान में रखकर कहानियाँ नहीं लिखते है, बल्कि उनकी कहानियाँ ही मनुष्य की उलझनों एवं समस्याओं से हमें रूबरू करवाती है। उनकी कहानियों के विषय प्रेम में डुबा युवा वर्ग होता या मध्यम का कोई परिवार होता है, जिसमें पिता–पुत्र, पति–पत्नि, अथवा शोषित–पीड़ित व्यक्ति होते हैं।

वर्तमान की अपसंस्कृति में प्रेम का उदात रूप कम होता जा रहा है। मेवाड़ी जी ने इस भाव को लेकर अद्वितीय कहानियां लिखी हैं। क्रमर मेवाड़ी व्यक्ति के मन की पड़ताल करने वाले सफल कहानीकार है अतः उनके पात्र बाहारूप में सामाजिक हलचलों से संचालित होकर क्रियाशील नहीं रहते। वे अपने व्यक्तित्व में विशिष्ट होते हुए भी अत्यधिक मानवीय एवं संवेदनशील होते हैं।

क़मर मेवाड़ी की कहानियों में आधुनिक दृष्टिकोण के कारण पारिवारिक जिन्दगी को कई तरह से प्रभावित किया है।''

बदलते रिश्ते में रेहाना का गुनाह स्वीकार करना कथानक को प्रभावित कर देता हैं।

'मुक्ति' कहानी में स्त्री–पुरुष के दाम्पत्य जीवन की बढ़ती दूरियों के कारण पति का आत्महत्या कर लेना प्रभावित करता है। 'इतने सारे सुख' की नायिका प्रेम में विश्वास होने की पीड़ा सहन करती है।

धुंध में फँसे लोग' कहानी में गाँवों वाले जानते है कि मास्टर दयाराम का कत्ल किसने किया है? परन्तु ठाकुर के भय के आक्रान्त है।

उनकी जीत' कहानी में संगठित मजदूरों के इरादों को मालिक भांप जाता है और सभी मजदूरों की वेतन वृद्धि कर देता है।

'आतंक' कहानी में इंसानी दरिंदगी और दंगो में भयावह स्थिति का प्रभावपूर्ण चित्रण प्रस्तुत करती है।

एक जीनियस का अंत' व 'पुजारिन' कहानियां घटनाओं और भावनाओं का बयान करती है।

क़मर मेवाड़ी हिन्दी के उन सजग कहानीकारों में से है, जिन्होंने अपना एक अलग मुकाम विकसित किया है। कहानी के कथ्य और रूप को चुपचाप बड़ी संजीदगी और जिम्मेदारी से बदलने वाले मेवाड़ी जी हिन्दी कहानी की जनवादी परम्परा के उत्कृष्ट अंश को अपनाकर आगे बढ़ाया है। मेवाड़ी जी न तो पुरानी परम्परा को तोड़ने–छोड़ने की घोषणाएं की और न उत्तर आधुनिकता और जादूई यथार्थवाद जैसे फैशनों में चक्कर में पड़े। उनकी पैनी नजर द्वन्द्वात्मक दृष्टि से व्यक्ति और समाज के अंतर्विरोधों को उनकी वर्गीय पहचान के साथ पकड़कर प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया करते है।

उनकी कहानियां पढ़ते हुए ऐसा लगता है, जैसे वे कहानी लिख नहीं बल्कि सुना रहे हो, और वे बराबर इस बात का ध्यान भी रखते हैं कि अगला सुनते–सुनते उब या ऊंघ न जाए। यह तभी हो सकता है, जब आपके पास सुनने के लिए कोई ऐसी बात हो, जो सुनने वाला अपने ख्यालों में खोकर आपको

सुनना बंद न कर दे, बल्कि पूरी तरह चौकस रहकर आपके एक–एक शब्द को ध्यान से हुने। मेवाड़ी जी के पास ऐसी बाते भी हैं और बात कहने की ऐसी कला भी। यह मणिकांचन संयोग आज की हिन्दी कहानी में दुर्लभ होता जा रहा है।

क़मर मेवाड़ी अपने जीवनाभुनव एवं यथार्थ के आधार पर कहानी लिखते हुए भी अनुभववादी नहीं है और 'नयी कहानी' की अनुभव की प्रमाणिकता को आज की कहानी के लिए पर्याप्त नहीं मानते। मेवाड़ी जी की कहानियों पढ़ते हुए ऐसा लगता है कि एक सचेत आलोचनात्मक निगाह से अपने अनुभव की जाँच–पड़ताल भी करते हैं।

क़मर मेवाड़ी की कहानियों की एक और विशेषता यह है कि वे घिसी–पिटी बातों को घिसे–पिटे ढंग से कहने के बजाय नई बातों को एक नये अंदाज में बयाँ करते हैं। इसके लिए मेवाड़ी की भाषा के स्तर पर तो सजग रहते ही हैं, कहानी के कथ्य और शिल्प में भी तरह–तरह के प्रयोग करते हैं।

क़मर मेवाड़ी की प्रयोगात्मक कहानियो में 'अलविदा जंगल', 'अजनबी शहर, बौना, 'खण्डर' आदि। इन कहानियों में केवल शैल्पिक नहीं, बल्कि कथ्य में भी नवीन प्रयोग किये हैं। मेवाड़ी जी नया शिल्प कथ्य की जरूरत के मुताबिक अपनाते है अथवा ईजाद करते है। इसी कारण मेवाड़ी जी की कहानियां ताजगी का एहसास कराती है। क़मर मेवाड़ी की कहानियों में एक और अच्छी बात यह भी है कि यथार्थ को वे किसी एकांगी नजर से नहीं देखते और उसके अच्छे–बुरे का भी सुन्दर प्रयोग हुआ है। कहानियों में वर्णनात्मक शैली, स्मृतिपरक शैली, मनोवैज्ञानिक, संवाद शैली आदि का बहुत सुन्दर प्रयोग किया गया है।

अतः क़मर मेवाडी के दोनों कहानी संग्रहों क्रमशः 'उसका सपना, ऊंचे कद का आदमी' की कहानियाँ अतुलनीय और हिन्दी कहानी की अक्षय निधि है। इनका कलेवर शिल्प की दृष्टि से परिष्कृत, सुगठित, बेजोड़ और सशक्त है।

मेवाड़ी जी की कहानियों में पूर्व कल्पना कुछ भी नहीं होती, सब कुछ स्त्री के गर्भ और अन्त में ही छुपा रहता है। उनकी अधिकतर कहानियों का सार वाक्य में ही होता है। इसलिए पाठक को कहानी का प्रारम्भ अथवा मध्य तक पहुँचाने की छूट नहीं देता, अपितु पूरी कहानी को पढ़कर ही उसके को ग्रहण किया जा सकता है। जहाँ कहानी समाप्त होती है. पाठक मंत्रमुग्ध हतप्रभ–सा रह जाता है या किसी निराशामय वेदना से घिरकर कहानी के सन्दभों को समझने में विचारमग्न हो जाता है। इस प्रकार बिना किसी रूपेण या प्रतिबद्धता दिखाए ये कहानियां मानवीय संवेदनाओं से ओत–प्रोत है का स्वर बेहतर की आकांक्षा है।

क़मर मेवाड़ी की भाषा अत्यधिक संवेदनशील है। अपने पात्रों एंव परिवेश की धड़कन उसमें अंकित है। यह भाषा मौन की अभिव्यजंना होती है। उनकी कहानियों में फैटेन्सी या लोककथाओं की शैली होती है। यह शैली उनकी अपनी जिसे उन्होनें अपने श्रम से निर्मित किया है। मेवाड़ी जी की यह विशेषता है कि किसी के दुःख, पीड़ा, परेशानी या कराह पर हँसते नहीं है बल्कि परेशानी में फँसे हुए घिरे हुए अपने आपको अत्यन्त समझदार और लगभग चालाक व्यक्ति की मूर्खता पर हंसते नहीं, उसे भी पूरी मानवीय सहानुभूति देते है जिसका वह हकदार है। यह अवश्य है कि व गलत को गलत ही कहते हैं क्षमा नहीं करते है। वे एक रचनाकार की तरह बड़े बनते है और तब बड़े बनकर उसकी पीड़ा का चित्रण करते है।

क़मर मेवाड़ी की कहानियों बहुत सुविचारित, सुचिन्तित और सुगठित होती उनकी कहानियों के विचार आयातित नहीं होते है। कहानियों में ओढ़ी हुई लीलता और ठूंसी हई आधुनिकता की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। एक अलग अर्थ में वे बडे निर्मम और बेलिहाजी रचनाकार है।

मेवाड़ी जी कहानियां विवरणों और इतिवृत के आग्रह से मुक्त अनखोजे, अनजाने और अज्ञात को छूने की कोशिश करती है। किन्तु यह उनकी अन्तप्रवृत्ति व तत्वों के लिए उनका आकर्षण उनकी कहानियों की दुनिया का केवल एक खेद है, उनकी संवेदनात्मक या बौद्धिक बाधा नहीं। चरित्र से नवोन्मेष होने के कारण उनकी कोशिश रहती है, कहानी में कुछ नया काम करने यहाँ तक कि पृथक को भी कह सकने या उसके करीब पहुंचने की।

क़मर मेवाड़ी ऐसे रचनाकार है जो अकेला होता है, चुप रहता है और अपने कुछ पात्रों के साथ अपने समय के तमाम अंधेरे कोनों और हाशिये के जीवन की यंत्रणाओं और मुस्कानों में देखता खोजता, हुआ अपनी भाषा में दर्ज करता रहता है। जिस प्रकार आइना चेहरे की कमियों को बयान कर देता है, उसी तरह पाठक भी आईने समान होता है जो कहानियों की कमियों और खूबियों को बताता है।

उनकी कहानियों में भाषा, शैली, बिम्ब, प्रतीकों आदि का यथा प्रसंग प्रयोग हुआ है। इन्होनें अपनी कहानियों में संस्कृत, उर्दू, हिन्दी, फारसी, अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग बहुतायत से किया है। इनकी कहानियों में मुहावरों और कहावतों आशाजनक और निराशाजनक सभी पहलुओं को सामने लाते है, परन्तु फिर भी मनुष्य की सच्चाई अच्छाई, ईमानदारी या एक शब्द में कहे तो उसकी मनुष्यता में आपका विश्वास सदा बना रहता है. जिसके कारण मेवाडी जी उस सिनिसिज्म के शिकार नहीं होते है जो इधर हिन्दी के कई कहानीकारों में दिखाई देने लगा है। क़मर मेवाड़ी मनुष्य की विविशताओं और कमजोरियों को जानते हुए भी उनकी भावनाओं में विश्वास बनाये रखते है, यही उनकी विशिष्टता है। इस दृष्टि से बदलते रिश्ते', 'पुजारिन', 'मुक्ति' बहुत अच्छी कहानियां है।

मेवाड़ी जी की दृष्टि प्रत्येक क्षेत्र पर रही है, उन्होनें साम्प्रदायिकता, छुआछूत, रिश्वतखोरी और नैतिक पतन पर भी कहानियों में सफल चित्रण किया है। इस तरह की कहानियों में 'ऊंचे कद का आदमी', 'आतंक', 'विचित्र जंगल, उसका सपना', 'फैसला', 'बौना' आदि मेवाड़ी जी की महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं।

क़मर मेवाड़ी ने अधिकतर छोटी कहानियों ही लिखी है। उनकी कहानियों के विषय जिनका वे चुनाव करते है वे मौलिक होते हैं, जिनमें दोहराव बहुत कम होता है। उनकी कहानियों में पात्रों का अर्न्तद्वन्द्व, क्रिया–प्रतिक्रिया, नाटकीयता प्रायः कम होते हैं। मेवाड़ी जी का कथा शिल्प मौन व्यंजनाओं से बहुत कुछ कह देता है। इस तरह उनकी कहानियों वर्तमान जीवन के कुछ बिम्ब या चित्र प्रतीत होते हैं जिनका सांकेतिक रूप व्यापक और साकारात्मक अर्थो वाला होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. ऊँचे कद का आदमी
2. उसका सपना

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 34-39
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिमाचल प्रदेश के प्रमुख जनजातीय लोक नृत्य : अवलोकन

अंजली कुमारी, शोध छात्रा,
डॉ मलकीयत सिंह, शोध निर्देशक, सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय

सार --

हिमाचल प्रदेश के प्रमुख जनजातीय क्षेत्रों में मुख्यतः लाहौल स्पीति, किन्नौर व चंबा तीन जिले शामिल है। यह जिले हिमाचल प्रदेश की विविध जनजातीय विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं जहां के लोक नृत्य, लोक गीत, लोक कथा, लोक गाथा तथा लोकनाट्यों में प्रकृति के सुंदर दृश्यों के साथ संस्कृति परंपराएँ शामिल हैं जिनमें लोक जीवन के संघर्षों के अभिव्यक्ति अंतर्निहित है। प्रत्येक जनजाति का अपना विशिष्ट परिधान, वाद्य यंत्र और संगीत है जो वर्तमान में भी अपने मूल रूप में संरक्षित है क्योंकि यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित किए जाते हैं। हिमाचल प्रदेश के विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के कारण प्रत्येक जनजाति की अपनी अलग भाषा, रीति रिवाज, संगीत और नृत्य हैं। एक राज्य की जनजाति में इतनी विविधता प्रदेश की बहु- सांस्कृतिक सम्पन्नता और वैविध्य को प्रतिबिंबित करती है।

बीज शब्द--

हिमाचल प्रदेश, जनजाति, लोक नृत्य, प्रकृति, लोक जीवन, संस्कृति, मुखौटा, झांझर, डंडारस, नृत्य।

प्रस्तावना -

लोक नृत्य सामान्य जनमानस के मनोरंजन का एक प्रमुख साधन है। व्यक्ति के लोक जीवन के अनुभव अनूठे रूप में लोक नृत्य में प्रकट होते हैं। अतः कोई व्यक्ति विशेष लोक नृत्य का सृजनकर्ता नहीं होता अपितु यह पूरे समाज की देन है। लोक नृत्य का आरंभ कब और कैसे हुआ यह ठीक ठीक कहना कठिन है किंतु यह सर्वविदित है की कलाएँ नियम और शास्त्रों में कम तथा परंपराओं में अधिक वास करती हैं। इनका मूल स्रोत प्रकृति और कुछ अलौकिक शक्तियां होती हैं जो मानव जीवन में स्वत: जन्म लेती और पनपती हैं। लोक नृत्य आम जनमानस में आनंद का सृजन करता है। प्रत्येक समाज के लोक नृत्य में क्षेत्र विशेष की प्रकृति, परंपरा, रीति-रिवाज का प्रभाव देखने को मिलता है। प्रकृति की गोद में बसे हिमाचल

प्रदेश के लोक नृत्य में नैसर्गिक रूप से प्रकृति की सुंदरता, परिवर्तनशीलता एवं चुनौतियां सभी लोक नृत्यों ने प्रतिबिंबित होती है। विभिन्न लोकोत्सवों में प्रकृति से संबंधित लोक गीत गाए जाते हैं और प्रकृति के अनुकूल वेशभूषा पहन कर नृत्य किये जाते हैं। हिमाचल प्रदेश में निवास कर रही प्रत्येक जनजाति की अपनी अनूठी संस्कृति और परंपराएं हैं जिसकी छटा लोक नृत्यों में देखी जा सकती है। संस्कृति के अंतर्गत मनुष्य की रीति-नीति, लोक विश्वास, आदर्श कलाएं तथा मानव द्वारा उपलब्ध समस्त कौशल एवं योग्यता को लिया जा सकता है। कुछ लोक नृत्य में जहां केवल वाद्य यंत्र को आधार बनाया गया है तो कुछ लोक नृत्य पुरातन लोक कथाओं से जुड़े हैं वहीं कुछ लोक नृत्य विशेष उत्सवों को मिलकर मनाने तथा सामूहिक भागीदारी और मनोरंजन से संबंधित हैं। हिमाचल प्रदेश के प्रमुख जनजाति लोक नृत्य इस प्रकार है--

लाहौल स्पीति के प्रमुख लोक नृत्य--

शैणी नृत्य - यह नृत्य लाहौल से संबंधित है। विवाह तथा त्यौहारों के अवसर पर किए जाने वाले इस लोक नृत्य में स्त्री-पुरुष एक दूसरे का हाथ पकड़कर वृत्तीय कक्षा बनाकर नृत्य करते हैं। शैणी नृत्य के अवसर पर गाए जाने वाले प्रसिद्ध लोकगीतों की कुछ पंक्तियां निम्नांकित हैं--

'संदवाड़ी जात्रो जोगे कलंगी मतग ए,
संदवाड़ी जात्रो जोगे कंठड़ी मतग ए।'

प्रस्तुत गीत में एक गांव में होने वाले उत्सव का वर्णन किया गया है जिसमें एक स्त्री चिंता व्यक्त करते हुए कहती है कि उत्सव में पहनने हेतु उसके पास फूल और माला नहीं है। इसके अलावा इनमें अन्य लोकगीत भी शामिल किए जाते हैं।

चित्र साभार यूट्यूब - https://youtu.be/xFt1BAfHb1M?si=E5mgpFfzYQDP8PJN

छोलाणी नृत्य - यह भी लाहौल का लोकप्रिय नृत्य है। स्त्री-पुरुष मिलकर सामूहिक रूप से इस नृत्य में भाग लेते हैं। हालाँकि इसमें वाद्य यंत्रों का प्रयोग नहीं किया जाता केवल 'घुरे' गीत ही गाए जाते हैं। इस नृत्य में स्त्री-पुरुष घुरे गीत गाते हुए और हाथ से ताली बजाते हुए विशेष प्रकार का पद संचालन करते हैं ।

असुर नृत्य --लाहौल के कुछ क्षेत्रों में हल्डा पर्व के अंतिम दिन यह नृत्य केवल पुरुषों द्वारा असुरों का छद्म रूप धारण कर किया जाता है । इसके संदर्भ में लोक मान्यता है कि ऐसा करके वह असुरों के नकारात्मक प्रभाव से सुरक्षित रहेंगे।

चित्र साभार यूट्यूब - https://youtu.be/AhsdyqksZVA?si=62gFbJNJyTWSJlmS

छम/चाम नृत्य - यह स्पीति का प्रसिद्ध नृत्य है। "छम" का पूरा नाम 'गरछम' है जो गर और छम के संयोग से बना है। गर का अर्थ है- नाच तथा छम का अर्थ है- ताल के साथ कदमों को मिलाना। ऐसी मान्यता है कि तांत्रिक गुरु पद्मसंभव द्वारा तिब्बत के महाविहार में तांत्रिक अनुष्ठान के माध्यम से भूत- प्रेतों व राक्षसों को वहां से भगाया गया तथा उसके बाद छम नृत्य किया। इसी कारण लाहौल- स्पीति के गोम्पा में छम नृत्य का आयोजन किया जाता है। छम नृत्य के माध्यम से गुरु पद्मसंभव के आठों रूपों को भी दिखाया जाता है । इस नृत्य में पारंपरिक वाद्य यंत्रों की धुन पर बौद्ध भिक्षु रंग-बिरंगे परिधानों में नृत्य करते हैं। लाहौल- स्पीति के अतिरिक्त बौद्ध धर्मों से संबंधित स्थलों पर आज भी छम नृत्य किया जाता है जिसके मूल में मनोरंजन तथा धार्मिक पक्ष होता है।

चित्र साभार यूट्यूब - https://youtu.be/GB2xu70Bnhg?si=5-EPt1YCARuVjgv1

गर्फी नृत्य -- यह लाहौल का प्राचीनतम नृत्य माना जाता है जिसे स्त्री, पुरुष, बूढ़े तथा बच्चों आदि सभी के द्वारा सामूहिक रूप से किया जाता है। गर्फी किसी भी विशेष अवसर पर किया जाता है जिसमें लोग वृत बनाकर मौखिक गान के साथ नृत्य करते हैं। वाद्य यंत्रों के रूप में बांसुरी, ढोल तथा कांसे की थाली का प्रयोग किया जाता है ।

शोन नृत्य -- यह स्पीति का लोकप्रिय नृत्य है जिसमें नर्तक हाथ पड़कर गोले की परिधि में नाचते हैं। यह मूख्यतः मेलों, त्योहारों और विवाह आदि के अवसर पर किया जाता है ।

चित्र साभार यूट्यूब - https://youtu.be/L2L6liT51oc?si=Le0AAQzNJIVMru1b

किन्नौर के प्रमुख लोक नृत्य --

बाक्यांग नृत्य -- यह किन्नौर का प्रसिद्ध सामूहिक नृत्य है जो प्राय: स्त्रियों द्वारा किया जाता है। इसमें दो-तीन पंक्तियाँ बनाई जाती है। जब एक पंक्ति जब आगे बढ़ती है तो दूसरी पंक्ति के नर्तक पीछे होते हैं।

बोन्यांगछू नृत्य -- यह प्राय: पुरुषों द्वारा किया जाता है जिसमें स्त्रियां कभी- कभी सहयोगी भूमिका में गीत गाती हैं। इसमें पुरुष वाद्य यंत्रों की धुन पर नाचते हैं। इस नृत्य को मुक्त रूप तथा सामूहिक रूप में किया जा सकता है।

कायड./ क्यांग लोक नृत्य - यह भी किन्नौर का लोकप्रिय नृत्य है। इस नृत्य में "कायड" शब्द का अर्थ शारीरिक प्रदर्शन से जुड़ता है। लोग सामूहिक रूप में एक- दूसरे का हाथ पड़कर गोल दायरे में नृत्य करते और गीत गाते हैं। क्यांग नृत्य विशेषकर त्यौहारों के अवसर पर विभिन्न उत्सवों के आधार पर किया जाता है ।

चित्र साभार फ़ेसबुक पेज - https://www.facebook.com/destinationkinnaur/videos/1067000293363156/?mibextid=rS40aB7S9Ucbxw6v

बुढ़ाछड़ चाशिम -- बुढ़ाछड़ का तात्पर्य है- बूढ़े और बच्चों का नृत्य। यह किन्नौर का विशिष्ट नृत्य है। इसके संदर्भ में किवदंती है कि बूढ़े बच्चों के स्वांग में नाच करने से सावनियाँ प्रसन्न होकर लोगों की फसलों तथा पशुओं की रक्षा करती है। इसमें नर्तक पारंपरिक वाद्य यंत्रों से बजाई जाने वाली लोक धुनों पर नाचते हैं ।

राक्षस नृत्य -- इसे छाम्ब नृत्य भी कहा जाता है। किन्नौर का यह प्रसिद्ध लोक नृत्य मुखौटा पहनकर बौद्ध लमाओं द्वारा किया जाता है। यह नृत्य त्यौहार या किसी विशेष अवसर पर किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि राक्षस नृत्य द्वारा भूत-प्रेतों से फसलों की रक्षा होती है।

मुखौटा नृत्य -- यह नृत्य मुखौटा पहनकर किया जाता है। मुखौटे में बकरी-याक के बाल लगाए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि मुखौटा नृत्य से भूत-प्रेत भाग जाते हैं। मुखौटा नृत्य किन्नौर और लाहौल स्पीति में बौद्ध मठों में किया जाता है। इस नृत्य में शेर पर काबू पाने का दृश्य भी दिखाया जाता है। इसका प्रतीकात्मक भाव यह है कि दुरात्मा सदैव पराजित होती है ।

चंबा के प्रमुख लोक नृत्य -

चुराही नृत्य-- चंबा के चुराही क्षेत्र का यह लोक नृत्य सामूहिक रूप से भी किया जाता है और स्त्री- पुरुष द्वारा अलग- अलग घेरा बनाकर भी किया जाता है। नृत्य की गति आरंभ में धीमी होती है और बाद में बढ़ती जाती है।

घुरेई /घुरेही/घुंघर नृत्य-- घुरेही संस्कृत के 'ग्रहस्त' रूप का अपभ्रंशित शब्द है। यह विकृत रूप भरमौर में घुरेही (घर की) अर्थात ऐसी घरेलू बातें जो मन-मुटाव वाली होती हैं, जिन्हें विश्वस्त व्यक्ति से किया जाता है ताकि दूसरा कोई सुन न ले इसलिए बहुत धीरे- धीरे घुर- घुराई ध्वनि में कही जाती हैं, घुरेही कहा जाता है। घुरेही नृत्य में केवल स्त्रियां ही नाचती है। जिसमें नृत्य करते समय परंपरागत वेशभूषा धारण करती है। इसमें लुआंचड़ी, गात्री (कमर में पहने जाने वाला काला ऊनी धागा) मांगटीका(चिड़ी), चूड़ीदार पजामा, मालाएं, पारंपरिक आभूषण आदि पहने जाते हैं। इसमें स्त्रियाँ नृत्य करते हुए एक वृत्त बना लेती है तथा नाचते हुए ताली भी बजाती हैं। नृत्य करते समय धर्म, प्रेम और वीर गाथाओं से संबंधित विभिन्न लोकगीत भी गए जाते हैं।

चित्र साभार यूट्यूब - https://youtu.be/__re6C5rrI4?si=Y6lDW6mzvPDuRyTk

झांझर नृत्य - चंबा का प्रसिद्ध लोक नृत्य है जिसमें स्त्री -पुरुष अर्ध गोलाकार दायरा बनाकर सामूहिक नृत्य करते हैं। नृत्य के साथ विभिन्न लोकगीत गाए जाते हैं। झांझर नृत्य विभिन्न उत्सवों, विवाह, त्यौहार के अवसर पर किया जाता है।

डंडारस नृत्य -- डंडारस नृत्य आरंभ में केवल पुरुषों के द्वारा किया जाता था किंतु कालांतर में कुछ क्षेत्रों में सामूहिक रूप से स्त्रियों के साथ मिलकर भी डंडारस नृत्य किया जाने लगा

है। पुरुष सामूहिक नृत्य को डंडारस की संज्ञा दी गई है। संभवत: शिवजी के तांडव नृत्य का ही यह दूसरा नाम है। डंडारस नृत्य मेले, त्यौहारों, विवाह आदि विशेष अवसरों पर किया जाता है। इसे गद्दी नृत्य भी कहा जाता है ।

पंगवाल नृत्य -- यह नृत्य चंबा के पांगी क्षेत्र में किया जाने वाला लोकप्रिय नृत्य है। पांगी क्षेत्र के लोगों द्वारा अपने पारंपरिक परिधान पहनकर यह नृत्य धीमी गति में किया जाता है।

निष्कर्ष - अत: कहा जा सकता है कि हिमाचल प्रदेश के जनजातीय लोक नृत्य अपने स्थानीय भाषा, संगीत और लोक कथाओं को संरक्षित करने के साथ- साथ स्थानीय परंपराओं इतिहास और भावनाओं को दर्शाते हैं। निसंदेह लोक साहित्य किसी भी समाज की जिंदादिली का परिचायक होता है। लोक नृत्य को राज्य की संस्कृति का अनमोल विरासत कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए।

संदर्भ -

(1) हिंदी साहित्य ,कोश भाग-1, पृष्ठ-751
(2) डॉ कृष्ण देव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, इलाहाबाद, संस्करण-2009, पृष्ठ-11
(3) हिमाचल प्रदेश का जनजातीय लोक संगीत ,डॉक्टर सूरत ठाकुर ,पृष्ठ-54
(4) वही ,पृष्ठ-39
(5) हिमाचल की जनजाति गद्दी देव परंपरा और संस्कृति ,गौतम शर्मा 'व्यथित', पृष्ठ-74
(6)गद्दी भरमौर की लोक संस्कृति एवं कलाएं, रणपतिया अमर सिंह, पृष्ठ-59

मो.- 7018930339 ई.मेल- anjalikumari0289@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 40-42
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

विद्यापति के काव्य में सामाजिक दर्शन

डॉ पूनम देवी, निर्देशिका,
सुमन कुमार, शोधार्थी,
महाराजा अग्रसेन हिमालयन गढ़वाल विश्वद्यिालय उत्तराखण्ड

शोध सारांश

विधापति का काव्य राष्ट्रीय एकता और सामाजिक सौहार्द्र के प्रतीक के रूप में उभरा। उनके गीतों में भारतीय संस्कृति, परंपराओं और धार्मिक विविधताओं के प्रति सम्मान की भावना स्पष्ट होती है। उन्होंने भारतीय समाज की विभिन्न जातियों और समुदायों के बीच समरसता को बढ़ावा देने का प्रयास किया। उनके काव्य में तत्कालीन भारत की संस्कृति और समाज की समस्याओं का आकलन किया गया है, जिससे राष्ट्रीय चेतना की गहरी अनुभूति होती है और उनके काव्य में केवल प्रेम और भक्ति की अभिव्यक्ति नहीं मिलती, बल्कि उनके लेखन में राष्ट्रीय चेतना के भी संकेत मिलते हैं। विधापति के काव्य में उस समय की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का परिलक्षित होना, उनकी राष्ट्रीयता और समाज के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है। भले ही वे एक संत और भक्त कवि थे लेकिन उनके काव्य में राष्ट्र की एकता, अखंडता और सांस्कृतिक चेतना का संदर्भ पाया जाता है।

उनके काव्य में देशभक्ति का भाव उन समय की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के प्रति सजगता को दर्शाता है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारत के सांस्कृतिक धरोहर और पारंपरिक मूल्यों की रक्षा की बात की है। विधापति के विचारों में भारतीय समाज के समग्र उत्थान की भावना निहित है, जिसमें वे जातिवाद, भेदभाव और सामाजिक असमानताओं के खिलाफ थे। उनका काव्य राष्ट्रीयता के रूप में सामने आता है, जो भारतीय एकता और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को प्रदर्शित करता है।

विद्यापति ने अपने काव्य में समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है। उनका साहित्य सामाजिक दृष्टिकोण से भरपूर है, जिसमें उन्होंने तत्कालीन समाज की समस्याओं, विषमताओं और मानवीय भावनाओं का गहन चित्रण देखने को मिलता है। उनके काव्य में न केवल प्रेम, भक्ति और नैतिकता का रूप स्पष्ट है, बल्कि समाज की सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक असमानताओं का भी विवेचन किया गया है। विधापति के काव्य में समाज के निम्न वर्ग, विशेष रूप से महिलाओं और शोषित वर्ग की स्थिति को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उनके गीतों में नारी के संघर्ष, प्रेम और स्वाभिमान को उजागर किया गया है। इसके साथ ही, उन्होंने जातिवाद, धर्म की संकुचित व्याख्याओं, और सामाजिक रुढ़ियों के खिलाफ भी अपनी आवाज उठाई। विधापति ने समाज में प्रेम, सहिष्णुता और समानता की आवश्यकता को व्यक्त किया।

उनके काव्य में प्रेम का आदर्श सामान्य मानवीय रिश्तों से ऊपर उठकर, ईश्वर के प्रति भक्ति के रूप में भी प्रस्तुत हुआ है। सामाजिक दृष्टि से उनका साहित्य एक आलोचना के रूप में कार्य करता है, जो तत्कालीन समाज की असमानताओं और अपारदर्शिता को चुनौती देता है। विधापति का काव्य एक ओर जहां समाज सुधार की दिशा में प्रेरणा देता है, वहीं यह व्यक्ति के आत्मिक उत्थान के लिए भी प्रेरणादायक है।

विधापति के काव्य में जो सामाजिक बदलाव हैं उनको बार–बार रेखांकित किया गया है, उनके काव्य का अध्ययन समाजशास्त्र, साहित्य, और सांस्कृतिक इतिहास के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

यह शोध यह बताता है कि विधापति के काव्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास एक अप्रत्यक्ष रूप से हुआ, जो समाज के विभिन्न पहलुओं में जागरूकता और बदलाव की आवश्यकता को स्पष्ट करता है। उनके काव्य में समाज, संस्कृति, और राष्ट्र के प्रति प्रेम और समर्पण की भावना प्रमुख रूप से उभर कर सामने आती है, जो आज भी प्रासंगिक है और हमारे राष्ट्रीय चेतना के लिए प्रेरणास्त्रोत बनी हुई है।

विद्यापति मिथिला के महान कवि और संत थे, जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से भारतीय समाज, संस्कृति और धर्म पर गहरी छाप छोड़ी। उनका काव्य मुख्यतः प्रेम, भक्ति और सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित है। विद्यापति की रचनाएँ खासकर मैथिली भाषा में लिखी गईं, जो तत्कालीन समाज के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों से गहरे जुड़े हुए हैं। विद्यापति के काव्य में न केवल प्रेम की आदर्श अभिव्यक्ति मिलती है, बल्कि उनका दृष्टिकोण समाज, जाति, संस्कृति और समानता के विषय में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस शोध आलेख में हम विद्यापति के काव्य में निहित सामाजिक दर्शन पर चर्चा करेंगे, जिसमें उनके द्वारा प्रस्तुत समाज के विभिन्न पहलुओं की विवेचना की जाएगी।

1. विद्यापति का सामाजिक दृष्टिकोणः

विद्यापति के काव्य में प्रेम और भक्ति का तत्व प्रमुख रूप से उभरता है, लेकिन इसके साथ ही उन्होंने सामाजिक असमानता, जातिवाद और मानवीय संबंधों के बारे में भी गहरे विचार व्यक्त किए। विद्यापति ने समाज के निम्न वर्गों की दुर्दशा को व्यक्त किया और उनके अधिकारों और सम्मान की बात की।

विद्यापति के काव्य में प्रेम को सर्वोच्च स्थान दिया गया है, और यह प्रेम केवल भक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक समानता और आत्मीयता का प्रतीक भी है। उनके काव्य में प्रेम का आदर्श रूप श्री कृष्ण के प्रति भक्ति के रूप में उभरता है, लेकिन साथ ही यह प्रेम व्यक्ति के भीतर समानता और समर्पण की भावना को भी जागृत करता है। विद्यापति का यह संदेश था कि प्रेम और भक्ति समाज में भेदभाव और असमानता को मिटाकर सभी को एक समान स्थान प्रदान करते हैं।

विद्यापति ने अपने काव्य में विशेष रूप से समाज की असमानताओं और जातिवाद का विरोध किया। उन्होंने उन समय की सामाजिक संरचनाओं, जहाँ जातिवाद और पंथगत भेदभाव प्रचलित थे, पर प्रश्न उठाया और एक ऐसे समाज की परिकल्पना की, जहाँ सभी व्यक्तियों को समान अधिकार और सम्मान मिले। विद्यापति के गीतों में प्रेम का जो रूप है, वह किसी भी सामाजिक भेदभाव को नकारता है।

विद्यापति के काव्य में भक्ति का एक प्रमुख स्थान है, और उनकी भक्ति का दृष्टिकोण समाज के सुधार के लिए था। वे भगवान श्री कृष्ण के परम भक्त थे, और उनके काव्य में कृष्ण के प्रति असीम भक्ति और प्रेम का अद्भुत चित्रण मिलता है। उनके भक्ति काव्य में भगवान के प्रति प्रेम केवल व्यक्तिगत मोक्ष की भावना से परे है, बल्कि यह समाज की अच्छाई, सत्य और न्याय की ओर भी इशारा करता है।

विद्यापति के काव्य में भक्ति का संदेश समाज के विभिन्न वर्गों के लिए है। उन्होंने भक्ति को केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक सुधार का माध्यम भी माना। उन्होंने जीवन के साधारण पहलुओं को कृष्ण भक्ति से जोड़ते हुए, समाज के भीतर अच्छाई और दया की भावना को बढ़ावा दिया। उनका यह काव्य समाज के सुधार की दिशा में एक मजबूत कदम था, जो आज भी प्रासंगिक है।

विद्यापति ने मैथिली भाषा को साहित्यिक मान्यता प्रदान की और इसे एक सम्मानजनक स्थान दिलवाया। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से मैथिली को एक नई पहचान दी और इसे सामाजिक और धार्मिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण भाषा बना दिया। विद्यापति का काव्य न केवल एक साधारण भाषा में लिखा गया था, बल्कि यह समाज की गहरी समझ और सांस्कृतिक धारा को व्यक्त करने में सक्षम था। उनके काव्य ने सामाजिक मुद्दों को ऐसे रूप में प्रस्तुत किया, जिसे आम जनता भी आसानी से समझ सके।

उनकी रचनाओं में धार्मिक भक्ति के साथ–साथ समाज के विभिन्न पहलुओं का चित्रण किया गया है, जिसमें प्रेम, दया, समाज के कमजोर वर्गों के अधिकार, और सामाजिक समानता जैसे विषयों को प्रमुखता दी गई है। विद्यापति ने अपने गीतों के माध्यम से जनता के बीच जागरूकता फैलाई और समाज में व्याप्त अंधविश्वास और असमानताओं के खिलाफ आवाज उठाई।

विद्यापति का काव्य प्रेम और समर्पण का आदर्श प्रस्तुत करता है। उनका प्रेम केवल व्यक्तिगत भक्ति तक सीमित नहीं था, बल्कि यह समाज के व्यापक हित में था। उनकी रचनाओं में प्रेम और भक्ति का जो रूप है, वह सच्चे प्रेम के माध्यम से समाज में बदलाव की आशा और विश्वास को व्यक्त करता है।

उनकी रचनाओं में कृष्ण के प्रति प्रेम और भक्ति के अद्भुत रूप को प्रस्तुत किया गया है, जिसमें समाज के हर वर्ग और व्यक्ति को समानता का संदेश दिया गया है। विद्यापति ने समाज के भीतर समर्पण की भावना को बढ़ावा दिया और यह बताया कि जब एक व्यक्ति कृष्ण के प्रति समर्पित होता है, तो वह समाज में प्रेम और भाईचारे का प्रतीक बनता है।

5. निष्कर्ष:

विद्यापति का काव्य केवल एक साहित्यिक धरोहर नहीं, बल्कि समाज के गहरे सुधार का एक माध्यम था। उनके काव्य में प्रेम, भक्ति, समानता और सामाजिक न्याय के दर्शन स्पष्ट रूप से उभरते हैं। उन्होंने अपने गीतों और रचनाओं के माध्यम से समाज को जागरूक किया और सामाजिक असमानताओं के खिलाफ एक आवाज उठाई। विद्यापति का काव्य आज भी हमें यह सिखाता है कि समाज में प्रेम और भाईचारे की भावना का महत्व है, और यह भक्ति और समर्पण के माध्यम से ही संभव है। उनके विचार आज भी समाज सुधारक दृष्टिकोण से प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची:-

1. त्रिपाठी, रामचंद्र. "विद्यापति और उनका काव्य." मिथिला साहित्य समीक्षा, 2021.
2. यादव, शिवनाथ. "विद्यापति का भक्ति काव्य और समाज." मैथिली साहित्य, 2020.
3. मिश्रा, राधाकृष्ण. "विद्यापति के सामाजिक दर्शन का विश्लेषण." भारतीय काव्य और समाज, 2019.
4. सिंह, सुरेश. "विद्यापति और सामाजिक सुधार." भारतीय साहित्य और संस्कृति, 2022.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 43-45
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्रभा खेतान–'अन्या से अनन्या' चुनौतियाँ एवं संघर्ष

विक्रम सिंह दईया, अतिथि शिक्षक,
राजकीय कन्या महाविद्यालय फलोदी

भारतीय साहित्य की विलक्षण बुद्धिजीव डॉ. प्रभा खेतान दर्शन, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विश्व–बाजार और उद्योग जगत की गहरी जानकार हैं। सक्रिय स्त्रीवाद लेखिका। उन्होंने विश्व के लगभग सारे स्त्रीवादी लेखन को घोट ही नहीं डाला बल्कि अपने समाज में उपनिवेशित स्त्री के शोषण, मनोविज्ञान, मुक्ति के संघर्ष पर विचारेतजक लेखन भी किया।

'अन्या से अनन्या' का प्रथम बार प्रकाशन हंस में धारावाहिक रूप से हुआ इस आत्मकथा को जहाँ एक बोल्ड और निर्भीक आत्मस्वीकृति की साहसिक गाथा के रूप में अकुंठ प्रशंसाएं मिली हैं। वही बेशर्म और निर्लज्ज स्त्री द्वारा अपने आपको चौराहे पर नंगा करने की कुत्सित बेशर्मी का नाम भी दिया गया है।

महिला उद्योगपति प्रभा खेतान का यही दुस्साहस क्या कम है कि वह मारवाड़ी पुरुषों की दुनिया में घुसपैठ करती हैं। कलकत्ता चौम्बर ऑफ कामर्स की अध्यक्ष बनती हैं। एक के बाद एक उपन्यास और वैचारिक पुस्तके लिखती है और वही प्रभा खेतान 'अन्या से अनन्या में एक अविवाहित स्त्री विवाहित डॉक्टर से धुआँधार प्रेम में पागल हैं। दीवानगी की इस हद को पाठक क्या कहेंगे कि प्रभा डाक्टर सर्राफ की इच्छानुसार गर्भपात कराती हैं। और खुलकर अपने आपको डॉ. सर्राफ की प्रेमिका घोषित करती हैं। स्वयं एक अत्यन्त सफल, सम्पन्न और दृढ संकल्पी महिला परम्परागत 'रखैल' का सांचा तोड़ती है क्योकि वह डॉ. सर्राफ पर आश्रित नहीं हैं। यह भावनात्क निर्भरता की खोज में एक असुरक्षित नहीं है बल्कि जिस समाज का हिस्सा है वह भी आर्थिक और राजनैतिक रूप से उतना ही असुरक्षित उद्वेलित हैं। तत्कालीन बंगाल का सारा युवा–वर्ग इस सुरक्षा के विरूद्ध संघर्ष में कूद पड़ा है और प्रभा अपनी इस असुरक्षा की यातना को निहायत निजी घरातल पर समझना चाह रही हैं एक तूफानी प्यार में दुबकर या एक बोर्जुआ प्यार से मुक्त होने की यातना जीती हुई एक मुकाम हासिल करती हैं।

नारी विमर्श की प्रखर चिंतक और उपन्यासकार प्रभा खेतान का यह आत्मकथा स्त्री के शोषण, उत्पीड़न और संघर्ष का जीवन्त दस्तावेज हैं। सम्पन्न मारवाड़ी समाज की पृष्ठभूमि में रची गई इस औपन्यासिक कृति की नायिका परत–दर परत स्त्री जीवन के उन पक्षो को उघाड़ती चलती हैं जिनको पुरुष समाज औरत की स्वाभाविक नियति मानता रहा है। और इस प्रक्रिया में वह हमें स्त्री की युगों–युगों से संचित पीड़ा से रू–ब–रू कराती हैं।

बचपन से ही भेदभाव और उपेक्षा की शिकार साधारण शक्ल–सूरत और सामान्य बुद्धि की प्रभा परिवार की सुरक्षित चौहद्दी के भीतर ही यौन शोषण की शिकार भी होती हैं और तदुपरांत प्रेम और भावनात्मक सुरक्षा की तलाश में उन तमाम आघातों से दो चार होती हैं। जिनसे सम्भवतः हर स्त्री को गुजरना होता हैं। अपने जड़ संस्कारों में जकड़ा पति या पुरुष भी उसे मानवोचित सम्मान नहीं दे पाता।

प्रभा खेतान ने धीरे–धीरे व्यापार की दुनिया में अपना परचम लहरा दिया प्रमा विदेशो में भी सेम्पल लेकर जाती वहाँ की कम्पनियों से भी आर्डर मिलने लगे तब प्रभा विदेशो में भी घुमघुम कर वहाँ रहकर व्यापार करने लगी। उसने अपने काफी मित्र बनाए जिन्होंने व्यापार में प्रभा का साथ दिया उसकी मदद की। अपने घर में नहीं प्रभा विदेशो में नए मित्रों ने अपनी जीवन की बातें प्रभा से जाहीर की तब प्रभा

को लगा की ये अच्छे इंसान है इनका साथ हमेशा अच्छा रहेगा। प्रभा विदेशो में घूमती नए–नए लोगो से मिलती उनकों अपने व्यापार के बारे में बताती कुछ लोग उसके व्यापार से खाफी खुश थे।

कई लोग प्रभा के साथ व्यापार मे जुड़े इस तरह प्रभा ने अपने देश के साथ–साथ विदेशो में भी व्यापार को प्रोत्साहन दिया जो पुरुषों की चुनौतियों का सामना करके उनको पीछे छोड़कर आगे निकल गई प्रभा का नाम जाने–माने उद्योगपतियों में लिया जाता हैं।

प्रभा खेतान एक ऐसी स्त्री के रूप में जानी जाती हैं जिसने अपने जीवन कई बाधाओं को पार करके एक उद्योगपति बनती हैं जो व्यापार की दुनिया में अपना नाम करती है जिसने अपने जीवन भर मुश्किलों को सामना किया उसका की किसी ने साथ नहीं दिया ना ही किसी ने प्रमा को प्यार के लिए तड़पती रही बचपन में उसे उसकी माँ ने कभी प्यार नहीं किया न ही उसे कभी अपने पास आने दिया वो माँ के स्नेह के लिए हमेशा तड़पती रही बस घर में एक दाई माँ थी जिसने उसको पाल–पोस कर बड़ा किया और उसे गले से लगाया दाई माँ का स्नेह उसे अच्छा लगता था दाई माँ उसे अपनी बेटी की तरह प्यार करती दिखने में भी प्रभा दाई माँ की ही तरह दिखती थी प्रभा काली कलूटी थी इसलिए लोग उसे दाई माँ की बेटी कहते प्रभा को दाई माँ का स्नेह अच्छा लगता एक दाई माँ ही थी जो प्रभा का दुख समझ सकती थी।

प्रभा दाई माँ की लाडली बेटी थी दाई माँ जब खाना खाने बैठती तब प्रभा दाई माँ के पास आकर बैठ जाती और दाई माँ के हाथों से दाल–चावल खाने पर ही उसकी भूख शांत होती। जब दाई माँ प्रभा को अपनी गोद में लेकर सोती तो प्रभा की बहुत आनन्द आता दाई माँ उसे कहानियों सुनाती और अपने दुख–सुख की बात प्रभा को बताती जब दाई माँ की आँखो से आंसू आते तब प्रभा दाई माँ को चुप कराती और कहती की मैं तुम्हारी बेटी हूँ ना तब दाई माँ कहती तू ही मेरी बेटी हैं।

दाई माँ का स्नेह प्रभा को जीवन भर याद रहा क्योंकि प्रभा जब स्कूल से लौटकर आती तो सीधे दाई माँ को ढूंढने लगती दाई माँ नहीं मिलने पर खून रोती तब दाई माँ आकर उसे चुप कराती।

प्रभा ने जब अध्ययन प्रारम्भ किया उस समय वह होनहार थी शुरू से ही प्रभा को पढ़ने लिखने का शौक था। जब प्रभा के घर में उसके पिता एक जाने माने उद्योगपति थे उस समय प्रभा का परिवार पैसा वालो में गिना जाता। प्रभा के पिता उसे खूब प्यार करते जब प्रभा के पिता की मृत्यु हुई उस समय प्रभा बहुत छोटी थी। प्रभा को अपने पिता की याद स्कूल से घर आने पर आती।

प्रभा बचपन में बहुत बहुत शैतान थी उसके भाई बहिन उसकी अपने साथ नहीं रखते थे वे कहते थे कि तू तो काली है तू दाई माँ की बेटी है। तब प्रभा कहती हाँ मैं दाई माँ की ही बेटी हूँ।

प्रभा को बचपन में उसके सगे बड़े भाई ने उसका शोषण किया उस पर कई बार कुकृत्य करता रहा प्रभा जानते हुए भी यह बात किसी को नहीं बता सकी सिर्फ दाई माँ ही थी जो यह सब जानती थी दाई माँ ने प्रभा से कई बार कहाँ की वह अपनी माँ को इस बारे में बताएं की बड़े भाई क्या–क्या करते है पर प्रमा कह न सकी वो जानती थी की मां भाई का पक्ष लेगी उसकी बात सुनने वाला कोई नहीं है ऊपर से मुझे ही डॉट पडेगी इस डर से प्रभा ने ये बात छुपाई रखी।

प्रभा की मुलाकात जब डॉ. सर्राफ से होती है तो प्रभा डॉ. सर्राफ के प्रेम में खो जाती हैं। प्रभा को डॉ. सर्राफ पहले से ही शादीशुदा दो बच्चों के पिता होने के बावजूद प्रभा को डॉ. सर्राफ अच्छे लगते थे। प्रभा को डॉ. सर्राफ ने साफ साफ बता दिया की वो उससे शादी नहीं कर सकते।

प्रभा इस बात से राजी थी की डॉ. सर्राफ उनके प्रति समर्पित हैं। डॉ. सर्राफ व प्रभा प्रतिदिन मिलते। प्रभा हमेशा उनके क्लिनिक आ जाती धीरे–धीरे उन दोनों में सैक्स संबंध स्थापित हो गये मगर दोनों के संबंध काफी अच्छे रहे। डॉ. सर्राफ ने कभी प्रभा के पास पैसों की कमी नहीं आने दी उसे अपने पास ही मकान दिला दिया।

जब डॉ. सर्राफ ने अपनी किसी बीमारी से आहत होकर कोई बात प्रभा को बताई तो प्रभा खूब रोई। डॉ. सर्राफ बिमार रहने लगे और डॉ. सर्राफ की मृत्यु के बाद प्रभा काफी टूट गई।

जब प्रभा ने व्यापार करने के बारे में सोचा उस समय उसके सामने काफी परेशानियों आई मगर प्रभा ने उनका सामना किया प्रभा की व्यापार में किसी ने मदद नहीं की डॉ. सर्राफ ने भी मना कर दिया कि व्यापार करना औरतों के बस की बात नहीं मगर प्रभा दिन–रात कारखानों में कारीगरो के साथ काम–सिखती सैम्पल तैयार करती आर्डर लेने दिन–भर घूमती तब कही जाकर एक दो ऑर्डर मिलने शुरू हुए।

निष्कर्षः–

प्रभा इस आत्मकथा के माध्यम से स्त्री की विवशता समाज में उसकी स्थिति पुरुष प्रधान मानसिकता को प्रकट करते हुए स्त्री को एक ऐसे रूप में देखा है कि वह मात्र भोग्या नहीं उसके शरीर पर उसका स्वयं का अधिकार हैं।

प्रभा खेतान ने जो संघर्ष लड़ा उससे उसके जीवन की घनिभूत सफलताएँ प्रकट होती हैं। अपने आप को समाज में खड़ा करने के लिए प्रभा परिवार या किसी पुरूष पर आश्रित नहीं होती वह अपने पुरुष मित्र डॉ. सर्राफ की कमाई को भी नहीं छूती अपितु स्वयं लैदर का व्यवसाय शुरू करती है और उसको अंतराष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाती है उसकी प्रतिष्ठा न केवल एक उद्योगपति के रूप में होती हैं अपितु समाज में अपनी पहचान भी बनाती है वह कलकत्ता चौम्बर ऑफ कामर्स की अध्यक्षा चुनी जाती है जो पुरुष प्रधान समाज के सामने बड़ी चुनौती हैं। अस्तु सम्पूर्ण आत्मक्या यह चरितार्थ करती है स्त्री को अपना संघर्ष स्वंय लड़ना पड़ेगा उसके लिए पुरुष के आश्रय की या उसके दया को अब जरूरत नहीं लेकिन यह सब कुछ सामाजिक दायरे में ही संभव हैं। वह जिन्दगी भर अन्या रही लेकिन अनन्या बनकर उन्होंने अपने पुरुष मित्र के संबंधों के प्रगाढ़ता को सिद्ध किया।

वस्तुतः यह कृति प्रभा खेतान की आत्मकथा नहीं अपितु स्त्री पीड़ा का ऐसा दस्तावेज है जो बाजारवाद, उपनिवेशवाद, पुरूष मानसिकता को चुनौती देकर स्त्री की अस्मिता को सिरे से सिद्ध करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. ‘अन्या से अनन्या’ (आत्मकथा)

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 46-51
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

साहित्य और समाज का अंत:संबंध

डॉ.विक्रम बालकृष्ण वारंग, हिन्दी विभाग प्रमुख,
डी.बी.जे.महाविद्यालय, चिपलून, रत्नागिरी - ४१५ ६०५

सारांश

साहित्य और समाज का अटूट संबंध है | दोनों ही एक दूसरे के पूरक होते है | उत्तम साहित्य जीवन के शाश्वत मूल्यों और जीवन चरित्र के निर्माण हेतु आवश्यक तत्वों को समाज को प्रदान करता है | साहित्य समाज में व्याप्त कुरीतियाँ जैसे- अनैतिकता, व्यभिचार, अराजकता आदि को उजागर करता है | वह जनमानस के अनुभवों और संवेदनाओं को प्रकट करता है | साहित्य को समाज का सही मार्गदर्शन करना चाहिए | उसके उत्थान में और उसकी आकांक्षा को स्वर देने में सहभागी बनना चाहिए | अपने पाठकों को उद्देश्यविहीन मनोरंजन की ओर ले जाना अथवा जीवन से हटाकर कोरी कल्पना की दुनिया में भटकाना अच्छे साहित्य का उद्देश्य नहीं हो सकता | आज विश्व में धार्मिक कट्टरता, सांप्रदायिकता, अलगाववाद तथा आतंकवाद आदि गंभीर समस्याओं के निराकरण के लिए साहित्य प्रयत्नशील है | साहित्यकार साहित्य का सृजन अपने स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि समाज के उपयोग के लिए करता है | प्राचीन काल से आज तक साहित्यकार समाज के प्रत्येक परिवर्तनों को देखते आया है | इसी से यह प्रमाणित होता हैं कि साहित्य का सृजन एवं समाज की भूमिका एक दूसरे के पूरक है | मानव सभ्यता के विकास में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है |

बीज शब्द - साहित्य, समाज, देश का पथ प्रदर्शन , मानवीय भावनाओं , मानव कल्याण ,लोकमंगल, समाज की रीति-नीति, धर्म-कर्म, आचार-व्यवहार समानता, सौंदर्य, प्रेम, स्नेह, मातृत्व, देशप्रेम, विश्वबंधुत्व |

प्रस्तावना -

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है | समाज में रहकर वह जो कुछ देखता है,अनुभव करता है, उसे अपनी रचना के माध्यम से साहित्य में प्रस्तुत भी करता है | कोई भी साहित्य सामाजिक चेतना से अछूता नहीं रह सकता | साहित्य और समाज एक-दूसरे के पूरक है | यह साहित्य मानव

जीवन के विविध अनुभवों, समस्याओं, सीमाओं, और संभावनाओं में से ही अपने लिए सामग्री का चयन करता है | यही साहित्यसृजन समाज और देश का पथ प्रदर्शन करता है | साहित्य एक ऐसा माध्यम है,जिससे मानव मस्तिष्क का विकासक्रम तथा मानवीय भावनाओं का परिचय मिलता है | परोक्ष रूप में साहित्य मानव सभ्यता के विकास का सूचक भी है | साहित्य में मानव मात्र का हित होता है | मानव कल्याण की भावना तथा लोकमंगल साहित्य से ही होता है | इसी कारण राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा है -

"अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है,
मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है |"

साहित्यकार एक समाज का ही अंग होता है | उसकी शिक्षा-दीक्षा समाज में ही होती है | उसे सामाजिक जीवन में ही अपने भावों तथा अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की प्रेरणा भी मिलती है | इसलिए यह तत्कालीन समाज की रीति-नीति, धर्म-कर्म,आचार-व्यवहार तथा अन्य परिस्थितियों में प्रभावित होकर अपने साहित्य के लिए प्रेरणा ग्रहण करता रहता है | साहित्य में वैयक्तिक अनुभूतियों के साथ ही सामाजिक जीवन की झाँकी भी देखने को मिलती है | "साहित्य और समाज के गहरे संबंधों के आधार पर ही समाज में जो संस्कार, रीति-रिवाज व नियम विशेष प्रचलित होते है,उनसे साहित्य अछूता नहीं रह सकता | अतः जो नियम वह संस्कार समाज के है वही साहित्य के भी हो जाते है | यही कारण है कि हम साहित्य के द्वारा काल विशेष के समाज तथा उसके यथार्थ के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते है |"१

साहित्य शब्द की उत्पत्ति :-

'साहित्य' शब्द की उत्पत्ति जानने के लिए इसके इतिहास पर हमें प्रकाश डालना होगा | माना जाता हैं कि 'साहित्य' शब्द का प्रचलन सातवीं-आठवीं शती से हुआ है | इससे पहले संस्कृत में साहित्य के स्थान पर 'काव्य' शब्द का प्रयोग मिलता है | भारतीय परंपरा में साहित्य के लिए 'वाङ्:मय जैसे शब्द का प्रयोग प्राचीन काल में होता था | संस्कृत ग्रंथों में 'वाङ्:मय और काव्य' शब्दों के अंतर्गही उन समस्त विधाओं का समावेश है,जिन्हें आज हम सामान्यत: साहित्य नाम से जानते है | साहित्य शब्द के व्युत्पत्ति के संबंध में विभिन्न मत निम्न प्रकार से है -

१.तक्षशिला आधुनिक हिंदी शब्दकोश के अनुसार 'साहित्य'-i किसी वस्तु या विषय के संबंध में लिखित विवरण, मुद्रित सामग्री | ii गद्य या पद्य में जीवन को अभिव्यक्त करनेवाली शैलीबद्ध रचना जो पाठक वर्ग का रसास्वादन कराती है |२

२. साहित्य का अर्थ हितेन सह सहित लगाते हुए हम कहेंगे कि साहित्य वही हैं, जिससे मानव-हित का संपादन हो |३

साहित्य की परिभाषा :-

'साहित्य' की परिभाषा पर शताब्दियों से विचार होता आ रहा है और इसे स्पष्ट शब्दों में निरूपित करने की अनेक विद्वानों ने कोशिश की है | यहाँ हम उन तमाम परिभाषाओं को समझने की कोशिश करेंगे |

१. आचार्य भामह - "शब्दार्थों सहितौ काव्यम् |"४ अर्थात् शब्द और अर्थ का सहित भाव काव्य है|

२. आचार्य विश्वनाथ -"वाक्यम् रसात्मक काव्यम |"५ अर्थात रसयुक्त वाक्य ही काव्य है |

३. मुंशी प्रेमचंद - "मेरे विचार से साहित्य जीवन की आलोचना है | चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करना चाहिए |"६ प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना एवं व्याख्या करनेवाला मानते है | साहित्य को स्पष्ट करते हुए वे आगे कहते हैं कि साहित्य मस्तिष्क की वस्तु नहीं हृदय की वस्तु है,जहाँ ज्ञान और उपदेश असफल होता है वहाँ साहित्य बाजी ले जाता है |

४. डॉ.गोविंद त्रिगुणायत -"जीवन और जगत के गद्यात्मक सौंदर्य की भावमयी झाँकी साहित्य है |"७

समाज जीवन के प्रत्येक सुख-दुख एवं समस्याओं का चित्र समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है | समाज का उत्थान-पतन, समाज की रीति-नीतियाँ, रूढी-परंपराएँ, आस्था-विश्वास, संस्कृति आदि स्पष्ट रूप में साहित्य पर अपना प्रभाव डालते ही है | समाज में हो रही विसंगति-विकृति, प्रगति, उपलब्धि, अभाव, विषमता, समानता, सौंदर्य, प्रेम, स्नेह, मातृत्व, देशप्रेम, विश्वबंधुत्व जैसे विविध पक्षों को साहित्यकार अपने साहित्य में सूचित करते है | कवि अथवा लेखक समाज का प्रतिनिधित्व करते है | अतः वे लोग समाज को अपने नविन विचार प्रदान करते रहते है | साहित्य और समाज के संबंधों पर प्रकाश डालते हुए बाबू गुलाबराय लिखते है - "कवि या लेखकगण अपने समाज के मुख और मस्तिष्क दोनों होते है | कवि की पुकार समाज की पुकार होती है,वह समाज के भावों को अपनी वाणी का बल ही नहीं देता वरन् कभी-कभी उन्हें नई दिशा भी देता है | कवि समाज के भावों को व्यक्त कर सजीव और शक्तिशाली बना देता है | कवि की बनाई हुई सामाजिक भावों की आदर्श मूर्ति समाज की उन्नायिका बन जाती है | इस प्रकार कवि और लेखकगण समाज के उन्नायक और इतिहास के विधायक अवश्य होते है,किंतु उनकी भाषा में हमको समाज के भावों की झलक मिलती रहती है | कवि द्वारा हम समाज के हृदय तक पहुँच जाते है | केवल इतना ही नहीं वरन् हमको उन परिस्थितियों का पता लग जाता है,जो समाज को प्रभावित कर वायुमंडल में एक नई लय उत्पन्न कर देती है | समाज के प्रतिनिधि-स्वरूप कवियों और लेखकों के विचार ही संग्रहित हो साहित्य बनाते है|"८

साहित्यकार का व्यक्तित्व समाज का प्रतिनिधित्व करता हुआ दिखलाई देता है | साहित्य हमारे अव्यक्त भावों को व्यक्त करता है | उसमें जीवन के विविध रूप हमारे सामने आते है |

साहित्य और समाज के स्थायी संबंध के फलस्वरुप समाज में विद्यमान संस्कार और वातावरण का प्रभाव भी साहित्य पर अवश्य पड़ता है | साहित्य जीवन और समाज का चित्र ही नहीं उपस्थित करता बल्कि एक सुधारक की भाँति उनकी त्रुटीयाँ भी दूर करता है | साहित्य में जीवन की विशिष्ट अभिव्यक्ति होती है | इस अभिव्यक्ति का मूलाधार जीवन स्वयं है | साहित्य का संबंध व्यक्तिगत रूचि से न होकर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था से होता है | वही जीवन का साहित्य कहलाता है | ऐसे साहित्य से ही वर्तमान और भविष्य की समस्याओं का हल निकाला जा सकता है | सच्चा साहित्य वही है जिसमें समाज का कल्याण हो जो साहित्य सामाजिक, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय समस्याओं पर प्रकाश नहीं डालता तथा उनकी उलझनों को सुलझाने में सहायता नहीं करता वह सच्चा साहित्य नहीं है | साहित्य और समाज के संबंधों को प्रतिपादित करते हुए डॉ.बलदेव वंशी कहते है - “विचार हवा में तैरते नहीं फिरते कि उन्हें पकड़ लिया और कविता में जड़ दिया | वे जीवन यथार्थ की ही उपज होते हैं, और साहित्य कविता में अपने परिवेशगत संदर्भो और अनुभवों से चरितार्थ होते है | जीवन-स्थितियों, सामाजिक संबंधों के संघर्ष से ही स्वरूप ग्रहण करते है |”९

साहित्य का मानव समाज से सीधा संबंध है | दोनों ही एक दूसरे के पूरक होते है | उत्तम साहित्य जीवन के शाश्वत मूल्यों और जीवन चरित्र के निर्माण हेतु आवश्यक तत्वों को समाज को प्रदान करता है | साहित्य समाज में व्याप्त कुरीतियाँ जैसे- अनैतिकता, व्यभिचार, अराजकता आदि को उजागर करता है | वह जनमानस के अनुभवों और संवेदनाओं को प्रकट करता है | साहित्यकार एक कुशल चित्रकार की भाँति समाज के विभिन्न अंगों के माध्यम से उसकी तस्वीरें प्रस्तुत करता है अर्थात साहित्यावलोकन से समाज के विभिन्न रंगों की पहचान की जा सकती है | कहा जाता है कि कलम की ताकत तो साहित तलवार से भी अधिक होती है | यह एक सार्वभौमिक सत्य है | साहित्य की शक्ति असीमित है | साहित्य में वह शक्ति है,जो इसमें निहित विचारधारा के माध्यम से क्रांति उत्पन्न कर सकती है,सोए हुए जनमानस को जागृत करती है |

साहित्य नैराश्य के भँवर में डूबे व्यक्ति को उबारकर उसमें अदम्य साहस बनाया जोश भर सकता है | साहित्य में युग परिवर्तन की क्षमता निहित है | एक अच्छा साहित्य मनुष्य के सर्वांगीण विकास व उसके चरित्र निर्माण में सहायक है | उत्तम पुस्तकों का चयन कर वह ज्ञान की प्राप्ति कराता हैं तथा महान लेखकों के कथानकों व उनके विचारों से प्रेरणा ले सकता है | साहित्य में विश्व के महापुरुषों के जीवन प्रसंग व अनुभव उपलब्ध होते है,जिनका अध्ययन कर मनुष्य आत्मचिंतन कर सकता है | यह आत्मचिंतन व्यक्ति की कमियों को दूर करने में सहायक होता है | दूसरे शब्दों में,व्यक्ति की स्वयं की पहचान के लिए साहित्य का अध्ययन, मनन आवश्यक है | साहित्य के द्वारा वह आत्मज्ञान की प्राप्ति कर सकता है | “ साहित्य व्यक्ति

की अभिव्यक्ति है समष्टि के लिए | वह किसी आदेश पर लाखों हाथों का एक हाथ की तरह उठ जाना नहीं हैं, वह हैं अंत: करण का हजारों लाखों अंत: करण में विसर्जित हो जाना |"१०

साहित्य द्वारा जीवन को जो शक्ति मिलती हैं, वह शक्ति ही एक आदर्श अमूल्य माना जाता है | समाज तथा व्यक्तितत्व को आदर्श बनाना साहित्यिक मूल्यों का ध्येय है | इसी साहित्य को मानव-जीवन का श्रेष्ठ साधन मानते है | साहित्य केवल शब्दार्थ स्वरूप नहीं है | उसका उद्देश्य मानव को मानव बनाना तथा समाज को ऊपर देखने की शक्ति प्रदान करना है | साहित्य के माध्यम से मानव ही मानव को पहचानने की क्षमता रखता है,क्योंकि मानव सामाजिक प्राणी है | वह समाज के बाहर जी नहीं सकता और यदि समाज में न हो तो साहित्य की रचना नहीं हो सकती थी | इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए आ.विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी ने कहा है - "यदि समाज न होता तो साहित्य भी नहीं होता | यदि साहित्य हैं, तो समाज भी होगा | समष्टि ही साहित्य में अभिव्यंजित है | अतः साहित्य और समाज-वृत्त शब्दार्थ भाव के त्रिकोण को आवृत्त किए हुए है |"११

साहित्य समाज से सामग्री ग्रहरण करता है अतः समाज ही साहित्य का निर्माता है | साहित्यकार समाज का एक अंग है | साहित्यकार जिस विचार को प्रस्तुत करता है, वह समाज को संजीवनी शक्ति देता है | साहित्य समाज जीवन का मार्गदर्शक तथा पथ-प्रदर्शन है | हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टिपात करने से साहित्य और समाज के संबंधों का प्रत्येक प्रमाण मिलता है | वीरगाथा कालीन समाज का प्रतिबिंब तत्कालीन साहित्य पर स्पष्ट रूप से पडा है | आदिकाल में शौर्य और बलिदान की भावना थी | वीरयोद्धा प्राणोत्सर्ग करना सामान्य बात समझते थे | फलस्वरूप वीरगाथा काव्यों की रचना हुई | रासो ग्रंथ की पंक्ति-पंक्ति में तलवारों की झंकार और वीरों की हुँकार भरी है | परवर्ती काल में मुगलों के आक्रमण से हिंदू जनता पीड़ित हो गयी थी | इस कारण कबीर, सूर और तुलसी आदि भक्त कवियों ने भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया तथा सामाजिक समन्वय की भरपूर चेष्टा की | रितिकालीन राजाओं की विलासप्रियता बिहारी, मोतीराम और बोधा की पंक्तियों में झलकती हैं | कबीरदास,गोस्वामी तुलसीदास, मलिक मुहम्मद जायसी, महात्मा सूरदास,मीराबाई आदि ने अपनी रचनाओं से नए समाज की स्थापना कर दी थी | ये कवि न केवल लेखनी चलाते थे वरन् समाज-सुधारक भी थे | इसी प्रकार केशव, बिहारी, मतिराम, प्रेमचन्द, पंत,जयशंकरप्रसाद,महादेवी वर्मा जैसे साहित्यकारों की रचनाओं ने लोक-जीवन पर गहरा प्रभाव डाला है | इनकी रचनाएँ और अभिव्यक्तियाँ लोक-मानस को नयी प्रेरणा देती है | भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और रामधारीसिंह 'दिनकर' आदि, के काव्य ने अंग्रेजी हुकुमत के खिलाफ देश में क्रांति की,राष्ट्रीयता की ज्वाला प्रज्वलित की थी | भारत का स्वतंत्रता संग्राम देशभक्ति का ज्वार, स्वतंत्रता की प्राप्ति और स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज की दशा-दिशा आदि आधुनिक और

समसामयिक हिंदी साहित्य में पूर्णतया प्रतिबिंबित होता आ रहा है | साहित्य केवल राजनीतिक परिवर्तन का ही नहीं, अपितु धार्मिक और सांस्कृतिक क्रांतियों का भी मार्गदर्शन किया है |

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि साहित्य और समाज का अटूट संबंध है | साहित्य को समाज का सही मार्गदर्शन करना चाहिए | उसके उत्थान में और उसकी आकांक्षा को स्वर देने में सहभागी बनना चाहिए | अपने पाठकों को उद्देश्यविहीन मनोरंजन की ओर ले जाना अथवा जीवन से हटाकर कोरी कल्पना की दुनिया में भटकाना अच्छे साहित्य का उद्देश्य नहीं हो सकता | आज विश्व में धार्मिक कट्टरता, सांप्रदायिकता, अलगाववाद तथा आतंकवाद आदि गंभीर समस्याओं के निराकरण के लिए साहित्य प्रयत्नशील है | साहित्यकार साहित्य का सृजन अपने स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि समाज के उपयोग के लिए करता है | प्राचीन काल से आज तक साहित्यकार समाज के प्रत्येक परिवर्तनों को देखते आया है | इसी से यह प्रमाणित होता हैं कि साहित्य का सृजन एवं समाज की भूमिका एक दूसरे के पूरक है | मानव सभ्यता के विकास में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है |

संदर्भ ग्रंथ सूची -

१. डॉ.गोविंद त्रिगुणायत, शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत, पृ.सं.२५
२. सं.गोविंद चातक, तक्षशीला आधुनिक हिन्दी शब्दकोश, पृ.सं.४९४
३. गुलाबराय, काव्य के रूप, पृ.सं.०३ से उद्धृत
४. सं.मधु खराटे, काव्यशास्त्र विविध आयाम, पृ.सं.१२ से उद्धृत
५. डॉ.जालिंदर इंगले, सुबोध काव्यशास्त्र, पृ.सं.२१ से उद्धृत
६. मुंशी प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, पृ.सं.१०
७. डॉ.गोविंद त्रीगुणायत, शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत, पृ.सं.०६
८. गुलाबराय, काव्य के रूप, पृ.सं.५
९. डॉ.बलदेव वंशी, समकालीन कविता:वैचारिक आयाम, पृ.सं.२८
१०.अज्ञेय, साहित्य और समाज परिवर्तन कि प्रक्रिया, पृ.सं.८२
११. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाङ्:मय सृष्टि, पृ.सं.९२

भ्रमणध्वनि - ८०८७३५२४६४ warangvikram@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 52-55
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'प्रियप्रवास' काव्य में विप्रलंभ मधुर रस–विधान–प्रतिष्ठा

दिनेश कुमार बड़ोला, शोधार्थी (हिन्दी),
जय नारायण व्यास, विश्वविद्यालय, जोधपुर

भारतीण धर्मशास्त्र मे राम एवं कृष्ण का ऐक्य भी अपने अभूत पूर्व रूप मे प्रतिपादित है। राम मूल में कृष्ण रूप में विशेषण है। श्री राधाकृष्ण का युगलरूप में सच्चिदानंद रूप है। किन्तु विग्रह रूप में भक्तों एवं रसिकों को रस सिक्त कर दिया है। 'रसो वै सः।' अर्थात् रस आनंद स्वरूप है। लोक में रास लीला के रूप में 'युगल रूप' ही सृष्टि का सृजन है। रास लीला में श्रीकृष्ण के रूप, धाम–इच्छा–क्रिया–ज्ञान एवं नित्यानित्य सभी तत्वों का अद्‌भुत सामन्जस्य भी विद्यमान है। श्रीकृष्ण की सभी लीलाओं में रासलीला को रस रूप माना है। श्रीकृष्ण की सभी लीलाओं में रासलीला को रस रूप माना गया है। इसमें उनका आस्वाद्य एवं आस्वादक दोनों रूपों में चित्रित किया गया है। रास लीला का रूप रस प्रसरणशील भी है और संवर्धन रूप भी। **रास लीला के आदि स्रोत के रूप में नाद रूप भी स्वीकार किया गया है।** लोक–हित एवं आनन्द विस्तार के कारण इस लीला को परम आनन्ददायक माना गया है।

रास लीला में ब्रज की गोपियों का संगोपांग वर्णन किया गया है। उन्हें स्वरूप भूता, ऋचारूपा एवं श्रुतिरूपा विविध स्वरूपों मे साधन–सिद्धा के सौभाग्य स्वरूप में विश्लेषित किया गया है।

प्रेमा–लीला का प्रमुख प्रसारक आधार तत्व है – प्रेम। रास लीला में **'मधुरारति–संयुक्त परम उज्ज्वल रस'** रसेश्वर श्री कृष्ण एवं राधा का आलम्बन है। यह 'मधुर रस' दिव्याति दिव्य रस है। इसके उद्दीपन रूप में रूप, गुण, नाम, चरित एवं मण्डनादि को प्रतिष्ठित किया गया है। इसका अनुभाव के रूप में रति कार्य ही सुविख्यात है।

अलंकार, उद्‌भास्कर तथा वाचिक अनुभव **'मधुर रस'** के ही होते हैं। इसमें नायक नायिका का आलाप–विलाप–अनुलाप–संदेश, अतिदेश–उपदेश–निर्देश तथा प्रलाप अनुभावों को वाचिक तथा अंग से उत्पन्न हाव भावादि उत्पन्न लीला विलासादि को अलंकार कहते है। रास लीला में व्याप्त **'मधुर रस'** के अन्तर्गत स्तम्भ, अमर्ष, स्वेद, क्रोध, हर्ष, रोमांच, कम्प, वैवर्ण्य तथा अश्रु आदि सात्विक भावों का प्रयोग होता है। व्यापक रूप में मधुर रस रास लीला अन्तर्गत विप्रलम्भ एवं संभोग रूप में दृष्टिगोचर होता है। 'रास लीला का मूल रस है।'[1]

भोग लीलाओं को विभिन्न योनियों में आनंद के रूप में चित्रित किया गया है। मनुष्य, गन्धर्व, देव, पितर, इन्द्र, वृहस्पति एवं प्रजापति के आनन्द रूपों को उल्लेखित किया गया है। मनुष्य के एक सौ आनंद को गन्धर्वों के एक आनन्द के बराबर माना है, देव जातियों के एक सौ आनन्दो में पितरों का एक आनन्द है। पितरों के एक सौ आनन्द में अजानज नाम देवताओं का एक आनन्द है। पितरों के एक सौ आनन्द में अजानज नाम देवताओं का एक आनन्द है। अजानज नामक देवताओं के सौ आनन्द के बराबर कर्मदेव नामक देवताओं का एक आनन्द है। देवताओं के सौ आनन्द के बराबर इन्द्र का एक आनन्द है। इन्द्र के सौ आनन्द के बराबर एक वृहस्पति का आनन्द के बराबर है।

वृहस्पति के इस प्रकार के सौ आनन्द के बराबर एक प्रजापति (सूर्य), सौ सूर्य (प्रजापति) के बराबर एक ब्रह्मा का आनन्द जिसे ब्रह्मानंद कहा जाता है। यही स्वरूप एकोअहंबहुस्याम्। इन लीलाओं का कर्त्ता सच्चे अर्थों में इन्द्र था कालान्तर में इन्द्र की लीलाओं को गोपन कर दिया गया। इसीलिए हरिवंश पुराण में इन रास लीलाओं को **'हल्लीसक्र'**[2] कहा गया है।

इन्द्र पृथ्वीपति रूप में अवतरित होने के कारण कृष्ण नरदेव पृथ्वीपति कहलाया था। हरिवंश पुराण में 'रास' के लिए छलकपट[3] एवं चक्र (योनि)[4] शब्दों का प्रयोग हुआ हैं।

अर्थात् इन्द्र के सम्पूर्ण शरीर पर U आकार से चक्रवाल से अलंकृत युगनद्ध रूप था।

यमुना के सुन्दर पुलिन पर, चारु चन्द्रिका से आलोकित, परम रम्य वनस्थली पर श्री कृष्ण ने परम आनंदित होकर ब्रज–गोपिकाओं के साथ उनके कन्धों में अपनी भुजाओं को डालकर लीला शुरू की।[5]

श्रीकृष्ण के साथ रास क्रीड़ा में तन्मय उन **कलकण्ठी गोपियों** के मुख से आनन्दातिरेक में उच्च स्वर से जो गायन और नृत्य हो रहा था, उससे समस्त भूमण्डल गुंजायमान हो गया था।[6]

"शक्र की लीला को रासोत्व, रास क्रीड़ा नामों से भी अभिहित किया गया है।"[7]

'जब श्रीकृष्ण सृष्टि में अंतर्धान हो गये तभी गोपियाँ उत्मत्त प्रलाप करती हुई भगवान की उन सभी लीलाओं को करने लगी।' यहाँ श्रीकृष्ण द्वैपायन बदरायण वेदव्यास लिखते हैं –

इत्युन्मत्तवाचो गोप्यः कृष्णान्वेषण कातराः।
लीला भगवतस्तास्ताः ह्युचक्रुस्तदात्मिका।।[8]

रास की परम्परा अतीव प्राचीन है। संगीत आचार्यों ने रस या रास की उत्पत्ति नाट्यशास्त्र से मानी है। भरत मुनि, अभिनवगुप्त, शारंगदेव प्रभृति रचनाओं से यह ज्ञात होता है कि रास का प्रादुर्भाव ब्रज में श्रीकृष्ण द्वैपायन द्वारा किया गया। रास शब्द रस से बना है।

डॉ. मुंशीराम शर्मा – रासलीला संबंधी विचार इस प्रकार हैं –

रास लीला आनन्द रूप है। रस रूप है आनन्दस है ......

वैष्णवों की रास लीला इसी आनन्द भावना के अनुभव करने का नाम है जो रास लीला एक प्रकार का रूपक है।[9]

अतः अखिल रसामृतमूर्ति, परात्पर, ब्रह्म श्री कृष्ण रासलीला के उत्स हैं।

ब्रह्मलीला को उभयात्मक स्थिति में चित्रित किया गया है –

प्राकृत–अप्राकृत, लौकिक–अलौकिक, अन्तरंग–बहिरंग, तथा नित्य एवं अनित्य।

ब्रह्म श्रीकृष्ण लीला का केन्द्र गोलोक है जिसमें रास लीला नित्य है इन्हें निर्गुण लीला, अप्रकट लीला, तात्विकी लीला, भाव लीला, नित्य लीला, माधुर्य लीला, अन्तरंग लीला आदि विविध नामों से पुकारा जाता है।

सच्चे अर्थों में ब्रह्म श्रीकृष्ण के अन्तर्धान होने पर सत्–चित् एवं आनन्द स्वरूप का विश्लेषण उनकी स्मृति में किया गया है। "भक्त रोते बिलखते, भजते, गाते, रमु–क्रीड़ा करते, रटते जपते भावों से आनन्द स्वरूप की लीलाओं को नृत्य आदि द्वारा याद करते हैं। यह श्रीकृष्ण के प्रति श्रद्धा भाव है। राधा एवं कृष्ण अभेद तत्व हैं। हे सुन्दरी विश्व की रचना एवं पालन बिना तुम्हारे, कभी संभव नहीं होता है।"[10] हल्लीसक्र श्रीकृष्ण द्वारिकापुरी में सोलह हजार एक सौ आठ महिषियों के पति माने गये हैं। सच्चे अर्थों में ये इन्द्र की पत्नियाँ थीं। 1. रुक्मणी 2. सत्यभामा 3. जाम्बवती 4. कालिन्दी 5. शैव्या 6. मुद्रा 7. कौशल्या 8. माद्री।

उनकी लीला परकिया नायिका के रूप में थी। वे नायिका जो धर्म मर्यादा की चिंता न करते हुए आसक्ति स्वरूप पर पुरुष को आत्मसमर्पण कर देती है और विवाह विधि में आबद्ध नहीं होती है। इनके दो भेद है – 1. कन्या 2. प्रौढा। कन्या गोपियाँ श्री कृष्ण में संलग्न रहती हैं उन्हें कन्यका का भी कहा जाता है। साथ ही जो श्रीकृष्ण में आसक्त रहकर उनके साथ रमण करती हैं वह समुत्सुका प्रौढ़ा वल्लभायें कहलाती हैं।

'उज्ज्वलनीलमणि'[11] में इनको व्याख्यायित किया गया है।

जब गोपाल श्रीकृष्ण सृष्टि मे अन्तर्धान हो जाते हैं तो ब्रजांगनाएँ उनके विछोह में पूर्वराग, मान, प्रेम–वैचित्र्य एवं प्रवास रूप में व्यंजित भाव उनकी अलौकिक सत्ता को याद करती हैं। तत्सुखी संभोग को राधाकृष्ण के परस्पर 'कामोत्सव' का प्रतीक माना है। इस मधुररस को शृंगार रस तथा उज्ज्वल रस भी कहा गया है। मधुरारति को ही रति प्रियतारति समर्थारति स्थायी भाव माना गया है।

यहाँ पर वियोग से युक्त रस को विप्रलम्भ मधुर रस कहा गया है।[12]

वैष्णवचार्यों ने मधुर रस में ही विप्रलम्भ रस की प्रतिष्ठा की हैं। "प्रिया एवं प्रियतम के प्रथम मिलन से पूर्व अथवा मिलन के उपरांत परस्पर आलिंगन आदि की अप्राप्ति में जिस भाव का स्फुरण होता है उसे विप्रलम्भ कहते हैं।"[13]

विप्रलम्भ शृंगार के चार भेद हैं – 1. पूर्वराग 2. मान 3. प्रेम वैचित्र्य 4. प्रवास।

विप्रलम्भ शृंगार मे **पूर्वराग** प्रथम भेद है। इसमें मिलन के पूर्व श्रवण तथा दर्शन आदि से उत्पन्न जो रति प्रिया प्रियतम के हृदयों में स्फुरित होकर विभावादि के सम्मिश्रण से आस्वाद्य होती है उसे पूर्व राग कहते हैं। इसमें रास लीला में समुत्सुका गोपियों में यह पूर्वराग दिखाई देता है।

बहु–विनोदित थी ब्रज–बालिका
तरूणियाँ सब थी तृण तोड़ती।
बलि गई बहु बार वयोवती।
छवि विभूति विलोक ब्रजेन्दु की।[14]

विप्रलम्भ शृंगार का दूसरा अंग **मान** है। परस्पर आशक्त तथा किसी एक स्थान पर विद्यमान प्रिया–प्रियतम के अभीष्ट आलिंगन एवं दर्शन आदि के निरोधक भाव को मान कहा जाता है। यही मान कभी–कभी प्रणय से उत्पन्न होता है और कभी स्नेह से प्रादुर्भाव होता है। मधुर रस संवर्द्धन मे यह मान भी कारण होता है। रासलीला के चरम उत्कर्ष स्वरूप नित्य विहार में कभी कभी यह मान परिलक्षित होता है –

"यह विचित्र–सुता वृषभानु की
ब्रज–विभूषण में अनुरक्त थी।
सहृदया यह सुन्दर–बालिका
परम–कृष्ण–समर्पित–चित्त थी।"[15]

वियोग शृंगार का तृतीय भेद **'प्रेम वैचित्र्य'** है। प्रेम के उत्कर्ष के वशीभूत होकर प्रिय के समीप होने पर भी विश्लेषण के भय से जो आर्तीपीड़ा है उसे प्रेम वैचित्र्य कहते हैं। इस प्रकार प्रेम के द्वारा हृदय में अन्यथा भाव का स्फुरण प्रेम वैचित्र्य कहा जाता है। श्रीकृष्ण के समीप रहने पर भी जब श्रीकृष्ण के सामीप्य की अनुभूति नहीं होती तभी यह प्रेम वैचित्र्य होता है –

"हृदय चरण मैं तो चढ़ा ही चुकी हूँ।
सविधि–वरण की थी कामना और मेरी।
पर सफल हमें सो है न होती दिखाती।
वह कब टलता है भाल में जो लिखा है।"[16]

मधुर विप्रलम्भ शृंगार का चतुर्थ भेद है – **प्रवास**।

प्रिय–प्रियतम के वियोग के उपरान्त देशान्तर से संयोग में जो व्यवधान है उसे ही प्रवास कहा जाता है। यह अन्तर गाँव, वन तथा स्थान आदि से होता है। भक्ति अमृत सिंधु में वर्णित प्रवासः संग विच्युतिः के अनुसार संग का च्युत हो जाना ही प्रवास कहलाता है। मधुर रस में संयोग–वियोग की एक ही स्थिति होती है। यह स्थिति लीला भेद के कारण होती है। यद्यपि प्राकृत एव प्रकट लीला में अक्रूर के अनुरोध पर श्रीकृष्ण मथुरा गये थे, तथापि नित्य रूप में वे सदा अपने परिकरो प्रियाओं के साथ वृन्दावन में रास लीला रत रहे हैं।

जो तू जाके विशद रथ में बैठ जाती कहीं भी।
किंवा तू जो युगल तुरगों के तनों में समाती।
तो तू जाती प्रिय स्वजन के साथ ही शांति पाती।
यों हो हो के भ्रमित मुझ सी भ्रांत कैसे दिखाती।
हां! मैं कैसे निज हृदय की वेदना को बताऊँ।
मेरे जी को मनुज तन से ग्लानि सी हो रही है।
जो मैं होती तुरंग अथवा यान ही या ध्वजा ही।
तो मैं जाती कुँवर वर के साथ क्यों कष्ट पाती।।[17]

इसी प्रकार विरह की अश्रु, रोमांच, वेपथु, वैवर्ण्य, स्वरभंग एवं जड़ता आदि दशाओं को राधा प्राप्त होती है –

ला के फूले कमल दल को श्याम के सामने ही।
थोड़ा–थोड़ा विपुल जल में व्यग्र हो हो डुबाना।
यो देना ऐ भगिनी जतला एक अंभोजनेत्रा।
आँखों को हो विरह–विधुरा वारि में बोरती है।[18]

हरिऔध ने षोड़श सर्ग में वियोगिनी राधा की व्यथा को आघात पहुँचाया है जो वेदना मुखरित हुई है –

मैं नारी हूँ, तरल–उर हूँ, प्यार से वंचिता हूँ।
जो होती हूँ विकल, विमना, व्यस्त, वैचित्र्य क्या है ?[19]

हरिऔध जी ने श्रीकृष्ण की ब्रजलीलाओ एवं कमनीय प्रसंगों को बड़े ही लालित्य पूर्ण शैली में उद्घाटित किया है। उनके विरह संबंधी अंश मार्मिकता एवं नवीन उद्भावनाओं से ओतप्रोत हैं। इनके काव्य में शब्द दोष एव वाक्य दोष भी देखने को मिलता है।

संदर्भ सूची

1. विष्णुयामल, रसानां समूहो रासः। 2/36/1
2. हल्लीसक्रं तु स्वयमेव कृष्ण शघोषं नरदेव पार्थ।।
3. फलेनिगन्धोत्तम् अवन्ति वीराः छालिक्य गान्धर्वम् अथा हृतम् च
4. एवं स कृष्णो गोपीनां चक्रवालैरलकृतः। शारदीषु सचंद्रासु, निशासु मुमुदे सुखी। हरिवंश पुराण, विष्णु पुराण, अनु. 20
5. तत्रारंभत गोविन्दो रास क्रीड़ा मनुव्रतै। स्त्री रत्नैरन्वितः प्रीतरन्योन्याबद्ध बाहुभि – श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय 33, पृ. 165
6. बलयानां नूपुराणां किंकिणीनां च योषिताम्। गायन्त्यक्तं तडिव इव वा मेघ चक्रे विरेजु।
7. उच्चै जगुर्नृत्य माना रक्त कण्ठयो रतिप्रियाः। कृष्णाभिमर्शमुदिता यद् गीतेदमावृत्तम्। – श्रीमद्भागवत पुराण दशम स्कन्ध, अध्याय 1 पृ. 167
   'प्रियानुकरणं' लीला रासोत्व अपि निगद्यते।
8. श्रीमद्भागवत पुराण, अध्याय 20, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ. 162
9. डॉ. मुंशीराम शर्मा, सूरदास का काव्य वैभव, लीलातत्व, पृ0 171–172
10. मया विना त्वं निर्जीवा चदृश्य अहं त्वया विना। त्वया विना भवं कर्तुं नालं सुन्दरि निश्चितम्।। ब्रह्मवैवर्त श्रीकृष्ण जन्म खंड, अध्याय 6, पृ. 64
11. तास्तस्य वल्लभाः अनूढ़ा कन्यका प्रोक्ता सलज्जा पितृपालिताः।
    सदा संभोग लालसा गोपैर्व्यूढा अपि हरि प्रौढ़ा वल्लभास्तस्य ब्रजनार्योऽप्रसूतिकाः।।
    उज्ज्वलनीलमणि, श्रीकृष्ण वल्लभा प्रकरण उद्धृत पृ. 178
12. यूनोरयुक्तो भावो युक्ततोर्वाभ यो मिथः। उज्ज्वलनीलमणि शृंगार भेद प्रकरणा पृ. 162
13. अभीष्टालिंगनादीनामनवाप्तौ प्रकृष्यते। स विप्रलम्भः विज्ञेयः संभोगोन्नतिकारकः। उज्ज्वलनीलमणि शृंगार भेद प्रकरण, पृ. 172
14. प्रियप्रवास–प्रथम सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 53
15. प्रियप्रवास–चतुर्थ सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 82
16. प्रियप्रवास–चतुर्थ सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 86
17. प्रियप्रवास पंचम सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 100
18. प्रियप्रवास षष्ठ सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 53
19. प्रियप्रवास षोड़श सर्ग, पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 268

मो. 9079000064
ईमेल : dineshkumarbarola@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 56-62
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

माध्यमिक छात्रों की नागरिक जागरूकता

डॉ. निबेदिता प्रियदर्शनी, सहायक प्रोफेसर (शिक्षा)
रानी धर्म कुँवर सरकार. डिग्री कॉलेज खानपुर, दल्लावाला, जिला-हरिद्वार-247663

सारांश

शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य शिक्षा और नागरिक जागरूकता के बीच संबंध का पता लगाना है; छात्रों के बीच नागरिक जागरूकता के विभिन्न पहलुओं का पता लगाना है। वर्णनात्मक सर्वेक्षण पद्धति का पालन किया गया। यादृच्छिक नमूनाकरण तकनीक को अपनाकर उत्तराखंड के हरिद्वार जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय से 140 माध्यमिक छात्रों (लड़के और लड़कियों) से डेटा एकत्र किया गया। डेटा संग्रह के लिए स्वयं विकसित नागरिक जागरूकता पैमाने का इस्तेमाल किया गया। प्रतिशत, माध्य, मानक विचलन और 'टी' परीक्षण की गणना करके डेटा का विश्लेषण और व्याख्या की गई। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि जहां तक लोकतंत्र का सवाल है, आधे से ज्यादा छात्र इस शब्द से अवगत थे, लेकिन गणतंत्र, राज्य और लोकतंत्र के विभिन्न संघों जैसे शब्दों के संबंध में, 25 प्रतिशत से भी कम छात्र इस शब्द से अवगत थे। 60 प्रतिशत विद्यार्थी समाजवाद के आधे पहलुओं के बारे में जानते थे, लेकिन शेष विद्यार्थी समाजवाद के पहलुओं के बारे में 25 प्रतिशत से भी कम जानते थे। धर्मनिरपेक्षता के क्षेत्र में, लगभग आधे विद्यार्थी इसके कुछ पहलुओं के बारे में जानते हैं, लेकिन 30 प्रतिशत से भी कम विद्यार्थी अन्य पहलुओं के बारे में जानते थे। 60 प्रतिशत विद्यार्थी न्याय के कुछ पहलुओं के बारे में जानते थे, लेकिन कुछ पहलुओं के बारे में उन्हें औसत जानकारी ही थी। न्याय के अन्य पहलुओं के बारे में केवल आधे विद्यार्थी ही जानते थे। लगभग दो तिहाई विद्यार्थी बंधुत्व के कुछ पहलुओं के बारे में जानते हैं, लेकिन तीन चौथाई विद्यार्थी अन्य पहलुओं के बारे में नहीं जानते हैं। नागरिक जागरूकता में लड़कियों के औसत अंक लड़कों से अधिक थे, लेकिन औसत अंक में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

(मुख्य शब्द: लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, बंधुत्व, नागरिक जागरूकता)

मानव जीवन ईश्वर की अंतिम और सबसे अच्छी रचना है। इसके दो पहलू हैं; एक जैविक और दूसरा पर्यावरणीय, जो समाज से प्राप्त होता है। भारतीय समाज कुछ बुनियादी मूल्यों

को सुनिश्चित करता है, जो सभी व्यक्तियों के जीवन और गतिविधियों का मार्गदर्शन करते हैं। चूँकि भारत एक लोकतांत्रिक देश है और भारत को एक और अविभाज्य बनाए रखने के लिए हमें विरोधाभासी निष्ठाओं को त्यागना चाहिए और जीवन के सभी क्षेत्रों में विशेष रूप से शिक्षा में लोकतांत्रिक और सामाजिक मूल्यों का पालन करना चाहिए। लोकतंत्र को जीवन के सभी क्षेत्रों में सक्षम नेताओं की आवश्यकता होती है। इसमें पहल करने वाले, आत्मविश्वासी, कर्तव्य के प्रति समर्पण और संसाधन संपन्न लोगों की आवश्यकता होती है। एक राज्य में बने रहने के लिए, एक व्यक्ति में सभी नागरिक और लोकतांत्रिक गुण होने चाहिए जैसे कि सहानुभूति, सहयोग, देशभक्ति, सहिष्णुता, त्याग, अनुशासन आदि। भारत के एक लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में स्थापित होने के साथ ही छात्रों में उपरोक्त गुणों को विकसित करना मुश्किल हो गया। हम अपने सभी छात्रों में नागरिक जागरूकता पैदा करके और उन्हें नागरिकता का प्रशिक्षण देकर ही लोकतांत्रिक भारत की स्थापना में सफल हो सकते हैं।

संविधान की प्रस्तावना, किसी क़ानून या विलेख का प्रारंभिक भाग, संविधान और सरकार की प्रकृति, संविधान का स्रोत, संविधान के उद्देश्य और आदर्शों के बारे में प्रत्येक व्यक्ति को पता होना चाहिए। हमारे लोगों को एक नए राष्ट्र के निर्माण के लिए एकजुट करने के लिए जो न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व सुनिश्चित करेगा, छात्रों में नागरिक जागरूकता सबसे आवश्यक है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हर बच्चा कुछ वंशानुगत लक्षणों के साथ इस दुनिया में आता है। ये लक्षण समाज के प्रभाव से संशोधित होते हैं। अपने देश, इसकी सरकार, राजनीति और समाज के प्रति दृष्टिकोण विकसित करने के लिए, नागरिक जागरूकता विकसित की जानी चाहिए। नागरिक जागरूकता अच्छे नागरिक बनाने का विज्ञान है। इस संवैधानिक लक्ष्य को प्राप्त करने और नीति के मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों को यथार्थवादी बनाने के लिए, हमारे छात्रों को पाठ्यचर्या और सह-पाठ्यचर्या गतिविधियों के माध्यम से शैक्षिक अवसर प्रदान किए जाते हैं। यह अध्ययन छात्रों में नागरिक जागरूकता को बढ़ावा देने और इसके माध्यम से हमारे राष्ट्र को समृद्ध बनाने के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

संबंधित साहित्य की समीक्षा

फिंकेल (2013) ने अपने अध्ययन में पाया कि केन्या के नागरिकता शिक्षा कार्यक्रम (एनसीईपी) पर कार्यशाला में भाग लेने वाले प्रायोगिक समूह में नियंत्रण समूह की तुलना में संविधान की सामग्री के बारे में जागरूकता बढ़ने की संभावना थी। इसी तरह, ओवेन एट अल (2011) के निष्कर्ष भी कुछ ऐसे ही हैं कि नागरिकता शिक्षा वाले लोगों को नागरिक मुद्दों पर उन लोगों की तुलना में ज़्यादा जानकारी होती है, जिनके पास नागरिक शिक्षा नहीं होती। अमादु मुसाह अबुदु और मोसेस नैम फ़्यूसेनी (2014) ने अपने अध्ययन में पाया कि नागरिकता शिक्षा वाले लोगों और नागरिकता शिक्षा के बिना लोगों के बीच नागरिक मुद्दों के बारे में जागरूकता के

सामान्य स्तर में काफ़ी अंतर है। इसके अलावा, परिणामों ने संकेत दिया कि नागरिकता शिक्षा वाले लोगों और नागरिकता शिक्षा के बिना सामुदायिक सेवा में भाग लेने की इच्छा रखने वाले लोगों के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है। ब्राउन (2013) ने पाया कि थाईलैंड में लागू किए गए नागरिकता शिक्षा कार्यक्रम प्रोजेक्ट सिटीजन में, इसने युवाओं की राजनीति और समाज के अन्य पहलुओं में शामिल होने की संभावना को बढ़ाया। पॉवेल के.जी., पीटरसन एन.ए., ट्रेटलर पी.सी., लार्डियर डी.टी., जूनियर, राशिद एम., रीड आर.जे. (2021) ने जांच की कि सामाजिक, राजनीतिक नियंत्रण (एसपीसी) को मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण के अंतरवैयक्तिक घटक के एक प्रमुख तत्व के रूप में पहचाना गया है। सामाजिक, राजनीतिक नियंत्रण पैमाना (एसपीसीएस) एक व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला उपाय है और इसे युवाओं (एसपीसीएस-वाई) के बीच उपयोग के लिए संशोधित किया गया है। समुदाय-आधारित शोध के भीतर युवाओं के बीच एसपीसी में उभरती रुचि के मद्देनजर, इस अध्ययन ने एसपीसीएस-वाई के मनोवैज्ञानिक गुणों की जांच करने के लिए आइटम प्रतिक्रिया सिद्धांत (आईआरटी) को लागू किया। लार्डियर डी.टी., ओपरा आई., गार्सिया-रीड पी., रीड आर.जे. (2021) ने अपने अध्ययन में पाया कि समुदाय की अधिक नागरिक भागीदारी और समुदाय की मनोवैज्ञानिक भावना जातीय पहचान और सामाजिक न्याय अभिविन्यास दोनों के माध्यम से अंतरवैयक्तिक और संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण दोनों से जुड़ी हुई है; हालाँकि, कुछ उल्लेखनीय भिन्नताओं के साथ। जातीय पहचान और सामाजिक न्याय अभिविन्यास ने समुदाय की नागरिक भागीदारी और समुदाय की मनोवैज्ञानिक भावना और अंतरवैयक्तिक और संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण दोनों की मध्यस्थता की विएनो ए. और अन्य (2014) ने जांच की कि एसपीसीएस-वाई के दोनों आयामों (नेतृत्व और नीति नियंत्रण) पर उच्च स्कोर वाले माध्यमिक छात्रों में समुदाय, स्कूल से जुड़ाव और कथित एजेंसी की मनोवैज्ञानिक भावना का उच्च स्तर पाया गया। प्रती एफ., एटला. (2022) ने जांच की कि वयस्कों के बीच शॉर्ट सोशल डोमिनेंस ओरिएंटेशन (एसएसडीओ) पैमाने पर कम स्कोर समूह समावेशन और समानता को प्रभुत्व के लिए प्राथमिकता देता है। जैसा कि अपेक्षित था, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, एसएसडीओ पर जितने कम लोग थे, उन्होंने नेतृत्व की स्थिति में महिलाओं का उतना ही अधिक समर्थन किया, अल्पसंख्यकों की रक्षा की और गरीबों की सहायता की। एम.के.पावलोवा और अन्य (2022) ने अपने शोध में कहा है कि अनुभवहीन और अनुभवी दोनों ही व्यक्तियों ने पीपी (राजनीतिक भागीदारी) को सीपी (नागरिक भागीदारी) की तुलना में अधिक नकारात्मक रूप से देखा। अनुभव की गुणवत्ता को भी पीपी के लिए सीपी की तुलना में काफी अधिक नकारात्मक रूप से रेट किया गया था। दूरस्थ पूर्ववृत्तों का सीपी और पीपी के लिए समान प्रभाव था, लेकिन वे ज्यादातर सीपी के लिए ही महत्वपूर्ण थे। वीपीएम के अनुरूप, अनुभव की गुणवत्ता अनुभवी व्यक्तियों में भविष्य

के इरादों का सबसे मजबूत भविष्यवक्ता थी। माना गया व्यवहार नियंत्रण सबसे मजबूत मध्यस्थ था।

अध्ययन के उद्देश्य

- शिक्षा और नागरिक जागरूकता के बीच संबंध का पता लगाना।
- छात्रों के बीच नागरिक जागरूकता के विभिन्न पहलुओं का पता लगाना
- जागरूकता के कारणों का पता लगाना और उन पर काबू पाने के तरीके और साधन सुझाना।
- यह पता लगाना कि क्या लड़कियों में लड़कों की तुलना में अधिक नागरिक समझ है

परिकल्पना

- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के लड़कों और लड़कियों की नागरिक जागरूकता के बीच महत्वपूर्ण अंतर मौजूद है।
- लड़के लड़कियों की तुलना में अधिक नागरिक जागरूकता दिखाते हैं।

विधि और प्रक्रिया

अध्ययन की रूपरेखा: समस्या की वर्तमान स्थिति के मूल्यांकन के लिए इस अध्ययन में विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के साथ वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया।

प्रतिभागी: अध्ययन उत्तराखंड के हरिद्वार जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय से लिए गए 140 माध्यमिक छात्रों (लड़के और लड़कियों) पर आधारित था। दोनों लिंगों के नमूने का प्रतिनिधित्व करने के लिए, सरल यादृच्छिक नमूना प्रक्रिया के बाद लड़कों और लड़कियों की समान संख्या को शामिल किया गया है।

सामग्री: मूल रूप से अन्वेषक द्वारा विकसित और मानकीकृत नागरिक जागरूकता पैमाने को प्रशासित किया गया था। परीक्षण में कई प्रतिक्रियाओं के साथ सत्तर आइटम और साथ ही सात उप-पैमाने शामिल हैं। उप-पैमाने हैं: समाजवाद धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र, न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व।

डेटा संग्रह: अन्वेषक ने व्यक्तिगत रूप से चार इंटर कॉलेजों का दौरा किया और डेटा एकत्र किया।

प्रमुख निष्कर्ष

अध्ययन के निष्कर्षों से पता चला कि:

जहां तक लोकतंत्र का सवाल है, आधे से ज़्यादा छात्र इस शब्द से परिचित थे, लेकिन गणतंत्र, राज्य और लोकतंत्र के विभिन्न संगठनों जैसे शब्दों के बारे में, 25 प्रतिशत से भी कम छात्र इस शब्द से परिचित थे, लेकिन गणतंत्र, राज्य और लोकतंत्र के विभिन्न संगठनों जैसे शब्दों के बारे में, 25 प्रतिशत से भी कम छात्र इस शब्द से परिचित थे।

समाजवाद के क्षेत्र के बारे में, 60 प्रतिशत छात्र आधे पहलुओं से परिचित थे, लेकिन बाकी छात्र समाजवाद के पहलुओं के बारे में 25 प्रतिशत से भी कम जानते थे।

धर्मनिरपेक्षता के क्षेत्र में, लगभग आधे छात्र इसके कुछ पहलुओं से परिचित थे, लेकिन 30 प्रतिशत से भी कम छात्र अन्य पहलुओं से परिचित थे।

न्याय के क्षेत्र के बारे में, 60 प्रतिशत छात्र कुछ पहलुओं के बारे में जानकार थे, लेकिन कुछ पहलुओं के बारे में उन्हें औसत जानकारी ही थी। न्याय के अन्य पहलुओं के बारे में केवल आधे छात्र ही जानते थे।

बिरादरी के क्षेत्र में, लगभग दो तिहाई छात्र कुछ पहलुओं के प्रति जागरूक हैं, लेकिन तीन चौथाई छात्र अन्य पहलुओं के प्रति जागरूक नहीं हैं। नागरिक जागरूकता में लड़कियों का औसत स्कोर लड़कों की तुलना में अधिक था, लेकिन औसत स्कोर के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

सुझाव

राजनीतिक दृष्टि से हमारा देश गंभीर परिस्थितियों में है। भारत ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व परमाणु युद्ध के भय में जी रहा है। सभी में अंतर्राष्ट्रीय समझ का अभाव है। भारत एक लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक समानता तथा बंधुत्व को लोकतंत्र के अंतिम उद्देश्यों के रूप में स्थापित करता है। यह न केवल सफल शासन के लिए बल्कि एक आदर्श राज्य की स्थापना के लिए आवश्यक है, जिसमें बंधुत्व के विकास की अधिकतम गुंजाइश हो। लेकिन दुर्भाग्य से हमारे बच्चों को उचित नागरिक शिक्षा और नागरिक गुणों का प्रशिक्षण नहीं मिल पाता। इसलिए उनमें नागरिक भावना के बारे में जागरूकता बहुत कम है। वे नहीं जानते कि धर्म क्या है, एकता क्या है, निष्ठा क्या है आदि। यदि लोकतांत्रिक राज्य में विश्व बंधुत्व की भावना को मूर्त रूप देना है, तो इसके लिए आवश्यक है कि उसमें मानवीय गुणों का विकास हो। उच्च नैतिक चरित्र, मिलनसारिता, परोपकार, धैर्य, दया, सहानुभूति और भाईचारे जैसे गुणों का विकास शिक्षा के माध्यम से ही संभव है।

शैक्षिक निहितार्थ

अध्ययन के निष्कर्षों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि सरकार को नागरिक गुणों, राष्ट्रीय प्रेरणा, अंतर्राष्ट्रीय समझ के लिए अनिवार्य शिक्षा के लिए प्रयास करना चाहिए, प्रत्येक विषय पर अलग से ध्यान देना चाहिए। नागरिक जागरूकता के विकास के लिए, छात्रों के बीच वांछनीय सामाजिक और नागरिक मूल्यों के विकास पर जोर दिया जाना चाहिए, जिससे वे भविष्य में समाज के वांछनीय सदस्य और देश के आदर्श नागरिक बन सकेंगे। हमारे समाज में सांप्रदायिकता, जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि की भावनाएँ हैं जो राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग में बाधाएँ हैं। शिक्षा का उद्देश्य बच्चों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाना होना चाहिए। सरकार को चित्रों और विज्ञापनों में लड़कियों को अश्लील तरीके से प्रदर्शित करने पर रोक लगाने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए। छात्रों के बीच सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए स्कूलों में राष्ट्रीय और भावनात्मक एकीकरण, देशभक्ति, समानता, सार्वभौमिक भाईचारा, मानवतावाद आदि के उद्देश्यों

पर बहस और चर्चाएँ आयोजित की जानी चाहिए। विद्यालय में विभिन्न सहपाठ्यचर्या गतिविधियों का आयोजन किया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में सहयोग, भाईचारा, प्रेम, त्याग, श्रम की गरिमा आदि प्रवृत्तियों का विकास हो सके। धर्म के प्रति दृष्टिकोण को व्यापक बनाने अथवा अन्य धर्मों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करने के लिए नैतिक शिक्षा के माध्यम से सभी धर्मों के श्रेष्ठ विचारों को सिखाया जाना चाहिए। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सभी मानव जाति के प्रति प्रेम, प्रकृति के विभिन्न पहलुओं का प्रारंभिक ज्ञान, सभी जीवों के प्रति दया और सहायता, शारीरिक श्रम की गरिमा, देश के संविधान के प्रति सम्मान, देश की स्वतंत्रता को बनाए रखने की भावना, विचारों की स्वतंत्रता, न्याय-आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक, देश की रक्षा के लिए रुचि विकसित की जानी चाहिए। शिक्षा सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण विकसित करने का एक साधन है, इसलिए इसका उद्देश्य नागरिक गुणों और मूल्यों के बारे में जागरूकता पैदा करना होना चाहिए। शैक्षिक प्रशासकों और विभिन्न सामाजिक संगठनों और सरकार को ऐसे कार्यक्रमों का समर्थन करना चाहिए और अपना अधिक समय, ऊर्जा और संसाधन समर्पित करना चाहिए, तभी शिक्षा पूरे देश को लाभान्वित कर सकती है।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सभी मानव जाति के प्रति प्रेम, प्रकृति के विभिन्न पहलुओं का प्रारंभिक ज्ञान, सभी जीवों के प्रति दया और सहायता, शारीरिक श्रम की गरिमा, देश के संविधान के प्रति सम्मान, देश की स्वतंत्रता को बनाए रखने की भावना, विचारों की स्वतंत्रता, न्याय-आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक, देश की रक्षा के लिए रुचि विकसित की जानी चाहिए। शिक्षा सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण विकसित करने का एक साधन है, इसे नागरिक गुणों और मूल्यों के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए निर्देशित किया जाना चाहिए। शैक्षिक प्रशासकों और विभिन्न सामाजिक संगठनों और सरकार को ऐसे कार्यक्रमों का समर्थन करना चाहिए और अपना अधिक समय, ऊर्जा और संसाधन समर्पित करना चाहिए। तभी शिक्षा पूरे देश को लाभान्वित कर सकती है।

संदर्भ सूची

1. **अमादु मुसाह अबुदु और मूसा नईम फुसेनी।** नागरिक जागरूकता और सहभागिता में घाना: द करिकुलर इंप्लीकेशन, यूरोपियन साइंटिफिक जर्नल फरवरी 2014 संस्करण खंड 10, संख्या 4 आईएसएसएन: 1857 - 7881 (प्रिंट) ई - आईएसएसएन 1857- 7431
2. .मारा मार्टिनी, चिराग रोलेन, मार कोरिज़ो, सबरीना डि कार्लो, नोर्मा डी पिकोह, एंजेला फेडी (2023)सामाजिक न्याय के लिए नागरिक जुड़ाव के लिए युवाओं को शिक्षित करना: एक माध्यमिक विद्यालय परियोजना का मूल्यांकन, व्यवहार विज्ञान, 13 (8), 650
3. पॉवेल के.जी., पीटरसन एन.ए., ट्रेटलर पी.सी., लार्डियर डी.टी., जूनियर, राशिद एम., रीड आर.जे. युवा सशक्तिकरण को मापना: युवाओं के लिए सामाजिक-राजनीतिक नियंत्रण

पैमाने का एक आइटम प्रतिक्रिया सिद्धांत विश्लेषण। अमेरिकन जर्नल ऑफ कम्युनिटी साइकोलॉजी 2021;68:471-485. doi: 10.1002/ajcp.12540. [DOI] [PubMed] [Google Scholar]

4. लार्डियर डी.टी., ओपरा आई., गार्सिया-रीड पी., रीड आर.जे. रंग के किशोरों में सामुदायिक नागरिक भागीदारी, समुदाय की मनोवैज्ञानिक भावना और मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण के आयामों के बीच जातीय पहचान और सामाजिक न्याय अभिविन्यास की मध्यस्थ भूमिका। शहरी। संशोधन 2021;53: 403-423. doi: 10.1007/s11256-020-00573-z. [DOI] [PMC निःशुल्क लेख] [PubMed] [Google Scholar
5. विएनो ए., लेंज़ी एम., कैनेल एन., सैंटिनेलो एम. युवाओं के लिए सामाजिक-राजनीतिक नियंत्रण पैमाने (एसपीसीएस-वाई) का इतालवी सत्यापन जे. सामुदायिक मनोविज्ञान. 2014;42:463-468. doi: 10.1002/jcop.21621. [DOI] [Google Scholar]
6. प्रती एफ., प्रैटो एफ., ज़ेइनेडाइन एफ., स्वीटमैन जे., ऐएलो ए., पेट्रोविक एन., रुबिनी एम. सामाजिक प्रभुत्व अभिविन्यास से लेकर राजनीतिक जुड़ाव तक: विभिन्न संदर्भों में राजनीति में समूह की स्थिति और साझा विश्वासों की भूमिका। पोलिटिक साइकोल। 2022;43:153-175. doi: 10.1111/pops.12745. [DOI] [Google Scholar]
7. कैस्टेलानोस एम., कोल डी. विविधता पाठ्यक्रमों के प्रभाव को अलग करना: छात्रों की नागरिक भागीदारी पर विविधता पाठ्यक्रम सामग्री के प्रभाव की जांच करना। जे. कॉलेज. स्टड. डेव. 2015;56:794-811. doi: 1Sjogren
8. A.L., Bae C.L., Deutsch N.L., Zumbrunn S., Broda M. आफ्टरस्कूल भागीदारी: युवा भागीदारी के प्रोफाइल को समझने के लिए एक मिश्रित विधि दृष्टिकोण। एप्लिकेशन डेव. साइंस. 2022;26:638-656. doi: 10.1080/10888691.2021.1947140. [DOI] [Google Scholar]
9. पावलोवा एम.के., गेलरमैन जे.एम., होल्टमैन ई., जैक टी., कोर्नर ए., सिलबेरेसेन आर.के. नागरिक और राजनीतिक भागीदारी के लिए भविष्य के इरादों की भविष्यवाणी करने के लिए स्वयंसेवक प्रक्रिया मॉडल को लागू करना: समान पूर्ववृत्त, अलग-अलग अनुभव? जे. सोक. साइकोल. 2022;162:733-751. doi: 10.1080/00224545.2021.1953957. [DOI] [PubMed] [Google Scholar

ईमेल-nibeditapriyadarshani@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 63-65
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

SYNTHESIS OF BIS (8 HYDROXYQUINOLINE) ZINC(II) COMPLEX

Kamlesh Kumar Meena,
169 Second Floor Mukherjee Nagar Delhi 110009

Introduction:

Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) is a coordination compound known for its strong fluorescence and high thermal stability. These properties make it a promising material in various optoelectronic applications, including electroluminescent devices. Despite its wide use, developing a reproducible synthesis method is crucial for achieving high purity and yield. This paper provides a comprehensive step-by-step synthesis protocol, supported by detailed characterization to ensure the successful formation of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II).

Materials Required:

Reagents:
Zinc acetate dihydrate ($Zn(CH_3COO)_2.2H_2O$)
8-hydroxyquinoline (C_9H_7NO)
Sodium hydroxide (NaOH)
Ethanol (C_2H_5OH)
Deionized water

Apparatus Required:

Magnetic stirrer
Beaker (100 mL)
Funnel
Filter paper
Vacuum desiccator
Oven
UV-Vis spectrophotometer
Fluorescence spectrophotometer
X-ray diffractometer (XRD)
Fourier-transform infrared (FTIR) spectrometer

Procedure:

A. Preparation of Sodium 8-Hydroxyquinolate:

a) Weigh 2.9 g (20 mmol) of 8-hydroxyquinoline and dissolve it in 50 mL of ethanol in a 100 mL beaker. Ensure the solution is homogenous by stirring for 10 minutes.
b) Gradually add a solution of 0.8 g (20 mmol) of NaOH dissolved in 20 mL of deionized water to the beaker under constant stirring. The solution turns yellow, indicating the formation of sodium 8-hydroxyquinolate.
c) Maintain stirring for 30 minutes at room temperature to ensure complete deprotonation of 8-hydroxyquinoline.

B. Synthesis of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) Complex:

a) Dissolve 2.2 g (10 mmol) of zinc acetate dihydrate in 20 mL of ethanol to prepare a clear solution.
b) Add the zinc acetate solution dropwise to the sodium 8-hydroxyquinolate solution with continuous stirring over a period of 10 minutes. A yellow precipitate forms immediately, indicating the formation of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II).
c) Continue stirring the reaction mixture for an additional 1 hour at room temperature to ensure complete reaction.

C. Isolation and Purification:

a) Filter the yellow precipitate using a funnel with filter paper to separate the solid product from the reaction mixture.
b) Wash the precipitate with 10 mL of cold ethanol to remove any unreacted reagents and impurities.
c) Dry the product in a vacuum desiccator for 24 hours or in an oven at 60°C for 4 hours. The dried product should appear as a bright yellow crystalline solid.

Characterization:

I. **UV-Vis Spectroscopy:** Dissolve a small amount of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) in ethanol and record the UV-Vis absorption spectrum. Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) exhibits characteristic absorption bands in the range of 350-400 nm due to π-π^* transitions of the quinolinate ligand. Compare the results with reference spectra to confirm the compound's identity.

II. **Fluorescence Spectroscopy:** Measure the fluorescence spectrum of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) in ethanol under excitation at its absorption maximum. Bis(8hydroxyquinoline)zinc(II) typically exhibits strong green fluorescence with an emission peak around 500 nm. Evaluate quantum yield to assess the material's luminescent efficiency.

III. **Fourier-Transform Infrared (FTIR) Spectroscopy:** Record the FTIR spectrum of the Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) complex to identify functional groups and confirm ligand coordination. The spectrum should show characteristic peaks for C=N stretching (around 1600 cm^{-1}) and Zn-N or Zn-O bonds (in the region of 400-600 cm^{-1}).

IV. **X-ray Diffraction (XRD):** Analyze the crystalline structure of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) by XRD to confirm its phase purity and coordination geometry. Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) is expected to exhibit a monoclinic crystal structure. Match the diffraction pattern with standard data to verify the compound's identity.

Result :

The synthesis yielded a bright yellow product identified as Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II) through its spectroscopic and structural properties.

UV-Vis spectroscopy confirmed the characteristic absorption bands, while fluorescence analysis revealed a green emission peak typical of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II).

FTIR spectroscopy showed the expected functional groups, confirming the successful coordination of 8-hydroxyquinoline to zinc.

XRD analysis confirmed the crystalline nature of the product, consistent with literature-reported structures. The overall yield of the synthesis was approximately 85%, indicating the efficiency of the method. The material's strong luminescence and thermal stability highlight its potential for OLED applications.s

Conclusion:

The procedure demonstrates a straightforward and reproducible method for synthesizing bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II). The compound's properties, verified through various characterization techniques, highlight its potential for applications in luminescent materials. Future studies could focus on modifying the ligand environment to tune the photophysical properties of Bis(8-hydroxyquinoline)zinc(II).

References:

1. Tang, C. W., & VanSlyke, S. A. (1987). Organic electroluminescent diodes. *Applied Physics Letters, 51*(12), 913-915.
2. Lever, A. B. P. (1984). *Inorganic Electronic Spectroscopy.* Elsevier.
3. Gould, S. L., & Gray, H. B. (2006). Photophysical properties of 8-hydroxyquinoline complexes. *Journal of Physical Chemistry A, 110*(13), 4202-4209.
4. Lakowicz, J. R. (2006). *Principles of Fluorescence Spectroscopy.* Springer Science & Business Media.

Email – kamleshkrmeena1@gmail.com
Mobile No. - 9983470126

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 66-72
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कोरोना काल और तेजेन्द्र शर्मा की कहानी

जवाहर रंजन पंडा, शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, रेवेंशा विश्वविद्यालय, कटक, पीन-753003, ओड़िशा

कोरोना महामारी का पहला मामला दिसंबर 2019 में चीन के वुहान शहर में सामने आया और यह जल्द ही वैश्विक महामारी बन गई। इसके लक्षणों में बुखार, खांसी, थकान, सांस लेने में कठिनाई और गंध या स्वाद का न आना शामिल हैं। मुख्य रूप से यह संक्रमित व्यक्ति की खांसी, छींक, बोलने से निकलने वाली बूंदों और दूषित सतहों के संपर्क से फैलता है। इससे बचने के लिए मास्क पहनना, सामाजिक दूरी बनाए रखना, हाथों की सफाई करना और टीकाकरण करना अनिवार्य था।

भारत में, कोरोना वायरस के कारण पहला राष्ट्रीय लॉकडाउन 25 मार्च 2020 से लागू हुआ, जिसे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 24 मार्च 2020 को घोषित किया। यह लॉकडाउन 21 दिनों के लिए लगाया गया था, लेकिन बाद में कई चरणों में इसे बढ़ाया गया। लॉकडाउन का उद्देश्य संक्रमण की श्रृंखला को तोड़ना और स्वास्थ्य सेवाओं को तैयार करना था।

ब्रिटेन में तीन मुख्य राष्ट्रीय लॉकडाउन हुए। पहला 23 मार्च 2020 को शुरू हुआ और मई तक चला। इन लॉकडाउन का उद्देश्य संक्रमण को नियंत्रित करना और स्वास्थ्य सेवाओं पर दबाव को कम करना था। इसके अलावा, स्थानीय स्तर पर भी कई प्रतिबंध लगाए गए थे। इन सभी कदमों का उद्देश्य महामारी से बचाव और नियंत्रण करना था।

तेजेन्द्र शर्मा हिन्दी साहित्य के एक प्रतिष्ठित और चर्चित नाम हैं। भारतीय मूल के इस कवि, लेखक और कहानीकार ने अपनी साहित्यिक रचनाओं से प्रवासी साहित्य को एक नई पहचान दी है। उनका जन्म 21 अक्टूबर 1952 को पंजाब के जगरांव शहर के रेलवे क्वार्टर में हुआ। उनके पिता, नंदगोपाल मोहाला, वहाँ सहायक स्टेशन मास्टर थे और माता, पद्मा शर्मा, एक कुशल गृहिणी थीं।1960 में उनके पिता के स्थानांतरण के कारण परिवार को जगरांव छोड़कर दिल्ली जाना पड़ा। दिल्ली में ही तेजेन्द्र शर्मा की शिक्षा का सिलसिला आगे बढ़ा। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में बी.ए और एम.ए की डिग्री प्राप्त की। इसके अतिरिक्त, उन्होंने कंप्यूटर में डिप्लोमा भी किया।

तेजेन्द्र शर्मा बहुभाषी प्रतिभा के धनी हैं। हिन्दी के साथ-साथ उन्हें उर्दू और पंजाबी भाषाओं का भी गहरा ज्ञान है। उनकी भाषा शैली इतनी सहज और प्रभावशाली है कि वे इन भाषाओं को बिना किसी झिझक के बोलते हैं। हिन्दी, उर्दू और पंजाबी साहित्य के प्रचार-प्रसार में उनका योगदान अतुलनीय है।साहित्य के प्रति उनकी लगन और समर्पण उन्हें प्रवासी साहित्य का प्रमुख स्तंभ बनाता है। उनके जीवन और कृतित्व की कहानी सिर्फ उनकी व्यक्तिगत यात्रा नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति और साहित्य की वैश्विक प्रस्तुति का प्रतीक है। हम यहां पर कोरोना काल पर आधारित साथ कहानियों पर बात करेंगे- बेपरदा खिड़की, मैं भी तो वैसा ही हूं, रेफ्रिजिरेटरों में डाका, सहयात्री, दिल बहलता क्यों नहीं और टूट गया नाता।

बेपरदा खिड़की

यह कहानी लॉकडाउन के दौरान लंदन में रहने वाले भारतीय प्रवासी अजय वर्मा के जीवन पर आधारित है। कहानी के केंद्र में एक ड्राई-क्लीनिंग की दुकान का पांच दिन से बंद होना और इससे अजय वर्मा के भीतर उठने वाले सवाल और चिंताएं हैं। अजय ने अपने सिल्क के पर्दे ड्राई-क्लीनिंग के लिए इस दुकान पर दिए थे। दुकान के बंद होने से वह न केवल अपने पर्दों को लेकर परेशान है बल्कि दुकान के मालिक दंपति, जिन्हें वह ठीक से जानता भी नहीं, उनकी खैरियत को लेकर भी चिंतित हो जाता है।

कहानी के माध्यम से लेखक ने न केवल लॉकडाउन की वजह से उपजी सामाजिक और मानसिक परेशानियों को दर्शाया है, बल्कि प्रवासी भारतीयों के जीवन, उनके रिश्तों और भावनात्मक पहलुओं को भी उजागर किया है। दुकान का बंद होना अजय को अपने जीवन की छोटी-छोटी चीजों के महत्व का एहसास कराता है। साथ ही, पर्दे के प्रतीकात्मक इस्तेमाल से यह बात कही गई है कि हर व्यक्ति के जीवन में एक पर्दा होता है जो उनकी निजता को बचाए रखता है। जब यह पर्दा हटता है, तो व्यक्ति असुरक्षित महसूस करता है।

कहानी जीवन की विडंबनाओं, प्रवासी अनुभवों, और इंसानी फितरत के छोटे-छोटे पहलुओं को बड़ी खूबसूरती से उजागर करती है।

मैं भी तो वैसा ही हूं

यह कहानी एक पूर्व बीबीसी पत्रकार की है, जो अब लंदन के हैरो में अकेला रहता है। उम्रदराज़, चिड़चिड़े और सिद्धांतवादी इस व्यक्ति को अपने इलाके और लोगों की बदलती आदतों से शिकायत रहती है, विशेषकर गंदगी और सिविक सेंस की कमी से।

एक दिन, जब उसकी घरेलू सहायिका माया उसके कार्पेट की सफाई करने का सुझाव देती है, तो वह झिझकते हुए सहमत हो जाता है। लेकिन माया की सफाई के दौरान कार्पेट का रंग खराब हो जाता है। अब वह कार्पेट को फेंकने की समस्या में उलझ जाता है। वह खुद को नैतिक

और नियमप्रिय मानता है और सड़क पर कचरा डालने वालों की हमेशा आलोचना करता है, लेकिन उसकी स्थिति उसे इस कचरे को भी सड़क पर रखने के लिए मजबूर कर देती है।

अंततः, संघर्ष और आत्ममंथन के बाद, वह देर रात कार्पेट को सड़क पर छोड़ने का निर्णय लेता है। यह घटना उसकी आंतरिक द्वंद्व और सिद्धांतों पर व्यावहारिकता के प्रभाव को दर्शाती है।

रेफ्रिजिरेटरों में डाका

"रेफ्रिजरेटर में डाका" एक सजीव और प्रतीकात्मक कहानी है, जो एक महामारी के दौरान मानव व्यवहार में बदलाव को दर्शाती है। यह कहानी एक छोटे से परिवेश, जैसे रेलवे स्टेशन और उसके कर्मचारियों के बीच घटित होती है, लेकिन इसका संदेश सार्वभौमिक है।

कहानी की शुरुआत में, जैनेट और उसके सहकर्मियों के बीच बातचीत होती है, जहां वे फ्रिज में रखे गए सैंडविच और अन्य खाने-पीने की चीजों की सुरक्षा को लेकर चिंतित होते हैं। जैनेट का कहना है कि यदि इस तरह की घटनाएं बढ़ीं तो यह उनकी "जासूसी" हो सकती है। पीटर, जो कि कंपनी काउंसिल का सदस्य है, इस मसले को हल करने के लिए जैक्सन से बात करता है। जैक्सन, जो एक मस्त-मौला व्यक्ति है, इस समस्या को हल्के ढंग से लेता है, लेकिन धीरे-धीरे कहानी में महामारी का प्रवेश होता है।

जैनेट और जेफ की अचानक बीमारी के बाद, महामारी फैलने लगती है, जिससे पूरे शहर में हड़कंप मच जाता है। अस्पतालों में लंबी कतारें लग जाती हैं, लोग मरने लगते हैं, और सभी को अपने जीवन में बदलाव का एहसास होने लगता है। सभी अपने आसपास की चीजों से डरने लगते हैं, और एक अजनबीपन का माहौल बन जाता है।

कोरोना जैसी महामारी के कारण, लोग एक दूसरे से दूर रहने लगते हैं। हाथ धोने, मास्क पहनने, और आपसी संपर्क से बचने की आदतें प्रमुख हो जाती हैं। नरेन, जो रेलवे स्टेशन पर काम करता है, देखता है कि अब उसके सहकर्मी भी घर से खाना लाकर खाते हैं और फ्रिज में कुछ भी नहीं रखते। किसी ने भी अब एक दूसरे के खाने को छूने की हिम्मत नहीं की।

कहानी का अंत तब होता है, जब नरेन अपने सैंडविच और कोक को फ्रिज में रखने जाता है और पाता है कि फ्रिज पूरी तरह से खाली और वीरान है। यह दृश्य प्रतीकात्मक रूप से दिखाता है कि महामारी ने सिर्फ शारीरिक अस्तित्व ही नहीं बल्कि मानव संबंधों और रोज़मर्रा की आदतों को भी प्रभावित किया है।

"रेफ्रिजरेटर में डाका" महामारी के दौरान जीवन में आए बदलावों को दर्शाती है, जिसमें लोगों की आदतें, रिश्ते और समाज का ढांचा अचानक बदल जाता है। यह कहानी दिखाती है कि किसी बड़े संकट के समय, इंसान अपनी सुरक्षा के लिए छोटी-छोटी आदतों में भी बदलाव कर देता

है, और यह बदलाव सिर्फ व्यक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समाज और दुनिया भर में फैला होता है।

'सहयात्री' कहानी एक जीवनसाथी के प्रति गहरी भावनाओं, संघर्षों और समर्पण की कहानी है। अमर सिंह भल्ला और उनकी पत्नी नीलम जी के रिश्ते में समय के साथ प्यार, आदान-प्रदान और समझ बढ़ी, लेकिन जीवन ने उन्हें कई कठिनाइयों का सामना भी कराया।

अमर सिंह भल्ला ने अपनी पूरी जिंदगी एक नौकरी में बिता दी थी। 38 साल के कठिन कार्य जीवन के बाद जब उन्होंने रिटायरमेंट लिया, तो उनके सामने एक नया अध्याय खुला। अब उनका समय ज्यादा अपने परिवार के साथ बिताने का था, और उन्होंने दिल्ली में नया घर खरीदने का फैसला किया। उनका बेटा और बेटी विदेश में रहते थे, लेकिन वे दोनों अपने माता-पिता के प्रति बहुत स्नेही थे। इस बदलाव के बावजूद, उनका जीवन खुशहाल और व्यवस्थित था। उनका घर, जिसमें नीलम जी और उनके रिश्ते के कई सुंदर पल समाए थे, उनके लिए एक शांतिपूर्ण अभयारण्य बन गया था।

नीलम जी का जीवन सरल, शांतिपूर्ण और परिवार के प्रति समर्पित था। वे हमेशा अपने बच्चों और पति के बारे में सोचती रहती थीं। उनका प्यार और समर्पण अपने परिवार के लिए बहुत गहरा था। वे हमेशा घर के कामों में व्यस्त रहतीं, लेकिन अपने लिए भी थोड़ा समय निकालती थीं, जैसे कि पुरानी फिल्मों का आनंद लेना। वे जीवन के छोटे-छोटे खुशियों को संजोकर चलती थीं, बिना किसी बड़ी अपेक्षा के। उनका जीवन बिल्कुल साधारण था, परंतु उसमें प्यार और संतुष्टि की कोई कमी नहीं थी।

नीलम जी की बीमारी और भल्ला साहिब की देखभाल: कहानी में असली मोड़ तब आता है जब नीलम जी को अचानक एक स्ट्रोक होता है। यह भल्ला साहिब के लिए एक बड़ा झटका था क्योंकि नीलम जी हमेशा उनके साथ थी, उनकी ताकत और उनका सहारा। उनका स्वस्थ जीवन अचानक एक कड़ी परीक्षा में बदल गया। भल्ला साहिब ने अपनी पत्नी की देखभाल में दिन-रात कोई कसर नहीं छोड़ी। उनकी पत्नी के शरीर में बहुत बदलाव आया था, और भल्ला साहिब को अपनी सारी जिम्मेदारियाँ अकेले उठानी पड़ीं। नीलम जी के स्वास्थ्य की स्थिति कभी बेहतर होती, कभी बिगड़ जाती, लेकिन भल्ला साहिब ने धैर्य और प्यार से उनका साथ दिया। उनका यह समर्पण हमें यह सिखाता है कि प्यार सिर्फ शब्दों तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह तब साबित होता है जब हमें कठिन समय में एक दूसरे का साथ देना होता है।

फिर, जब पूरी दुनिया में कोविड-19 महामारी फैलती है, तो यह एक और कठिन समय लेकर आता है। महामारी ने न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित किया, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य पर भी गहरा असर डाला। भल्ला साहिब को अपनी पत्नी की देखभाल करने

में और भी समस्याओं का सामना करना पड़ा, क्योंकि बाहर से मदद प्राप्त करना मुश्किल था। महामारी के कारण घर में ही रहना पड़ा, और परिवार को एक-दूसरे के साथ अधिक समय बिताने का अवसर मिला। भल्ला साहिब ने न केवल अपनी पत्नी की शारीरिक स्थिति पर ध्यान दिया, बल्कि उनके मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को भी बेहतर बनाने की कोशिश की।

कहानी का समापन उस निरंतर संघर्ष और समर्पण से होता है जो अमर सिंह भल्ला ने अपनी पत्नी नीलम जी के लिए किया। यह कहानी हमें यह सिखाती है कि जीवन में कभी भी हम अकेले नहीं होते। जब हम किसी से सच्चा प्यार करते हैं, तो हम उसके हर पल के साथी बनते हैं, खासकर जब जीवन कठिन दौर से गुजर रहा हो। कठिनाइयाँ और संघर्ष हमें और मजबूत बनाते हैं, और प्यार और देखभाल में समर्पण के जरिए हम हर चुनौती का सामना कर सकते हैं। अमर सिंह अपनी पत्नी की सेवा करते हैं लेकिन कोरोना की वजह से उनकी मृत्यु हो जाती है और उन्हें के साथ उनकी पत्नी नीलम की मृत्यु हो जाती है ।

दिल बहलता क्यों नहीं

यह कहानी नरेन और उसके दोस्तों की है, जो कोरोना महामारी के बीच मुंबई के सामाजिक और व्यक्तिगत संघर्षों से जूझ रहे हैं। नरेन एक ऐसे व्यक्ति के रूप में दिखाई देते हैं, जो सवाल करने वाला, संशयवादी और विज्ञान में विश्वास रखने वाला है, जबकि उसकी पत्नी शिवानी धार्मिक दृष्टिकोण रखती हैं और मानती हैं कि इस महामारी से मुक्ति के लिए धार्मिक उपायों की आवश्यकता है।

मुंबई में लॉकडाउन और कोरोना वायरस के संकट के बीच नरेन और उसके दोस्त हरीश के संवाद में समाज की जटिलताओं और सरकार की नीतियों पर आलोचना की जाती है। नरेन के दोस्त हरीश एक पत्रकार हैं, जो बेमिसाल तरीके से अपने विचार व्यक्त करते हैं। वे समाज की असमानताओं और राजनीति के दोगलेपन के बारे में बुरी तरह से व्यंग्य करते हैं।

शिवानी, जो धार्मिक हैं, नरेन से लगातार यह अपेक्षाएं करती हैं कि वह भगवान के अस्तित्व और धार्मिक अनुष्ठानों को समझे। नरेन, जो एक एग्नॉस्टिक (संशयवादी) है, धर्म और आस्था को लेकर गहरी उलझन में हैं, लेकिन वह अपनी पत्नी के प्रति गहरी श्रद्धा रखते हुए उसकी भावनाओं का सम्मान करता है।

कोरोना संकट के दौरान नरेन और शिवानी ने अपनी सोसाइटी के वाचमैन और उनके परिवारों की मदद करने का निर्णय लिया, जो लॉकडाउन और बीमारी के कारण आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। शिवानी ने वाचमैनों के लिए घर का बना खाना तैयार किया, जिससे नरेन को यह अहसास हुआ कि उसकी पत्नी के अंदर गहरी सोच और समाज के प्रति करुणा है।

कहानी में समाज की असमानताओं, लॉकडाउन की समस्याओं, और महामारी के दौरान एक व्यक्ति की अंदरूनी और बाहरी संघर्षों को दिखाया गया है।

टूट गया नाता

यह कहानी दो दोस्तों के बीच के रिश्ते को दर्शाती है, जिनकी दोस्ती एक लम्बे समय से चली आ रही है। मुख्य पात्र, जो एक सनातन धर्मी हैं, सलमान नामक एक व्यक्ति के साथ पच्चीस वर्षों से जुड़े हुए हैं। सलमान एक हेयर स्टाइलिस्ट है, जो लंदन में अपनी छोटी सी दुकान चलाता है। उनके बीच का रिश्ता बहुत गहरा और सच्चा है, जिसे वर्षों के अनुभव और समझ ने और मजबूत किया है।

कहानी का आरंभ सलमान की नाई की दुकान से होता है, जहाँ वह पहली बार मुख्य पात्र से मिलता है। सलमान ने कभी अपनी दुकान का नाम नहीं रखा था, लेकिन धीरे-धीरे उनकी दुकान को 'नर्ज हेयर स्टाइलिस्ट' के नाम से पहचाना जाने लगा। यह नाम एक प्रकार से सलमान की शख्सियत और उनके काम के प्रति उनके समर्पण को भी दर्शाता है। समय के साथ, वह और मुख्य पात्र एक-दूसरे के दोस्त बन गए और उनका रिश्ता केवल व्यवसायिक नहीं, बल्कि एक गहरे और ईमानी रिश्ते में बदल गया।

सलमान का मुख्य पात्र के साथ रिश्ते का एक खास पहलू यह था कि वह शायरी और ग़ज़लों में रुचि रखते थे। जब भी मुख्य पात्र बाल कटवाने के लिए सलमान के पास जाता, वह सलमान से शेर सुनाने और ग़ज़ल सुनने की फरमाइश करता। इसके परिणामस्वरूप, उनके रिश्ते में एक सौहार्दपूर्ण और सांस्कृतिक संवाद की गहरी समझ विकसित हो गई। वे दोनों एक-दूसरे के धर्म, संस्कृति और जीवन के दृष्टिकोण का सम्मान करते थे, जबकि वे भारत और पाकिस्तान के राजनीतिक तनावों से अवगत थे।

एक दिन सलमान ने मुख्य पात्र से कहा कि वह अपनी दुकान का नाम बदलने जा रहा है और अब उसका नाम 'नर्ज हेयर स्टाइलिस्ट' होगा, जिसका संबंध उसकी भतीजी के नाम से था। इससे मुख्य पात्र को सलमान के परिवार और रिश्तों के बारे में और जानकारी मिली। यह उनकी दोस्ती और समझ को और भी गहरा करता है।

कहानी के अगले हिस्से में मुख्य पात्र एक शेर लिखता है जो सलमान ने कहा था। यह शेर 'परेशान न होना' के बारे में था, और यह शेर सलमान की दुकान में एक कड़ी के रूप में सामने आता है। सलमान ने उसे यह शेर सुनकर उसे सराहा और ग़ज़ल लिखने की सलाह दी। यह क्षण उनके रिश्ते में एक खास मोड़ था, क्योंकि सलमान ने पहली बार किसी से ग़ज़ल लिखवाने की इच्छा व्यक्त की थी।

इसके बाद, मुख्य पात्र ने इस शेर को पूरी ग़ज़ल में बदल दिया और इसे सलमान को भेज दिया। सलमान ने ग़ज़ल की सराहना की और उसे अपनी दुकान पर बुलाया ताकि वह उसे

सुन सके। इस पूरी प्रक्रिया में, सलमान ने अपनी दुकान के बिज़नेस के अलावा, अपने दिल से मुख्य पात्र के लेखन और जीवन की शैली का सम्मान किया।

कहानी की अंतिम बातों में सलमान ने मुख्य पात्र को अपने नए स्टाइलिस्ट (एलेना) से बाल कटवाने के लिए कहा। कोरोना लॉकडाउन के दौरान जब हर जगह सैलून बंद थे, सलमान ने उसे घर पर आकर बाल काटने का प्रस्ताव दिया। यह सलमान की दोस्ती और केयर को दर्शाता है, कि वह किसी भी स्थिति में अपने दोस्त की मदद करने को तैयार था।

कहानी का अंत इस बात पर होता है कि सलमान ने अपने दोस्त के लिए अपना काम किया, बिना किसी शुल्क के, क्योंकि वह उसे अपना सच्चा दोस्त मानता था। इस अंतिम स्थिति में, मुख्य पात्र को यह अहसास हुआ कि सलमान की मदद और उनका रिश्ता उसे एक गहरे, आत्मिक और मानवीय रिश्ते में बदल चुका था, जो न केवल व्यवसायिक बल्कि व्यक्तिगत स्तर पर भी सशक्त था। लेकिन कोरोना के वजह से बहुत दिनों के बाद लॉकडाउन खुलता है तो सलून बहुत भीड़ होता है इसके कारण कहानी के नायक को दूसरे सालों में बाल कटवाना पड़ता है।

कोरोना महामारी ने न केवल लोगों के शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित किया, बल्कि उनके मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक जीवन में भी गहरे बदलाव लाए। विभिन्न कहानियों के माध्यम से, लेखक ने लॉकडाउन और महामारी के दौरान व्यक्तियों के आंतरिक संघर्ष, रिश्तों की जटिलताएँ, और मानवता के विविध पहलुओं को उजागर किया। तेजेन्द्र शर्मा की रचनाएँ, जो प्रवासी अनुभव और सामाजिक सच्चाइयों को सशक्त रूप से चित्रित करती हैं, कोरोना संकट के दौरान मानवीय संवेदनाओं और आपसी संबंधों के महत्व को पुनः प्रदर्शित करती हैं। इन कहानियों में व्यक्त संघर्ष, समर्पण, और संवेदनशीलता ने यह साबित किया कि किसी भी संकट के समय, रिश्तों की मजबूती और मानवीय मूल्य ही हमें संघर्षों से उबारने का आधार बनते हैं।

सन्दर्भ सूची

1.शर्मा तेजेन्द्र, संदिग्ध, शिवना प्रकाशन, 2023, (म.प्र)

मो.9668711998 Jawaharranjanpanda@gmial.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 73-76
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'प्रियप्रवास' में वक्रोक्ति विधान

दिनेश कुमार बड़ोला, शोधार्थी (हिन्दी),
जय नारायण व्यास, विश्वविद्यालय, जोधपुर

मनुष्य की अस्मिता सृजनशीलता में है। भाषा में मनुष्य की इस अनुशीलता को आदिम काल से ही न केवल संवहन किया है अपितु उसे उत्तरोत्तर परिवर्धित किया है। मनुष्य अपनी सृजनशीलता भाषा एवं अहमन्यता से एक सम्पूर्ण वृत्त का निर्माण करता है। इसी कारण मनुष्य अपनी चेतना के साथ–साथ भाषा की सृजनशीलता से अनवतर संयुक्त है।

हिन्दी काव्य परम्परा में महाकाव्यों के प्रकरणों अथवा सर्गों को अर्थ–गौरव द्वारा उद्घाटित किया गया है। जो काव्यशास्त्रीय प्रतिमानों का निर्वाह मात्र है। कवि परम्परागत कथाओं में नवीनता प्रदान करके सहृदय पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है। वह अपना प्रस्तुतीकरण चमत्कारपूर्ण दृष्टि से करता है। ऐसा करना भावक की अनुभूति का विषय है। समग्र 'प्रियप्रवास' में वक्रोक्ति के भेदों को निकष बनाकर विश्लेषण करना हमारा ध्येय है।

वक्रोक्ति सिद्धांत के प्रवर्तक आचार्य कुन्तक है। भारतीय समीक्षा में वक्रोक्ति सिद्धांत का मौलिक महत्त्व है। आचार्य कुन्तक ने वक्रोक्ति को व्यापक एवं संकुचित अर्थ में परिभाषित किया है। उन्होंने वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा माना है। कुन्तक के बाद में इस सिद्धांत का अनुकरण नहीं हुआ अपितु आचार्य महिम भट्ट और विश्वनाथ ने इसका खण्डन किया है।

वक्रोक्ति से अभिप्राय

शास्त्र तथा लोक व्यवहार में शब्द एवं अर्थ के प्रसिद्ध कथन प्रकार से भिन्न विचित्र अभिधा अर्थात् वर्णन–शैली को वक्रोक्ति कहते हैं।

डॉ. जयप्रकाश नारायण के अनुसार "वक्रोक्ति शब्द 'वक्र' और 'उक्ति' इन दो शब्दों से मिलकर बना है। इसका शाब्दिक अर्थ है – टेढ़ी उक्ति अथवा बंकिम कथन।"[1]

वक्रोक्ति का काव्यशास्त्र में सबसे पहले समावेश **आचार्य भामह** ने काव्यालंकार में किया है। वक्रोक्ति और अतिशयोक्ति दोनों पर्यायवाची रूप हैं। भामह का मानना है कि सभी अलंकारों का मूल वक्रोक्ति है। इसके बिना किसी भी अलंकार की कोई सत्ता नहीं है। वक्रोक्ति के अभाव में सूक्ष्म और थोड़े को ही अलंकार नहीं मानते। जहाँ वक्रोक्ति नहीं होती उसे काव्य नहीं कह सकते हैं, उसे 'वार्ता' कहते हैं –

"सैषा सर्वत्र वक्रोक्तिरनयार्थो विभाव्यते।
यत्नोऽस्यामं कविना कार्यः कोऽलंकारोऽनया विना।"[2]

आचार्य दण्डी ने वक्रोक्ति को सर्वालंकार मूला माना है। उन्होंने समस्त साहित्य को वक्रोक्ति और स्वभावोक्ति रूप मे दो भागों में माना। उन्होंने अन्तर करते हुए लिखा कि 'अनलंकृत स्वाभाविक कथन स्वाभावोक्ति और स्वभाव से भिन्न अतिशय कथन वक्रोक्ति है।'

आचार्य वामन ने वक्रोक्ति को एक अर्थालंकार मात्र माना। उनके अनुसार "सादृश्यालक्षणा वक्रोक्ति"[3]

आचार्य रुद्रट ने वक्रोक्ति को एक शब्दालंकार स्वीकार किया। उन्होंने इसके दो भेद किये हैं – 1. काकु वक्रोक्ति, 2. श्लेष वक्रोक्ति। दूसरी ओर आनंदवर्धन ने वक्रोक्ति को अर्थालंकार रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने ध्वनि के अनुशासन में ही वक्रोक्ति को ग्रहण किया है।

आचार्य अभिनव गुप्त ने वक्रोक्ति को सामान्य अलंकार के रूप में गृहीत किया। भोज का मानना था कि "वक्रोक्ति में रस, अलंकार तथा स्वाभाविक कथन सभी आते हैं, अतः वक्रोक्ति काव्य का सौन्दर्य रूप है।"[4]

आचार्य कुन्तक ने "वाग्वैदग्ध्यपूर्ण भंगीभणिति को ही वक्रोक्ति कहा है।"[5]
अतः आचार्य मम्मट, विश्वनाथ आदि ने वक्रोक्ति को शब्दालंकार माना है, जबकि रूय्यक, विद्यानाथ, अप्पय दीक्षित ने वक्रोक्ति को अर्थालंकार माना है।
आचार्य कुन्तक (10वीं से 11वीं सदी) ने 'वक्रोक्तिजीवितम्' ग्रंथ का प्रणयन कर वक्रोक्ति के छह भेदों का निदर्शन, निरूपण एवं विश्लेषण किया है जो इस प्रकार है –

1. वर्ण–विन्यास वक्रता
2. पद–पूर्वार्द्ध वक्रता
3. पद–परार्द्ध वक्रता
4. वाक्य वक्रता
5. प्रकरण वक्रता
6. प्रबंध वक्रता

1. वर्ण–विन्यास वक्रता

आचार्य कुन्तक ने 'वक्रोक्तिजीवितम्' में वर्ण–विन्यास वक्रता की मीमांसा की है। कुन्तक काव्य के विवेचन का प्रथम अवयव वर्ण को मानते हैं। इसलिए उन्होंने वर्ण–विन्यास वक्रता को विक्रोक्ति का प्रथम भेद स्वीकार किया है। वर्ण–विन्यास वक्रता को परिभाषित करते हुए कुन्तक लिखते हैं –
"वर्णानां विन्यासो वर्णविन्यासः अक्षराणां विशिष्टन्यसनं तस्य वक्रत्वं वक्रभावः।"[6]
अर्थात् वर्णों अथवा ककार इत्यादि अक्षरों का विशिष्टन्यास ही वर्ण–विन्यास है और उसकी वक्रता ही वर्ण–विन्यास वक्रता के नाम से जानी जाती है। यहाँ वर्ण शब्द व्यंजन का पर्यायवाची है। वर्ण विन्यास वक्रता में शब्दालंकार विशेषतः अनुप्रास और यमक के भेदों का चमत्कार परिलक्षित होता है। वक्रता के इस भेद में एक दो या दो से अधिक वर्णों की थोड़े–थोड़े अन्तर में आवृत्ति होती है।
इसमें वर्गान्त युक्त स्पर्शों (ङ्क, ञ्यं, ण्ट, न्त, म्ब) की आवृत्ति देखने को मिलती है।
इसमें स्पर्श वर्णों के रकार युक्त वर्णों जैसे र्क, क्र, र्म–म्र, र्स–स्र आदि की आवृत्ति होती है।
'प्रियप्रवास' में वर्ण–विन्यास वक्रता सर्वत्र देखने को मिलती है –

> "परम–पातक सी प्रतिमूर्ति सी।
> अति अपावनतामय–पूतना।"[7]

यहां 'प' एवं 'अ' वर्ण की आवृत्ति होने से वर्ण–विन्यास वक्रता है।

> "तरणि–बिम्ब तिरोहित हो चला
> गगन–मण्डल मध्य शनैः–शनैः।"[8]

यहां 'बिम्ब' शब्द में स्पर्श वर्ण 'ब' अपने वर्ग के अंतिम वर्ण 'म' से संयुक्त होकर आवृत्त हुआ है। अतः यहां वर्गान्तयुक्त–स्पर्शों की आवृत्ति रूपी वर्ण–विन्यास वक्रता है।

2. पद–पूर्वार्द्ध वक्रता

कुन्तक ने 'वक्रोक्तिजीवितम्' के 'द्वितीय–उन्मेष' में पद–पूर्वार्द्ध वक्रता का उल्लेख किया है। उन्होंने पद–पूर्वार्द्ध वक्रता में पद–योजना के पूर्वार्द्ध (प्रकृति रूप) पर आधारित काव्य वक्रभाव का उल्लेख किया है। इस वक्रता के अन्दर रूढ़ि, पर्याय, उपचार, विशेषण, संवृत्ति, क्रिया, भाव, लिंग आदि के प्रयोग की विधि का समावेश रहता है। 'प्रकृति' और 'प्रत्यय' पद के दो भाग होते हैं। कुन्तक ने इसी आधार पर पद के प्रारंभ में रहने वाली वक्रता को पद–पूर्वार्द्ध वक्रता कहा और उत्तर में रहने वाली वक्रता को पद–परार्द्ध वक्रता कहा है।

प्रकृति के भी दो रूप होते हैं – प्रातिपदिक और धातु। प्रातिपदिक 'सुबन्त' होने पर बनता है और धातु 'तिङ्त' होने पर बनता है। कुन्तक ने सुबन्त एवं तिङ्त पदों का जो प्रातिपदिक रूप या धातु रूप है उसे पद–पूर्वार्द्ध वक्रता कहा है।
आचार्य कुन्तक ने पद–पूर्वार्द्ध वक्रता के आठ भेद बताये हैं, जिनमें से एक भेद है – पर्याय वक्रता।
समान अर्थ वाले संज्ञा शब्द को 'पर्याय' कहते है। प्रत्येक भाषा में शब्द के अनेक पर्याय समान अर्थ वाचक शब्द रहते है। कवि द्वारा शब्द के ऐसे पर्याय का चमत्कारपूर्ण प्रयोग किया जाता है जो अर्थ को अतिशय पुष्ट करता है, अथवा सम्भाव्य अर्थ की सूचना देने की विशेषता से युक्त है।
'प्रियप्रवास' में पद–पूर्वार्द्ध वक्रता के भेद पर्याय वक्रता के उदाहरण जगह–जगह पर देखने को मिलते हैं –

> "समय था सुनसान निशीथ का

अटल भूतल में तम राज्य था।
प्रलय–काल समान प्रसुप्त हो
प्रकृति निश्चल, नीरव, शान्त थी।"[9]

यहाँ 'समय था सुनसान' वाचक है निशीथ का इसलिए इस पद्य में पर्याय वक्रता है।

3. पद–परार्द्ध वक्रता

पद–परार्द्ध वक्रता में पद के परार्द्ध भाग अर्थात् उत्तर भाग का वर्णन किया जाता है। इस विचित्रता में प्रत्यय–जन्य उत्तर वक्रता विद्यमान होती है, जिसे हम प्रत्यय वक्रता कहते हैं। पद के बाद में 'सुप्' आदि धातु रूपों द्वारा चमत्कार किया जाता है। इसमें होने वाला सौन्दर्य उत्तरार्द्ध पद के कारण उत्पन्न होता है। आचार्य कुन्तक ने पद–परार्द्ध वक्रता के छह भेदों का उल्लेख किया है। उनमें से एक भेद है– कारक वक्रता। जहाँ सामान्य कारक का मुख्य रूप से और मुख्य कारक का सामान्य रूप से कथन किया जाता है वहाँ 'कारक वक्रता' होती है। कारकों के इस विपर्यास में कवि का लक्ष्य रमणीयता का सृजन करना होता है।

'प्रियप्रवास' में पद–परार्द्ध वक्रता के भेद कारक वक्रता का उदाहरण द्रष्टव्य है –

"अधिक और निवेदन नाथ से
कर नहीं सकती यह किंकरी।
गति न है करुणाकर से छिपी
हृदय की मन की मम–प्राण की।।"[10]

श्रीकृष्ण के मथुरा गमन के बाद ग्वालिन अपनी क्षुब्ध व्यथा से कहती है अब और नहीं सह सकती यह विरह का दारुण दुःख! वे स्वयं इस बात को जानते हैं।

4. वाक्य वक्रता

इसे वाच्य वक्रता या वस्तु वक्रता या अर्थ वक्रता पर्याय से बोधन कराते हैं। वस्तु से अभिप्राय है वाच्य, अर्थ, वर्णनीय विषय जो कि वाक्य वक्रता का प्रतिपाद्य होता है। वस्तु वक्रता से अभिप्राय है – काव्य के वर्णनीय विषय की वक्रता से। कवि वस्तुतः अवर्णनीय वस्तु का उत्पादक नहीं होता, अपितु वह तो लोक में विद्यमान पदार्थों में कुछ इस प्रकार की विशेषता उत्पन्न कर देता है कि जिससे वे सहृदयों के हृदय का हरण करने वाली किसी अपूर्व रमणीयता को प्राप्त हो जाते हैं। उन्होंने वस्तु का विभाजन चेतन और अचेतन दो रूपों में किया है। किसी वस्तु का उत्कर्षशाली स्वभाव से सुन्दर रूप में केवल सुन्दर शब्दों द्वारा वर्णन करना वस्तु वक्रता कहलाती है। 'प्रियप्रवास' में वाक्य वक्रता के उदाहरण सर्वत्र दर्शनीय है –

"रूपोद्यान प्रफुल्ल–प्राय कलिका राकेन्दु विम्बानना।
तन्वंगी कल–हासिनी सुरसिका क्रीड़ा–कला पुत्तली।"[11]

यहाँ राधा के सौन्दर्य का वर्णन सुन्दर शब्दों में किया गया है अतः उपर्युक्त पद्य में वाक्य (वस्तु) वक्रता है।

प्रकरण–वक्रता

आचार्य कुन्तक ने 'वक्रोक्तिजीवितम्' के 'चतुर्थ–उन्मेष' में प्रकरण–वक्रता की मीमांसा की है। प्रबंध के एक देश अथवा कथा के एक प्रसंग को प्रकरण कहते हैं। प्रबंध के एक देश की वक्रता 'प्रकरण–वक्रता' के नाम से जानी जाती है –

"प्रबन्धस्यैकदेशानां"[12]

प्रकरण–वक्रता के कुंतक ने नौ भेद बताये हैं, जिनमें से एक भेद है – पात्र–प्रवृत्ति वक्रता (भावपूर्ण स्थिति की उद्‌भावना)। जहाँ काव्य में भावपूर्ण स्थिति की उद्‌भावना की जाए जो पात्रों के चरित्र का उत्कर्ष करें वहाँ 'भावपूर्ण स्थिति की उद्‌भावना रूपी प्रकरण वक्रता' होती है। इसे पात्र–प्रवृत्ति वक्रता भी कहते हैं।

'प्रियप्रवास' में पात्र प्रवृत्ति वक्रता का उदाहरण दर्शनीय है –

"दोनों प्यारे कुँवर वर को यान पै देख बैठा।
आवेगों से विपुल विवशा हो उठीं नन्दरानी।
आसूँ आते युगल दृग से वारि–धारा बहा के।
बोली दीना सदृश पति से दग्ध हो हो दुःखों से।"[13]

इस पद्य में यशोदा और नंद के भावों का उत्कर्ष द्योतित कर पात्रों की भावपूर्ण स्थिति को बताया गया है।

6. प्रबंध–वक्रता

प्रबंध वक्रता वस्तुतः प्रबंध कौशल का ही अन्य नाम है। इसमें कवि अथवा नाटककार की निर्माण कुशलता, प्रतिभा, कल्पना एवं मौलिकता का परिचय मिलता है।

"लोकोत्तर एवं अति सुन्दर महाकाव्य, नाटक आदि के निर्माण करने की अपूर्व क्षमता ही कुन्तक की प्रबंध वक्रता या प्रबंध कौशल है।"[14]

महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक आदि प्रबंध वक्रता के अन्तर्गत आते हैं। प्रकरणों तथा अंगो के सरस एवं सुसंगठित होने से प्रबंध चमत्कृत हो जाता है। प्रत्येक प्रकरण रूपी अंग को समेटकर सुन्दर सुगठित प्रबंध की रचना करना कवि प्रतिभा को दर्शाती है । वस्तुतः यह कवि की प्रतिभा का ही पर्याय है।

आचार्य कुन्तक ने प्रबंध–वक्रता के छह भेद स्वीकार किये हैं। जिनमें से एक भेद है – नामकरण वक्रता (प्रधान कथा का द्योतक नाम)।

प्रबंध कथा के अन्तर्गत नाम में रहस्य छिपा रहता है। उससे मूल कथावस्तु का पता लग जाता है कि इस प्रबंध कथा में क्या बताया गया है? इसके नायक नायिका कौन हैं ? जैसे – प्रियप्रवास, मुद्राराक्षस, अभिज्ञानशाकुन्तलम् आदि।

'प्रियप्रवास' से तात्पर्य है कि प्रिय का प्रवासी हो जाना अर्थात् कृष्ण ब्रज छोड़कर प्रवास के लिए मथुरा चले गये, ब्रज स्त्रियाँ और पुरुष अपने प्रिय के लिए व्याकुल रहने लगे।

अतः 'प्रियप्रवास' अभिधान सम्पूर्ण कथावस्तु का बोध कराने में सहायक है। इसलिए यहाँ प्रबंध वक्रता का भेद नामकरण वक्रता (प्रधान कथा का द्योतक नाम) देखने को मिलता है।

हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' में वक्रोक्ति के विभिन्न भेद–उपभेदों का प्रयोग भाषा में नवीनता लाने, चमत्कार उत्पन्न करने, काव्य को सरस एवं मार्मिक बनाने की दृष्टि से किया है। 'प्रियप्रवास' के सभी सर्गों में वक्रोक्ति विधान जगह–जगह देखने को मिलता है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. जयप्रकाश नारायण, माघ में वक्रोक्ति, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 70
2. डॉ. अशोक के शाह, भारतीय काव्यशास्त्र, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 1999, पृ. 150
3. डॉ. अशोक के शाह, भारतीय काव्यशास्त्र, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 1999, पृ. 150
4. डॉ. अशोक के शाह, भारतीय काव्यशास्त्र, वही, पृ. 150
5. डॉ जयमन्त मिश्र, काव्यात्म मीमांसा, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, वि.सं. 2021, पृ. 227
6. डॉ. रमाकान्त पाण्डेय, वक्रोक्तिजीवितम् (प्रथमोन्मषः), जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर, 2016, पृ. 135
7. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012, पृ. 62
8. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, वही, पृ. 49
9. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, वही, पृ. 67
10. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, वही, पृ. 79
11. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, वही, पृ. 81
12. हिन्दी वक्रोक्तिजीवितः 4।।5।।
13. पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्रियप्रवास, वही, पृ. 96
14. डॉ. जयप्रकाश नारायण, माघ में वक्रोक्ति, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 114–115

मो. 9079000064 ईमेल : dineshkumarbarola@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 77-80
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मणिपुर में सशस्त्र विद्रोह

डॉ. शक्ति जायसवाल, एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग,
बुद्ध विद्यापीठ पी0जी0 कॉलेज, नौगढ़–सिद्धार्थनगर

मणिपुर भारत का पूर्वोत्तर का एक राज्य है जिसकी राजधानी इंफाल है। भौगोलिक रूप से उत्तर में इसके नागालैंड ,दक्षिण में मिजोरम, पश्चिम में असम , पूर्व में इसकी सीमा म्यांमार (बर्मा) से मिलती है । वनस्पति और जीव की विविधताओं से भरपूर मणिपुर के भौगोलिक क्षेत्र का 67% हिस्सा पहाड़ी इलाकों से ढका हुआ जंगल है। भौगोलिक संरचना के नजरिए से मणिपुर को एक फुटबॉल स्टेडियम की तरह देखा जा सकता है जिसमें इंफाल वैली बिल्कुल सेंटर में प्ले फील्ड है और बाकी चारों तरफ के पहाड़ी इलाके गैलरी की तरह है चार हाईवे है ,जिनमें दो प्रदेश की लाइफ लाइन है ,ये दो हाईवे मणिपुर को बाकी दुनिया से जोड़ते हैं ।

मणिपुर की जनसंख्या लगभग 30 से 35 लाख है। यहां तीन मुख्य समुदाय हैं मैतेई , नागा और कुकी। ज्यादातर मैतेई हिंदू है, कुछ मुसलमान भी है। जनसंख्या में मैतेई ही ज्यादा है। मणिपुर की कुल आबादी में मैतेई समुदाय की हिस्सेदारी 64 फ़ीसदी से भी ज्यादा है, किंतु मणिपुर के मात्र 10% भूभाग (मुख्य रूप से इंफाल वैली) में ही गैर जनजाति मैतेई समुदाय का दबदबा है। 90% इलाका मणिपुर का पहाड़ी भौगोलिक क्षेत्र है, जिसमें प्रदेश की 35 फ़ीसदी मान्यता प्राप्त जनजातियां रहती हैं , इसमें भी नागा और कुकी जनजाति की जनसंख्या ज्यादातर है। नागा और कुकी अधिकतर ईसाई है और मुख्यतः जनजाति में आते हैं। राजनीतिक प्रतिनिधित्व के दृष्टिकोण से देखें तो मणिपुर के कुल 60 विधायकों में 40 विधायक मैतेई समुदाय से हैं और बाकी 20 नागा और कुकी जनजाति से आते हैं। अब तक हुए 12 मुख्यमंत्री में से दो ही जनजाति से थे।

मई 2023 से मणिपुर में आंतरिक सशस्त्र विद्रोह की घटनाएं बहुत ज्यादा हुई हैं, इस दौरान 237 मौतें, 1500 से ज्यादा लोग जख्मी, 60 हजार लोग अपना घर छोड़कर रिलीफ कैंप में रह रहे हैं , करीब 11000 एफ आई आर दर्ज की गई है, 500 लोगों को अरेस्ट किया गया है। इस दौर में महिलाओं की न्यूड परेड, गैंगरेप, जिंदा जलाना, गला काटना जैसी घटनाओं ने देश को दहला दिया है । इन हिंसक घटनाओं की शुरुआत का मुख्य कारण मैतेई समुदाय के जनजाति आरक्षण दर्जा की मांग रही है , जिसको नागा और कुकी जनजाति द्वारा अपनी अस्मिता पर संकट बताया जाता रहा है। मैतेई ट्राइब यूनियन की याचिका पर सुनवाई करते हुए मणिपुर हाई कोर्ट ने राज्य सरकार को 19 अप्रैल 2023 को 10 साल पुरानी केंद्रीय जनजाति मामले के मंत्रालय की सिफारिश प्रस्तुत करने के लिए कहा था, जिसमें मैतेई समुदाय को जनजाति का दर्जा देने के लिए कहा गया है। शेड्यूल ट्राइब डिमांड समिति मणिपुर (एसटीडीसीएम) 2012 से ही मैतेई समुदाय को जनजाति का दर्जा देने की मांग कर रहा था याचिका कर्ताओं का तर्क था कि 1949 में मणिपुर का भारत में विलय हुआ उससे पहले मैतेई को यहां जनजाति का दर्जा मिला हुआ था । उनकी दलील थी कि मैतेई को जनजाति का दर्जा इस समुदाय उसके पूर्वज की जमीन, परंपरा ,संस्कृति और भाषा की रक्षा के लिए जरूरी है। एसटीडीसीएम ने कहा था कि मैतेई को बाहरियों के आक्रमण से बचने के लिए संवैधानिक कवच की जरूरत है उनका तर्क है कि मैतेई को जानबूझकर पहाड़ों से अलग किया जा रहा है, जबकि जिन्हें जनजाति का दर्जा मिला हुआ है वह सिकुड़ते हुए इंफाल वैली में जमीन खरीद सकते हैं । मैतेई का तर्क है कि वर्षों पहले उनके राजाओं ने म्यांमार से कुकी जनजाति को अपने यहां युद्ध लड़ने के लिए बुलाया था ,उसके बाद यह स्थाई निवासी यहां आकर हो गए । यह लोग रोजगार के लिए जंगल काटे, अफीम की खेती करने

लगे, जिससे मणिपुर ड्रग तस्करी का ट्रायंगल बन गया । इन्होंने नागा लोगों से लड़ने के लिए आर्म्स ग्रुप बना लिए ।

मणिपुर के मौजूदा जनजाति समूहों का कहना है कि मैतेई का जनसांख्यिकी और सियासी दबदबा है.इसके अलावा ये पढ़ने–लिखने के साथ अन्य मामलों में भी आगे हैं. यहाँ के जनजाति समूहों को लगता है कि अगर मैतेई को भी जनजाति का दर्जा मिल गया तो उनके लिए नौकरियों के अवसर कम हो जाएंगे और वे पहाड़ों पर भी ज़मीन ख़रीदना शुरू कर देंगे. ऐसे में वे और हाशिए पर चले जाएंगे.ऑल ट्राइबल स्टूडेंट्स यूनियन ऑफ़ मणिपुर का कहना है कि मैतेई समुदाय की भाषा संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल है और इनमें से कइयों को अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति और इकोनॉमिकली वीकर सेक्शन यानी ईडब्ल्यूएस का फ़ायदा मिल रहा है.

लेकिन हिंसा के पीछे कुछ और कारण होने की बात भी कही जा रही है. जैसे मणिपुर में सरकार के समर्थकों का कहना है कि जनजाति समूह अपने हितों को साधने के लिए मुख्यमंत्री एन बीरेन सिंह को सत्ता से हटाना चाहते हैं क्योंकि उन्होंने ड्रग्स के ख़िलाफ़ जंग छेड़ रखी है. प्रदेश में बीरेन सिंह की सरकार अफ़ीम की खेती को नष्ट कर रही है और कहा जा रहा है कि इसकी मार म्यांमार के अवैध प्रवासियों पर भी पड़ रही है. जिन्हें म्यांमार से जुड़ा अवैध प्रवासी बताया जा रहा है, वे मणिपुर के कुकी और ज़ोमी जनजाति से ताल्लुक रखते हैं. 02 मई को सीएम एन बीरेन सिंह ने एक ट्वीट किया था. चुराचंदपुर में पुलिस ने दो लोगों के पास से 16 किलो अफ़ीम बरामद की थी. उसी पर मुख्यमंत्री ने लिखा था कि 'ये लोग हमारे वनों को बर्बाद कर रहे हैं और सांप्रदायिक मुद्दे को अपने ड्रग्स बिज़नेस के लिए भड़का रहे हैं. तो यानी ये भी एक साम्प्रदायिक मुद्दा है जिसका ज़िक्र मुख्यमंत्री कर रहे हैं।

इस प्रकार यह ध्यान देने की जरूरत है कि मणिपुर हाई कोर्ट ने मैतेई समुदाय को जनजाति का दर्जा देने का आदेश नहीं दिया था , बल्कि एक ऑब्जरवेशन किया था , जिसमें हाई कोर्ट ने राज्य सरकार से कहा था कि वह मैतेई समुदाय को जनजाति का दर्जा दिए जाने को लेकर विचार करें। लेकिन कोर्ट के इस ऑब्जरवेशन को गलत समझ गया और अगले दिन मणिपुर विधानसभा की हिल एरियाज कमेटी ने सर्वसम्मत से एक प्रस्ताव पारित किया और कहा कि वह कोर्ट के इस आदेश से दुखी है उनका कहना था कि कमेटी एक संवैधानिक संस्था है और उससे भी परामर्श नहीं लिया गया पहाड़ी इलाकों से चुने गए सभी विधायक हिल एरियाज कमेटी के सदस्य हैं ,चाहे वह भले ही भारतीय जनता पार्टी के हो। वर्तमान में भारतीय जनता पार्टी के डी गैंगमे इसके अध्यक्ष है। 03 मई 2023 को ऑल ट्राइबल स्टूडेंट यूनियन मणिपुर ने "आदिवासी एकजुटता रैली" आयोजित की, यह रैली राजधानी इंफाल से करीब 65 किलोमीटर दूर चुराचांदपुर जिले के तोरबंग इलाके में हुई, जिसमें हजारों की संख्या में लोग शामिल थे । इस दौरान जनजाति समुदायों का दूसरे समुदायों से झड़पे हुयी और उसके बाद यह हिंसा दूसरी जगह पर भी फैल गई।

04 मई 2023 को हथियारों से लैस 1000 लोगों की भीड़ (मैतेई समुदाय) ने मणिपुर के कांगपोकपी जिले के . बी . फेनोम गांव में प्रवेश किया, घरों में तोड़फोड़ की, भीड़ ने हत्या और महिलाओं का यौन उत्पीड़न किया, इसमें दो महिलाएं (कुकी समुदाय) जिनकी उम्र कम से 20 साल और 40 साल थी, इनके भाई ,इनके पति की हत्या कर दी गई और इन्हें निर्वस्त्र कर घूमने का भयावह वीडियो बनाया गया जो 19 जुलाई को सामने आया, तो पूरे देश में आग लग गई।

विद्रोह के कारणः

1. राजनीतिक असंतोषः मणिपुर के भारत में विलय के बाद से ही, स्थानीय लोग राजनीतिक असंतोष महसूस करते रहे हैं। उन्हें लगता है कि केंद्र सरकार ने उनके मुद्दों को नजरअंदाज किया है।

2. जातीय विविधता और संघर्षः मणिपुर में कई जातीय समूह हैं, जिनमें मैतेई, नागा, कुकी, और ज़ोमी शामिल हैं। ये समूह अपने–अपने सांस्कृतिक, राजनीतिक, और आर्थिक अधिकारों की मांग करते हैं। जातीय संघर्ष भी विद्रोह का एक प्रमुख कारण है।

3. आर्थिक पिछड़ापनः मणिपुर आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ है। बेरोजगारी, बुनियादी ढांचे की कमी, और विकास के अभाव ने युवाओं को विद्रोहियों की ओर आकर्षित किया है।

4. संस्कृति और पहचान का संरक्षणः मणिपुर के कई जातीय समूह अपनी संस्कृति, भाषा, और परंपराओं के संरक्षण की मांग करते हैं। उन्हें डर है कि उनकी पहचान खो जाएगी।

प्रमुख विद्रोही समूहः—

1. यूनाइटेड नेशनल लिबरेशन फ्रंट (UNLF): 1964 में स्थापित, यह मणिपुर का सबसे पुराना विद्रोही समूह है। इसका उद्देश्य मणिपुर की स्वतंत्रता है।

2. पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (PLA): 1978 में स्थापित, यह मणिपुर को स्वतंत्र करने के लिए सशस्त्र संघर्ष कर रहा है।

3. पीपुल्स रिवोल्यूशनरी पार्टी ऑफ कांग्लेपाक (PREPAK): 1977 में स्थापित, यह समूह भी मणिपुर की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा है।

4. कुकी नेशनल आर्मी (KNA) और ज़ोमी रिवोल्यूशनरी आर्मी (ZRA): ये समूह कुकी और ज़ोमी जनजातियों के लिए स्वायत्तता की मांग करते हैं।

5. नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड (NSCN&IM): यह समूह नागा क्षेत्रों को "ग्रेटर नागालिम" में शामिल करने की मांग करता है। इसका मणिपुर के नागा बहुल क्षेत्रों में प्रभाव है।

प्रमुख घटनाएंः—

1. इंफाल घाटी में विद्रोहः 1980 के दशक में इंफाल घाटी में कई सशस्त्र विद्रोही समूह सक्रिय हो गए। उन्होंने सरकारी संस्थानों पर हमले किए और गुरिल्ला युद्ध छेड़ा।

2. जातीय हिंसाः 1990 के दशक में नागा और कुकी समुदायों के बीच तीव्र जातीय संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में सैकड़ों लोग मारे गए और हजारों विस्थापित हुए।

3. 2001 का विवादः भारत सरकार और NSCN&IM के बीच संघर्ष विराम को मणिपुर तक विस्तारित करने का प्रयास किया गया। इससे इंफाल में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए, क्योंकि स्थानीय लोग इसे मणिपुर की क्षेत्रीय अखंडता के लिए खतरा मानते थे।

मणिपुर में दोबारा हालात क्यों बिगड़े

- 11 नवंबरः सुरक्षाबलों ने जिरिबाम में 10 कुकी उग्रवादियों को मार गिराया था। मुठभेड़ के दौरान कुकी उग्रवादियों ने 6 मैतेई (3 महिलाओं, 3 बच्चों) को किडनैप किया था।
- 15—16 नवंबरः किडनैप हुए छह लोगों में से पांच के शव बरामद हुए।
- 16 नवंबरः CM एन बीरेन सिंह और भाजपा विधायकों के घरों पर हमले हुए थे। वहीं, कुछ मंत्रियों सहित भाजपा के 19 विधायकों ने CM बीरेन सिंह को हटाने की मांग करते हुए प्रधानमंत्री कार्यालय (PMO) को पत्र लिखा
- 17 नवंबरः रात में जिरिबाम जिले में पुलिस की गोली से मैतेई प्रदर्शनकारी की मौत हो गई थी, जिसके बाद से हालात और बिगड़ गए। CRPF के डीजी अनीश दयाल सिंह 17 नवंबर को हिंसा का जायजा लेने के लिए मणिपुर पहुंचे।
- 18 नवंबरः अगवा हुई आखिरी महिला का शव मिला।

मणिपुर के 5 जिलों के 6 थानों में फिर से आर्म्ड फोर्सेस स्पेशल प्रोटेक्शन एक्ट (AFSPA) लागू कर दिया गया है। यह 31 मार्च 2025 तक प्रभावी रहेगा। गृह मंत्रालय ने गुरुवार को इसका आदेश जारी किया। गृह मंत्रालय के आदेश में इम्फाल पश्चिम जिले का सेकमई और लमसांग, इम्फाल पूर्व जिले का लाम्लाई, जिरिबाम जिले का जिरिबाम, कांगपोकपी का लेइमाखोंग और बिष्णुपुर जिले का मोइरंग थाना शामिल है।

सरकार के प्रयासः

1. सैन्य कार्रवाईः मणिपुर में विद्रोह को नियंत्रित करने के लिए सेना और अर्धसैनिक बलों की तैनाती की गई। सशस्त्र बल (विशेष शक्तियां) अधिनियम (AFSPA) 1980 से मणिपुर में लागू है, जिससे सुरक्षा बलों को व्यापक अधिकार प्राप्त हैं।

2. शांति वार्ताः भारत सरकार ने कई विद्रोही समूहों के साथ शांति वार्ता शुरू की है। NSCN-IM के साथ 1997 से संघर्ष विराम और वार्ता चल रही है।

3. विकास योजनाएंः मणिपुर के आर्थिक विकास के लिए विशेष योजनाएं लागू की गई हैं। बुनियादी ढांचे के विकास और रोजगार सृजन पर जोर दिया गया है।

4. स्वायत्त क्षेत्रीय परिषदें: कुछ क्षेत्रों को स्वायत्तता देने के लिए क्षेत्रीय परिषदों की स्थापना की गई है, ताकि स्थानीय समुदायों की मांगों को संबोधित किया जा सके।

चुनौतियां:

1. जातीय तनाव: मणिपुर में जातीय समूहों के बीच तनाव बना हुआ है, जो शांति प्रक्रिया में बाधा डालता है।

2. सशस्त्र बलों की कार्रवाई: AFSPA के तहत सुरक्षा बलों की कार्रवाई को लेकर मानवाधिकारों के उल्लंघन के आरोप लगते रहे हैं, जिससे स्थानीय लोगों में असंतोष बढ़ता है।

3. विकास और रोजगार: मणिपुर में अभी भी आर्थिक पिछड़ापन और बेरोजगारी की समस्या है, जो विद्रोह को हवा देती है।

निष्कर्ष: मणिपुर में विद्रोह एक जटिल समस्या है, जिसमें राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक कारक शामिल हैं। इसका समाधान केवल सैन्य कार्रवाई से नहीं हो सकता। इसके लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें राजनीतिक संवाद, आर्थिक विकास, और जातीय समूहों की आकांक्षाओं को ध्यान में रखा जाए। शांति और स्थिरता के लिए सभी पक्षों के बीच विश्वास बहाली और संवाद आवश्यक है।

संदर्भ सूची:

1. Singh, K. S. Manipur: A Study in Land and People. New Delhi: National Book Trust, 1982.
2. Das, Samir Kumar. Conflict and Peace in India's Northeast: The Role of Civil Society. Washington: East-West Center, 2007.
3. Hazarika, Sanjoy. Strangers of the Mist: Tales of War and Peace from India's Northeast. New Delhi: Penguin Books, 1994.
4. Bhaumik, Subir. Insurgent Crossfire: North-East India. New Delhi: Lancer Publishers, 1996
5. Singh, K. S. Manipur: A Study in Land and People. New Delhi: National Book Trust, 1982.
6. Nag, Sajal. India and North-East India: Mind, Politics and the Process of Integration, 1946-1950. New Delhi: Regency Publications, 1998.

समाचार पत्र एवं पत्रिका

1 बीबीसी हिंदी खबर
2 दैनिक भास्कर
3 वर्ल्ड फोकस

E-Mail: shaktijaiswal59@gmail.com Mob: 9838606388

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 81-84
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ : ਨਾਟ-ਸੰਵਾਦ

ਡਾ. ਸੋਨੀਆ ਦੇਵੀ, ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ,
ਦਸਮੇਸ਼ ਗ਼ਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ ਚੱਕ ਅੱਲ੍ਹਾ ਬਖਸ਼, ਮੁਕੇਰੀਆਂ ਪਿੰਨ ਕੋਡ : 144211

ਸਾਰ (Abstract)

'ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ' ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਦੁਆਰਾ ਲਿਖਿਆ ਸਿਆਸੀ ਵਿਅੰਗ ਦੀ ਵਿਧੀ ਰਾਹੀਂ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਸਿਆਸਤ ਦੇ ਪਾਜ ਉਘਾੜਨ ਵਾਲਾ ਨੁੱਕੜ ਨਾਟਕ ਹੈ।ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਲੋਕ ਪੀੜ ਨੂੰ ਅਨੁਭਵ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਨਾਟਕਕਾਰ ਤੇ ਰੰਗਕਰਮੀ ਹੈ।ਉਸਨੂੰ ਮਾਨਵਤਾ ਨਾਲ ਪ੍ਰੇਮ ਹੈ।ਮੁਲਕ ਦੀਆਂ ਵਿਭਿੰਨ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖ ਕੇਂਦ੍ਰਿਤ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜਦੋਂ ਉਹ ਗਿਰਾਵਟ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਭਰੋਸਾ ਗੁਆ ਬਹਿੰਦੀਆਂ ਹਨ ਤਾਂ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਇਸਦੇ ਪਿੱਛੇ ਲੁਕੇ ਕਾਰਨਾਂ ਦੀ ਪੜਚੋਲ ਕਰਨ ਦਾ ਰਾਹ ਫੜਦਾ ਹੈ।ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਸਟੇਟ ਦੀ ਜਿੰਮੇਵਾਰੀ ਤੈਅ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਉਸਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਸਮਾਜ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਬਰਾਬਰੀ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਰਾਹੀਂ ਉਸਾਰੀ ਜਾਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ।ਉਸ ਦੀ ਖ਼ੂਬੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਪੂਰੇ ਸਿਸਟਮ ਦੀ ਸਿਆਸਤ ਪਹਿਲਾਂ ਸੰਜੀਦਗੀ ਨਾਲ ਸਮਝਦਾ ਹੈ ਤੇ ਫਿਰ ਪ੍ਰਤੀਕਿਰਿਆ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।ਹਥਲੇ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਰਾਜਸੀ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਦੁਆਰਾ ਸਾਧਾਰਨ ਬੰਦੇ ਦੀ ਲੁੱਟ, ਸਰਕਾਰੀ ਦਫਤਰਾਂ ਅੰਦਰਲੀ ਰਿਸ਼ਵਤਖੋਰੀ, ਵਸੂਲੇ ਜਾਂਦੇ ਮਹੀਨਿਆਂ, ਹਸਪਤਾਲਾਂ ਅੰਦਰ ਹੁੰਦੀ ਬੇਗ਼ੌਰੀ ਵਰਗੇ ਜ਼ਮੀਨੀ ਮਸਲਿਆਂ ਨੂੰ ਅਗ੍ਰਭੂਮਿਤ ਕਰਕੇ ਸਮਰਿੱਧ ਸਮਾਜ ਸਿਰਜਣ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਦੇਣ ਵਿੱਚ ਵਧੇਰੇ ਹੈ।

ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਨਾਟਕੀ ਵਿਧਾ ਦੀ ਵਿਲੱਖਣਤਾ ਬਾਰੇ ਵਿਚਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਆਖਦਾ ਹੈ ਕਿ, "ਨਾਟਕ ਨਿਜਾਮ ਅੰਦਰ ਵਾਪਰਦੇ ਵਰਤਾਰੇ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਪਕੜਨ ਵਾਲੀ ਵਿਧਾ ਹੈ।"[1] ਨਾਟਕਕਾਰ ਨਿਜਾਮ ਦੇ, ਸਮਾਜ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਵਿਰੋਧੀ ਵਰਤਾਰਿਆਂ ਨੂੰ ਕਲਮਬੱਧ ਕਰਕੇ ਮੰਚੀ ਵਿਧਾਨ ਸਿਰਜਦਾ ਹੋਇਆ ਜਨ ਸਾਧਾਰਨ ਨੂੰ ਸੱਚ ਦੇ ਰੂ-ਬ-ਰੂ ਕਰਾਉਂਦਾ ਹੈ।ਸੰਬੰਧਿਤ ਨਾਟਕ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕਕਾਰ ਰਾਜਸੀ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸਾਧਾਰਨ ਬੰਦੇ ਦੀ ਲੁੱਟ ਨੂੰ ਸਪਾਟ ਬਿਆਨ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ ਸਗੋਂ ਕਲਾ ਰਾਹੀਂ ਹਾਕਮਾਂ ਦੇ ਕਿਰਦਾਰ ਉਘਾੜਦਾ ਹੈ।ਕਿਸੇ ਰਾਜ ਦੀ ਸਾਧਾਰਨ ਜਨਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਕੀ ਜਵਾਬਦੇਹੀ ਬਣਦੀ ਹੈ ਇਸਨੂੰ ਦਰਸਾਉਂਦਾ ਹੈ।ਫਰੈਡਰਿਕ ਏਂਗਲਜ਼ ਲਿਖਦਾ ਹੈ, "ਰਾਜ ਕੋਈ ਅਜਿਹੀ ਸ਼ਕਤੀ ਨਹੀਂ ਜਿਹੜੀ ਸਮਾਜ ਉੱਤੇ ਬਾਹਰੋਂ ਠੋਸੀ ਗਈ ਹੋਵੇ.... ਸਗੋਂ ਇਹ ਉਹਦੇ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਇਕ ਖਾਸ ਪੜਾਅ ਉੱਤੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਇਕ ਉਪਜ ਹੈ।"[2] ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਵਿਚਰਦੀਆਂ ਵਿਭਿੰਨ ਸ਼੍ਰੇਣੀਆਂ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਹਿੱਤ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਬੁਨਿਆਦੀ ਲੋੜਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰਾ ਕਰਨ ਲਈ ਰਾਜ ਦੀ ਨੀਤੀ ਕਿਵੇਂ ਕਾਰਜ ਕਰ ਸਕਦੀ ਹੈ? ਜਾਂ ਕਿਸ ਆਸੇ ਤਹਿਤ ਸਮਾਜ ਵਿਕਾਸ ਕਰੇਗਾ? ਇਹ ਰਾਜ ਦੀ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰੀ ਹੈ।ਜੇਕਰ ਹਾਕਮ ਦੀ ਨੀਅਤ

ਜਨਸਾਧਾਰਨ ਦੇ ਜੀਵਨ ਪੱਧਰ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਚੁੱਕਣ ਦੀ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਰਾਜ ਦਾ ਸੰਚਾਲਨ ਮਾਨਵ ਕੇਂਦ੍ਰਿਤ ਹੋਵੇਗਾ ਨਾ ਕਿ ਸਵੈ ਕੇਂਦ੍ਰਿਤ।"ਜੋ ਕੁੱਝ ਹਾਕਮ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਲਈ ਚੰਗਾ ਹੈ ਉਹ ਸਮੁੱਚੇ ਸਮਾਜ ਲਈ ਚੰਗਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।"[3] ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਇਸੇ ਸਵਾਲ ਦੀ ਤਹਿ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਦਾ ਹੈ ਕਿ ਹਾਕਮਾਂ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿੱਚ ਚੰਗਾ ਦਿਖਾਈ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਕਾਰਜ ਸਮਾਜ ਲਈ ਚੰਗਾ ਸਾਬਤ ਕਿਉਂ ਨਹੀਂ ਹੋ ਰਿਹਾ?

ਨਾਟਕ 'ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ' ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਦੌਰਾਨ ਉੱਘੜਦਾ ਨਾਟ-ਸੰਵਾਦ ਬੇਹਦ ਦਿਲਚਸਪ ਵਿਧਾ ਰਾਹੀਂ ਦਰਸ਼ਕਾਂ ਸਾਹਮਣੇ ਉਜਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਪਾਠਕ ਪੜ੍ਹਤ ਦੌਰਾਨ ਵੀ ਨਾਟਕੀ ਪਿੜ ਨੂੰ ਮਾਨਸਿਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਾਂ ਰਾਹੀਂ ਮਾਣ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਇਹੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਨਾਟਕ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਬਣਦੇ ਹਨ।ਲੋਕ ਨਾਟ-ਵਿਧਾ ਮਦਾਰੀ-ਜਮੂਰੇ ਦੇ ਕਿਰਦਾਰਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸਿਆਸੀ ਸਥਿਤੀਆਂ ਉਜਾਗਰ ਕੀਤੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ।ਜਮੂਰਾ(ਭੰਬਾ ਭਓ) ਆਪਣੀ ਉਦਾਸੀ ਦਾ ਕਾਰਨ ਆਪਣੇ ਕੋਠੇ ਦੇ ਡਿੱਗ ਜਾਣ ਨੂੰ ਦੱਸਦਾ ਹੈ।ਉਸ ਵਿੱਚ ਨਵੀਂ ਛੱਤ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਹਿੰਮਤ ਨਹੀਂ ਕਿਉਂਕਿ ਬਾਜ਼ਾਰ ਵਿੱਚ ਸੀਮੈਂਟ ਦੀ ਬਲੈਕ ਕਰਕੇ ਇਹ ਸੰਭਵ ਨਹੀਂ।ਮਦਾਰੀ (ਉਸਤਾਦ) ਉਸਨੂੰ ਸਰਕਾਰੇ ਦਰਬਾਰੇ ਅਰਜ਼ੀ ਕਰਨ ਲਈ ਆਖਦਾ ਹੈ।ਮਾਈਮ ਦੇ ਦ੍ਰਿਸ਼ਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸਾਰਾ ਕਾਰਜ ਵਾਪਰਦਾ ਦਿਖਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਮੈਂਬਰ ਮਿਊਂਸੀਪਲ ਦੇ ਦਸਤਖ਼ਤ ਲੈ ਜਦੋਂ ਅਰਜ਼ੀ ਸਰਕਾਰੀ ਦਫਤਰ ਦੇ ਇੱਕ ਅਫ਼ਸਰ ਕੋਲ ਪੁੱਜਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਭੰਬਾ ਭਓ ਨੂੰ ਅਫ਼ਸਰ ਤੇ ਕਲਰਕ ਵਲੋਂ ਗੱਧੀਗੇੜ 'ਚ ਪਾ ਦਿੱਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਆਖਿਰਕਾਰ ਰਿਸ਼ਵਤ ਦੇਣ ਪਿੱਛੋਂ ਸੀਮੇਂਟ ਮਿਲਦਾ ਹੈ ਦੇਖੋ ਸੰਵਾਦ :

ਮਦਾਰੀ : (ਦਰਸ਼ਕਾਂ ਨੂੰ) ਤਾਂ ਹਾਜ਼ਰੀਨ, ਮੇਰੇ ਭੰਬਾ ਭਓ ਨੂੰ ਸੀਮੈਂਟ ਮਿਲ ਗਿਆ ਹੈ।ਇਹ ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਕਿ ਉਹਦਾ ਕੋਠਾ ਬਣਿਆ ਏ ਕਿ ਨਹੀ ਕਿਉਂਕਿ ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਸੀਮੈਂਟ ਦੀ ਬੋਰੀ ਵਿਚ ਸੀਮੈਂਟ ਸੀ ਕਿ ਸਵਾਹ? ਇਹਦਾ ਉਪਰ ਵਾਲਾ ਏ ਗਵਾਹ।[4]

ਸਮਾਜਕ ਕਾਣੀ ਵੰਡ, ਬੇਰੁਜ਼ਗਾਰੀ, ਕਾਲਾਬਜ਼ਾਰੀ ਤੇ ਗਰੀਬੀ ਕਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਜਿਊਣਾ ਮੁਹਾਲ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਅਜਿਹੇ 'ਚ ਮਨੁੱਖੀ ਪੀੜ ਨੂੰ ਕੌਣ ਸਮਝੇਗਾ? ਘਰ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦੀ ਮੁੱਢਲੀ ਲੋੜ ਹੈ ਪਰ ਭੰਬਾ ਭਓ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਦੱਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਹੁਤੇ ਲੋਕ ਛੱਤਾਂ ਤੋਂ ਵਾਂਝੇ ਹਨ।

ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਸਰਕਾਰੀ ਹਸਪਤਾਲਾਂ ਦੀ ਹਾਲਤ ਅਤੇ ਬੇਗ਼ੌਰੀ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋ ਮੌਤ ਦੇ ਮੂੰਹ 'ਚ ਜਾ ਡਿੱਗਣ ਵਾਲੇ ਸਾਧਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਪੀੜ ਨੂੰ ਵੀ ਜ਼ੁਬਾਨ ਦਿੱਤੀ ਹੈ।ਪੱਥਰੀ ਦੀ ਪੀੜ ਕਾਰਨ ਹਸਪਤਾਲ 'ਚ ਇਲਾਜ ਲਈ ਪਹੁੰਚਿਆ ਭੰਬਾ ਭਓ ਡਾਕਟਰਾਂ ਦੀ ਲਾਪਰਵਾਹੀ ਅਤੇ ਹਸਪਤਾਲ ਵਿੱਚ ਮੁੱਢਲੀਆਂ ਲੋੜਾਂ ਦੀ ਅਣਹੋਂਦ ਕਾਰਨ ਮਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਦੇਖੋ ਸੰਵਾਦ;

ਡਾਕਟਰ : ਕੰਪਾਊਡਰ, ਇਹ ਮਰੀਜ਼ ਏ, ਜਿਸ ਦੇ ਪੇਟ ਵਿਚ ਪੱਥਰੀ ਏ?

ਕੰਪਾਊਡਰ : ਹਾਂ ਇਹੋ ਹੀ ਮਰੀਜ਼ ਏ।

ਡਾਕਟਰ : ਇਹਦਾ ਓਪਰੇਸ਼ਨ ਹੋਵੇਗਾ ਕੀ ਗੁਲੂਕੋਸ ਹੈ?

ਕੰਪਾਊਡਰ : ਜਨਾਬ ਉਹ ਤਾਂ ਪਿਛਲੇ ਮਹੀਨੇ ਦਾ ਮੁੱਕਿਆ ਹੋਇਆ ਏ।

ਡਾਕਟਰ : ਬਲੱਡ ਬੈਂਕ ਵਿਚ ਬਲੱਡ ਦਾ ਇੰਤਜ਼ਾਮ ਹੈ?

ਕੰਪਾਊਡਰ : ਉਹ ਤਾਂ ਵਜ਼ੀਰ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਪੁੱਤਰ ਨੂੰ ਸਾਰਾ ਲੱਗ ਗਿਆ ਸੀ।

ਡਾਕਟਰ : ਓਏ ਵਜ਼ੀਰ ਸਾਹਿਬ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਖ਼ੂਨ ਪੀ ਜਾਂਦੇ ਨੇ ਤਾਂ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਹਸਪਤਾਲ ਦਾ... ਕੀ ਟੀਕੇ ਹਨ?

ਕੰਪਾਊਡਰ : ਜੀ ਉਹ ਵੀ ਆਊਟ ਆਫ਼ ਸਟਾਕ ਨੇ

ਡਾਕਟਰ : ਮਰੀਜ਼ ਦਾ ਕੋਈ ਵਾਲੀ ਵਾਰਸ ਹੈ?[5]

ਡਾਕਟਰ ਵੱਲੋਂ ਉਸਤਾਦ ਨੂੰ ਬਲੱਡ, ਗੁਲੂਕੋਸ ਅਤੇ ਟੀਕਿਆਂ ਦਾ ਇੰਤਜ਼ਾਮ ਕਰਨ ਲਈ ਆਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਉਸਤਾਦ ਵੱਲੋਂ ਪੁੱਛਣ ਤੇ ਕਿ ਸਰਕਾਰੀ ਹਸਪਤਾਲ ਵਿੱਚ ਤਾਂ ਹਰ ਇੱਕ ਚੀਜ਼ ਮੁਫ਼ਤ ਮਿਲਦੀ ਏ, ਡਾਕਟਰ ਦੱਸਦਾ ਹੈ ;

ਡਾਕਟਰ : ਓਏ ਇਹ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ ਦੀ ਸਰਕਾਰ ਦਾ ਸਰਕਾਰੀ ਹਸਪਤਾਲ ਏ, ਇਥੇ ਹੁੰਦੀ ਹਰ ਇਕ ਚੀਜ਼ ਮੁਫਤ ਏ, ਪਰ ਹੁੰਦੀ ਕੋਈ ਨਹੀਂ।ਲਗਦਾ ਏ ਕਿ ਇਹਦੇ ਪੇਟ ਵਿਚ ਪੱਥਰੀ ਏ ਤੇ ਤੇਰੇ ਦਿਮਾਗ ਵਿਚ ਪੱਥਰ ਏ... ਜਿਹੜਾ ਏਨੀ ਗੱਲ ਵੀ ਨਹੀਂ ਸਮਝਦਾ।[6]

ਉਸਤਾਦ ਕੋਲੋਂ ਓਪਰੇਸ਼ਨ ਦੌਰਾਨ ਦਸਤਖ਼ਤ ਲੈ ਲਏ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਮਰੀਜ਼ ਦੇ ਹਰਜ਼ ਮਰਜ ਦੀ ਜਿੰਮੇਵਾਰੀ ਹਸਪਤਾਲ ਜਾਂ ਇਸਦੇ ਕਿਸੇ ਅਧਿਕਾਰੀ ਦੀ ਨਹੀਂ ਹੋਵੇਗੀ।ਜਿੱਥੇ ਸਿਹਤ ਸਹੂਲਤਾਂ ਕੇਵਲ ਨਾਂ ਦੀਆਂ ਹੀ ਹੋਣ, ਭਰਮ ਸਿਰਜਣ ਉੱਥੇ ਸਾਧਾਰਨ ਬੰਦੇ ਦਾ ਜੀਵਨ ਅਣਹੋਇਆਂ ਵਰਗਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ, ਅਵਤਾਰ ਜੰਡਿਆਲਵੀ ਅਤੇ ਸੁਸ਼ੀਲ ਦੁਸਾਂਝ ਨਾਲ ਹੋਈ ਮੁਲਾਕਾਤੀ ਵਾਰਤਾ ਦੌਰਾਨ ਮਿਹਨਤਕਸ਼ ਲੋਕਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਆਪਣੀ ਸੋਚ/ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦੇ ਦੱਸਦੇ ਹਨ, “ਮੈਂ ਸਾਰੀ ਉਮਰ ਭਾਈ ਲਾਲੋਆਂ ਨੂੰ ਹੀ ਸੰਬੋਧਿਤ ਰਿਹਾ ਹਾਂ, ਮੇਰੀ ਸਿਆਸੀ ਪ੍ਰਤੀਬੱਧਤਾ ਵਿਚ ਵਿਗਿਆਨ ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਵੱਲੋਂ ਆਈ ਹੈ ਪਰ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਮੈਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਤੋਂ ਹੀ ਮਿਲੀ ਹੈ।”[7] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਕਿਰਤੀ ਦੋਹਾਂ ਦਾ ਰੁੱਤਬਾ ਉੱਚਾ ਦੱਸਿਆ ਹੈ।ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਨਾਨਕ ਦੀ ਧਰਤੀ ਦੇ ਵਾਸੀਆਂ ਦੀ ਹੁੰਦੀ ਲੁੱਟ ਝੰਜੋੜਦੀ ਹੈ।ਉਸਦੇ ਪਾਤਰ ਹਾਰ ਨਹੀਂ ਮੰਨਦੇ। ਜਮੂਰਾ ਅਗਲੇ ਤਮਾਸ਼ੇ ’ਚ ਆਪਣੀ ਮਾਨਸਿਕ ਸ਼ਾਂਤੀ ਗੁਆਚਣ ਦਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਜਦੋਂ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਨਾਲ ਜੂਝਣਾ ਪਏ, ਸਿਹਤ ਸਹੂਲਤਾਂ ਨਾ ਮਿਲਣ 'ਤੇ ਮੌਤ ਮਿਲੇ, ਜਿੱਥੇ ਥਾਣਿਆਂ ’ਚ ਸਿਕਾਇਤ ਦਰਜ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਹਫਤੇ ਮੰਗੇ ਜਾਣ, ਜਿੱਥੇ ਰਾਸ਼ਨ ਦੇ ਡੀਪੂਆਂ ਅੱਗੇ ਲੰਬੀਆਂ ਕਤਾਰਾਂ ਹੋਣ ਤੇ ਲੋਕ ਰਾਸ਼ਨ ਲੈਣ ਲਈ ਆਪਸ ਵਿੱਚ ਹੀ ਲੜਦੇ ਹੋਣ ਉੱਥੇ ਸਿਸਟਮ ਕੇਵਲ ਤਮਾਸ਼ਾ ਹੀ ਬਣ ਕੇ ਰਹਿ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਭੰਬਾ ਭਓ ਜਦੋਂ ਥਾਣੇ ’ਚ ਆਪਣੀ ਸਾਂਤੀ ਦੇ ਚੋਰੀ ਹੋਣ ਦਾ ਸ਼ੱਕ ਵੱਡੇ ਬੰਦਿਆਂ ਤੇ ਜਤਾਉਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਥਾਣੇਦਾਰ ਨੂੰ ਇਹ ਗੱਲ ਚੰਗੀ ਨਹੀਂ ਲੱਗਦੀ। ਭੰਬਾ ਭਓ ਨੂੰ ਨਾ ਰਾਸ਼ਨ ਨਸੀਬ ਹੋਇਆ, ਨਾ ਪਾਣੀ ਤੇ ਨਾ ਬਿਜਲੀ, ਉਹ ਥਾਣੇਦਾਰ ਸਾਹਮਣੇ ਜਾਹਰ ਕਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁੱਸੇ ਵਿੱਚ ਮੇਰੇ ਕੋਲੋਂ ਗਾਲ੍ਹਾਂ ਕੱਢਣ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਕੋਈ ਹੱਲ ਨਹੀਂ।ਉਹ ਥਾਣੇਦਾਰ ਦੇ ਡਰਾਉਣ ਤੇ ਵੀ ਡਰਦਾ ਨਹੀਂ ਤੇ ਸੱਚ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਦੇਖੋ ਸੰਵਾਦ :

ਭੰਬਾ ਭਓ : ਜੀ ਜਿਸ ਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਹਰਾ ਇਨਕਲਾਬ ਤਾਂ ਹੋਵੇ, ਪਰ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਟਾ ਨਾ ਮਿਲੇ, ਜਿਸ ਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਭਾਖੜਾ ਵਰਗੇ ਡੈਮ ਤਾਂ ਹੋਣ, ਪਰ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਬਿਜਲੀ ਨਾ ਮਿਲੇ, ਪਾਣੀ ਨਾ ਮਿਲੇ ਤਾਂ ਉਥੇ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਗਾਲ੍ਹਾਂ ਤਾਂ ਕੱਢਣੀਆਂ ਨੇ... ਤੇ ਮੈਂ ਇਲਜ਼ਾਮ ਦੀ ਉਂਗਲ ਰੱਖਦਾ ਹਾਂ, ਸਰਕਾਰਾਂ ਚਲਾਉਣ ਵਾਲਿਆਂ ’ਤੇ।

ਥਾਣੇਦਾਰ : ਓਏ ਤੂੰ ਉਂਗਲ ਰੱਖਦੈਂ? ਅਸੀਂ ਉਂਗਲ ਰੱਖਣ ਵਾਲਿਆਂ ਦੀ ਉਂਗਲ ਨਾ ਵੱਢ ਦੇਈਏ, ਐਵੇਂ ਡੰਡੇ ਲੈ ਕੇ ਖੜ੍ਹੇ ਹਾਂ... ਪਾ ਓਏ ਦੁੱਲਿਆ ਇਹਨੂੰ ਲੰਮਾ (ਲੰਮੇ ਪਏ ਨੂੰ) ਓਏ ਉੱਠ।[8]

ਨਾਟਕਕਾਰ ਮੁਲਕ ਅੰਦਰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਅਦਾਰਿਆਂ ’ਚ ਸਾਧਾਰਨ ਜਨਤਾ ਦੇ ਨਿੱਤ ਬਣਦੇ ਤਮਾਸ਼ਿਆਂ ਤੇ ਵਿਅੰਗ ਕੱਸਦਾ ਹੈ ਤੇ ਸਵਾਲ ਕਰਦਾ ਹੈ ਸਾਧਾਰਨ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਕਿ ਕੀ ਉਹ ਤਮਾਸ਼ਾਈ ਬਣਕੇ ਇਹ ਤਮਾਸ਼ਾ ਵੇਖਦੇ ਰਹਿਣਗੇ ਜਾਂ ਇਸ ਦੇ ਖਾਤਮੇ ਲਈ ਅੱਗੇ ਆਉਣਗੇ?

ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਤੇ ਸਮਰੱਥਾ ਸਮਕਾਲ ਦੀ ਹਰ ਘਟਨਾ ਜੋ ਸਾਧਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਤੇ ਡੂੰਘਾ ਅਸਰ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਨਾਟ ਸਿਰਜਣਾ ਦਾ ਕੇਂਦਰ ਬਿੰਦੂ ਬਣਾਉਣ ਵਿੱਚ ਹੈ।ਉਸ ਦੀਆਂ ਸਰਲ ਤੇ ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਲਈ ਸਿਰਜੀਆਂ ਨਾਟ ਜੁਗਤਾਂ ਸਾਧਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਥਿਤੀਆਂ ਬਾਰੇ ਸੋਚਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ।ਲੋਕ ਨਾਟ ਜੁਗਤਾਂ ਦੀ ਸੁਚੱਜੀ ਵਰਤੋਂ ਦਾ ਉਹ ਮਾਹਰ ਹੈ।ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਚੁਸਤ ਤੇ ਸਥਿਤੀਆਂ ਦੀ ਸਿੱਧੀ ਸਮਝ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਹੈ।ਨਾਟਕੀ ਪਾਤਰ ਭਾਵੇਂ ਗਰੀਬ ਹਨ, ਸਥਿਤੀਆਂ ਦੇ ਮਾਰੇ ਹਨ ਪਰ ਨਿਡਰ ਤੇ ਬਲਵਾਨ ਹਨ।ਸਮੁੱਚਾ ਨਾਟ-ਸੰਵਾਦ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਘਟਨਾਵਾਂ ਤੇ ਚਾਨਣਾ ਪਾਉਣ ਵਿੱਚ ਤੇ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਨੂੰ ਸਪਸ਼ਟ ਕਰਨ ਪੱਖੋਂ ਸਾਰਥਕ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਰੰਗਸੰਗ, ਲੜੀ – 8, ਪੰਨਾ 5
2. ਫ.ਏਂਗਲਜ਼, ਟੱਬਰ, ਨਿੱਜੀ ਜਾਇਦਾਦ ਅਤੇ ਰਾਜ ਦੀ ਉਤਪਤੀ, ਪੰਨਾ 174
3. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 182
4. ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ, ਕਰਫ਼ਿਊ, ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ, ਪੰਨਾ 46
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 47
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 48
7. ਰੰਗਸੰਗ, ਲੜੀ – 8, ਪੰਨਾ 20
8. ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ, ਕਰਫ਼ਿਊ, ਤਮਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ, ਪੰਨਾ 53

ਮੋਬਾਇਲ ਨੰ.9417783247, ਮੇਲ: Soniad721@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 85-90
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिंदी उपन्यासों में श्रमिक वर्ग संघर्ष का चित्र

प्रिंस कुमार, शोधार्थी, हिंदी विभाग ,
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय लालू नगर मधेपुरा ,बिहार

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य में हिंदी उपन्यासों का विशेष स्थान है, जो समाज के विभिन्न पहलुओं को अभिव्यक्त करने का माध्यम बने हैं। उपन्यास न केवल समाज की वास्तविकताओं का चित्रण करते हैं, बल्कि इसके माध्यम से सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक समस्याओं का विश्लेषण भी करते हैं। इनमें से एक महत्वपूर्ण विषय है श्रमिक वर्ग का संघर्ष, जो आर्थिक असमानता, शोषण और समाज में व्याप्त वर्ग भेद को उजागर करता है।

श्रमिक वर्ग, जो समाज के विकास में एक प्रमुख भूमिका निभाता है, अक्सर उपेक्षित और शोषित होता है। उपन्यासकारों ने श्रमिक वर्ग की दयनीय स्थिति, उनके संघर्ष, उनकी समस्याओं और उनके सपनों को अपने साहित्य में स्थान दिया है। स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता पश्चात दोनों ही कालखंडों में श्रमिक वर्ग के संघर्ष का चित्रण हिंदी उपन्यासों में प्रमुखता से देखा जा सकता है। यह चित्रण केवल आर्थिक शोषण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके पीछे सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याएं भी निहित हैं।

प्रेमचंद के उपन्यासों में किसान और मजदूर वर्ग के संघर्षों को गहराई से दिखाया गया है। उनकी कृतियाँ जैसे "गोदान" और "कफन" न केवल उनकी पीड़ा को व्यक्त करती हैं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था पर सवाल भी खड़ा करती हैं। इसके अतिरिक्त, नागार्जुन, यशपाल, और भीष्म साहनी जैसे उपन्यासकारों ने भी अपने साहित्य में श्रमिक वर्ग की समस्याओं और उनके संघर्षों को प्रामाणिक रूप से उकेरा है।

औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, और वैश्वीकरण के प्रभावों ने श्रमिक वर्ग के संघर्ष को और अधिक जटिल बना दिया है। हिंदी उपन्यासकारों ने इस बदलते समाज में श्रमिकों की चुनौतियों, उनके शोषण, और उनके अधिकारों के लिए चलाए जा रहे आंदोलनों को भी अपने साहित्य का हिस्सा बनाया है। ऐसे उपन्यास न केवल श्रमिक वर्ग की समस्याओं को सामने लाते हैं, बल्कि एक बेहतर समाज के निर्माण की प्रेरणा भी देते हैं।

इस शोध का उद्देश्य हिंदी उपन्यासों में श्रमिक वर्ग संघर्ष के विविध आयामों का अध्ययन करना है। यह शोध उन सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक पहलुओं की पहचान करेगा, जो श्रमिक वर्ग के संघर्ष को प्रभावित करते हैं। इसके साथ ही यह शोध साहित्य और समाज के बीच के संबंधों को उजागर करने का प्रयास करेगा, ताकि श्रमिक वर्ग की वास्तविकताओं को समझने और सुधारने की दिशा में योगदान दिया जा सके।

श्रमिक वर्ग संघर्ष की अवधारणा

श्रमिक वर्ग संघर्ष की अवधारणा समाजशास्त्र और राजनीतिक अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो समाज के विभिन्न वर्गों के बीच आर्थिक, सामाजिक, और राजनीतिक संघर्षों को समझाने के लिए उपयोग की जाती है। यह अवधारणा मुख्यतः कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों पर आधारित है, जिन्होंने इसे पूंजीवादी समाज की संरचना और श्रमिक वर्ग की स्थिति के संदर्भ में विकसित किया।

वर्ग संघर्ष का मूल

वर्ग संघर्ष का आधार उत्पादन के साधनों का स्वामित्व और उसके वितरण में असमानता है। समाज को मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया गया है:

1. पूंजीपति वर्ग (बुर्जुआ): जो उत्पादन के साधनों का मालिक है और मुनाफा कमाने के लिए श्रमिकों का शोषण करता है।
2. श्रमिक वर्ग (प्रोलितारियत): जो उत्पादन के लिए श्रम प्रदान करता है, लेकिन उसे अपने श्रम का पूर्ण मूल्य नहीं मिलता।

मार्क्स के अनुसार, इन दोनों वर्गों के बीच हितों का टकराव स्वाभाविक है क्योंकि पूंजीपति वर्ग अधिक लाभ कमाने के लिए श्रमिकों का शोषण करता है, जबकि श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों और बेहतर जीवन स्तर की मांग करता है।

संघर्ष के प्रमुख कारण

1. आर्थिक असमानता: श्रमिकों को उनके श्रम का उचित मूल्य नहीं मिलता, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर बनी रहती है।
2. शोषण: पूंजीपति वर्ग अपने लाभ को बढ़ाने के लिए श्रमिकों के श्रम का अत्यधिक दोहन करता है।
3. राजनीतिक और सामाजिक उत्पीड़न: श्रमिक वर्ग को राजनीतिक अधिकारों और सामाजिक सम्मान से वंचित रखा जाता है।
4. आधुनिक वैश्वीकरण और तकनीकी बदलाव: नई तकनीकों के कारण श्रमिकों की नौकरी छिन जाती है, जिससे असुरक्षा की भावना बढ़ती है।

संघर्ष के परिणाम

श्रमिक वर्ग संघर्ष ने समाज में कई बदलाव लाए हैं, जैसे कि श्रमिक आंदोलनों का उदय, श्रम कानूनों की स्थापना, और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का निर्माण। ट्रेड यूनियनें

और सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से श्रमिक वर्ग ने अपने अधिकारों को संरक्षित करने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की है।

वर्तमान संदर्भ

आज के समय में भी श्रमिक वर्ग संघर्ष प्रासंगिक है, चाहे वह न्यूनतम वेतन की मांग हो, काम के बेहतर घंटे हों, या असंगठित श्रमिकों के अधिकारों की लड़ाई। डिजिटल युग में गिग वर्कर्स और फ्रीलांसर भी इस संघर्ष का हिस्सा बन गए हैं।

श्रमिक वर्ग संघर्ष एक निरंतर प्रक्रिया है, जो सामाजिक असमानताओं को समाप्त कर एक न्यायसंगत समाज की स्थापना का लक्ष्य रखती है। यह संघर्ष समाज में संतुलन लाने और मानवाधिकारों की रक्षा का महत्वपूर्ण साधन है।

प्रमुख हिंदी उपन्यास और श्रमिक वर्ग संघर्ष

1. गोदान (प्रेमचंद)

प्रेमचंद के "गोदान" को हिंदी साहित्य का एक प्रमुख उपन्यास माना जाता है। इसमें किसानों और श्रमिक वर्ग के शोषण को मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। होरी और धनिया जैसे पात्र समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो पूंजीवाद और सामंतवाद के बीच पिसता है। होरी के संघर्ष में श्रमिक वर्ग की पीड़ा और शोषण के खिलाफ लड़ाई झलकती है।

2. चित्रा (सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला')

यह उपन्यास श्रमिक वर्ग की आर्थिक समस्याओं और उनकी सामाजिक स्थिति को उजागर करता है। "चित्रा" में निराला ने श्रमिक वर्ग के संघर्ष और उनके जीवन के यथार्थ को बड़े ही प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है।

3. महाभोज (मन्नू भंडारी)

मन्नू भंडारी का यह उपन्यास राजनीति और समाज के उस गठजोड़ को उजागर करता है, जिसमें श्रमिक वर्ग का शोषण होता है। इसमें श्रमिक वर्ग के संघर्ष, उनके अधिकारों की उपेक्षा और राजनीतिक स्वार्थ के कारण उत्पन्न स्थितियों का वर्णन किया गया है।

4. झूठा सच (यशपाल)

यशपाल ने विभाजन के समय समाज में आए बदलाव और श्रमिक वर्ग पर पड़े प्रभाव को इस उपन्यास में दर्शाया है। इसमें विभाजन के कारण श्रमिक वर्ग के विस्थापन, उनकी पीड़ा और संघर्ष को अभिव्यक्ति दी गई है।

5. मैला आंचल (फणीश्वरनाथ रेणु)

यह उपन्यास ग्रामीण जीवन का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत करता है। इसमें श्रमिक वर्ग की आर्थिक स्थिति, उनके अधिकारों की अनदेखी और उनके संघर्ष को उकेरा गया है।

6. तमस (भीष्म साहनी)

"तमस" में श्रमिक वर्ग के संघर्ष को सांप्रदायिक दंगों के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसमें दिखाया गया है कि कैसे श्रमिक वर्ग सांप्रदायिकता और राजनीति का शिकार होता है।

श्रमिक वर्ग संघर्ष के विविध आयाम

श्रमिक वर्ग संघर्ष का इतिहास मानव समाज की विकास प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा है। यह संघर्ष समाज के उत्पादन, वितरण और आर्थिक संसाधनों के असमान बंटवारे के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ है। यह संघर्ष न केवल आर्थिक स्तर पर, बल्कि सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आयामों में भी दिखाई देता है।

श्रमिक वर्ग संघर्ष का इतिहास

श्रमिक वर्ग संघर्ष का आरंभ औद्योगिक क्रांति के साथ हुआ, जब बड़े पैमाने पर मजदूरों को फैक्ट्रियों में काम करने के लिए लाया गया। इन फैक्ट्रियों में मजदूरों को बेहद कठिन परिस्थितियों में काम करना पड़ता था और उन्हें न्यूनतम मजदूरी मिलती थी। उद्योगपतियों द्वारा मजदूर वर्ग का शोषण, उनके संघर्ष का मुख्य कारण बना।

संघर्ष के प्रमुख कारण

1. आर्थिक शोषण: पूंजीपतियों द्वारा श्रमिकों को उनकी मेहनत के अनुपात में उचित मजदूरी नहीं दी जाती थी।
2. काम की खराब परिस्थितियाँ: लंबे कार्य घंटे, स्वास्थ्य-संबंधी सुविधाओं का अभाव और असुरक्षित कार्यस्थल संघर्ष के मूल कारण थे।
3. सामाजिक असमानता: श्रमिक वर्ग को समाज में निम्न स्थान पर रखा गया, जिससे उनके अधिकारों का हनन हुआ।
4. राजनीतिक उपेक्षा: श्रमिकों को अपने अधिकारों की रक्षा के लिए कोई प्रभावी मंच नहीं दिया गया, जिससे उनकी आवाज़ अनसुनी रह गई।

संघर्ष के विविध आयाम

1. आर्थिक आयाम

श्रमिक वर्ग का आर्थिक संघर्ष पूंजीवादी व्यवस्था के तहत देखा जाता है, जहाँ उत्पादन के साधनों पर कुछ गिने-चुने व्यक्तियों का नियंत्रण होता है। श्रमिकों ने अपनी मजदूरी में वृद्धि, बोनस और अन्य आर्थिक लाभों के लिए समय-समय पर हड़तालें और प्रदर्शन किए। ट्रेड यूनियनों का गठन इसी आर्थिक संघर्ष का परिणाम है, जिसने श्रमिकों को सामूहिक रूप से अपनी समस्याओं को उठाने का मंच प्रदान किया।

2. सामाजिक आयाम

श्रमिक वर्ग को अक्सर समाज में हाशिये पर रखा गया, जिससे उनके आत्मसम्मान और सामाजिक स्थिति पर चोट पहुंची। श्रमिक वर्ग ने समानता, सम्मान और शिक्षा के अधिकारों की माँग की। महिलाओं और बच्चों के श्रम का शोषण, सामाजिक संघर्ष का प्रमुख हिस्सा रहा।

3. राजनीतिक आयाम

श्रमिक वर्ग संघर्ष ने कई राजनीतिक आंदोलनों को जन्म दिया। समाजवादी और साम्यवादी विचारधाराओं ने श्रमिक वर्ग को उनकी ताकत और अधिकारों का एहसास कराया। रूस की बोल्शेविक क्रांति और भारत में स्वतंत्रता संग्राम के दौरान श्रमिक आंदोलनों ने स्पष्ट रूप से दिखाया कि राजनीतिक बदलाव में श्रमिकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

4. सांस्कृतिक आयाम

श्रमिक वर्ग संघर्ष ने सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी समाज को प्रभावित किया। श्रमिकों के जीवन पर आधारित साहित्य, कला और फिल्में समाज में उनके योगदान और संघर्ष को उजागर करती हैं। यह सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ श्रमिक वर्ग की वास्तविकता को सामने लाने का माध्यम बनीं।

भारत में श्रमिक वर्ग संघर्ष

भारत में श्रमिक वर्ग संघर्ष का इतिहास ब्रिटिश काल से जुड़ा है। 19वीं शताब्दी में रेलवे, कपड़ा और चाय उद्योग में श्रमिकों का शोषण अपने चरम पर था। 1920 में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) की स्थापना हुई, जिसने श्रमिकों को संगठित करने और उनके अधिकारों के लिए संघर्ष करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वतंत्रता के बाद भी, श्रमिक वर्ग को न्यूनतम वेतन, सामाजिक सुरक्षा और अन्य अधिकारों के लिए लड़ाई लड़नी पड़ी।

आधुनिक युग में श्रमिक वर्ग संघर्ष

वर्तमान समय में, तकनीकी विकास और वैश्वीकरण ने श्रमिक वर्ग के संघर्ष को एक नया रूप दिया है। श्रमिक अब केवल फैक्ट्रियों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि सेवा क्षेत्र, आईटी और अन्य उद्योगों में भी कार्यरत हैं। ठेका प्रणाली, बेरोजगारी, और वेतन असमानता जैसे मुद्दे आज भी श्रमिक वर्ग के संघर्ष का हिस्सा हैं।

संघर्ष के समाधान

1. न्यायसंगत नीति निर्माण: सरकार और संस्थानों को श्रमिकों के हित में न्यायपूर्ण नीतियाँ बनानी चाहिए।
2. शिक्षा और कौशल विकास: श्रमिक वर्ग के बच्चों को बेहतर शिक्षा और प्रशिक्षण उपलब्ध कराना आवश्यक है।
3. सामूहिक सौदेबाजी: ट्रेड यूनियनों को मजबूत कर श्रमिकों की सामूहिक सौदेबाजी की क्षमता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
4. वैश्विक समर्थन: अंतरराष्ट्रीय स्तर पर श्रमिक अधिकारों की रक्षा के लिए एकजुट प्रयास आवश्यक हैं|

श्रमिक वर्ग संघर्ष केवल एक वर्ग की समस्या नहीं है, बल्कि यह पूरे समाज के न्याय और समानता के मुद्दों को संबोधित करता है। यह संघर्ष हमें यह सिखाता है कि एक न्यायपूर्ण और समान समाज के निर्माण के लिए सभी वर्गों के योगदान और सम्मान की

आवश्यकता है। श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा और उनके जीवन स्तर को सुधारने के प्रयास न केवल श्रमिक वर्ग, बल्कि पूरे समाज के विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

निष्कर्ष

हिंदी उपन्यास साहित्य में श्रमिक वर्ग संघर्ष को विशेष महत्व दिया गया है। इन उपन्यासों ने श्रमिक वर्ग की पीड़ा, संघर्ष और उनकी शक्ति को समाज के सामने रखा है। श्रमिक वर्ग संघर्ष पर आधारित साहित्य न केवल सामाजिक यथार्थ को उजागर करता है, बल्कि समाज में समानता और न्याय की स्थापना की दिशा में भी प्रेरणा प्रदान करता है। श्रमिक वर्ग संघर्ष केवल श्रमिकों का नहीं, बल्कि पूरे समाज का संघर्ष है। एक न्यायपूर्ण और समतावादी समाज की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि श्रमिक वर्ग को उनके अधिकार दिए जाएं और उनकी समस्याओं का समाधान किया जाए। हिंदी उपन्यास साहित्य में इस संघर्ष का यथार्थवादी चित्रण न केवल जागरूकता बढ़ाने का माध्यम है, बल्कि समाज में सकारात्मक बदलाव की प्रेरणा भी देता है|

सन्दर्भ सूची

1. प्रेमचंद, गोदान, साहित्य भवन, पृष्ठ 145-150।
2. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', चित्रा, पृष्ठ 90-95।
3. मन्नू भंडारी, महाभोज, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 75-80।
4. यशपाल, झूठा सच, लोकभारती प्रकाशन, खंड 1, पृष्ठ 120-125।
5. फणीश्वरनाथ रेणु, मैला आंचल, पृष्ठ 200-205।
6. भीष्म साहनी, तमस, पृष्ठ 140-145।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 91-97
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

श्री राधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य विरचित काव्यों में नैतिक एवं मानवीय मूल्य

डॉ. भेषराज शर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर,
संस्कृत दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली
शोधार्थी: **लक्ष्मण राम शर्मा,** उप-प्राचार्य,
माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान।

शोध सारांश

मूल्य मानव जीवन के प्राणधायक तत्व होते हैं। जीवन के स्वरूप एवं सन्निकटस्थ परिवेश में भिन्नता हो सकती है किंतु मौलिक रूप से उसमें विद्यमान नैतिक एवं मानवीय मूल्य स्थायी और अपरिहार्य होते हैं। यह मूल्य मानव एवं जीवन के साथ अविनाभाव से संयुक्त रहते हैं। इनके अभाव में जीवन की कल्पना संभव नहीं है। श्री राधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य विरचित काव्यों में उत्कृष्ट मानव जीवन एवं वर्तमान कालिक निषिद्ध व्यसनों से सर्वथा मुक्त नैतिक मूल्यों पर अवलंबित जीवन की सौंधी सुगंध अभिव्याप्त है। वर्तमान युवजनों का स्वच्छंद, मानवीय मूल्यों से असंपृक्त, नैतिकता की सीमाओं का उल्लंघन करता अमर्यादित आचरण वैश्विक चिंतन का विषय है। सचछास्त्रों द्वारा विहित एवं संस्कारावलंबित जीवनचर्या के सहज अनुपालन से इसका समाधान संभव है। आचार्य श्री के काव्यों में सन्निविष्ट नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का अध्ययन एवं अनुपालनार्थ उद्घाटन ही इस शोध का प्रतिपाद्य विषय है।

बीज शब्द:-

नैतिक एवं मानवीय मूल्य, व्यावहारिक आचरण, स्वदेश प्रेम, परोपकार, कारुण्य भाव, सत्य की प्रतिष्ठा, चारित्रिक अपराध निवृत्ति।

प्रस्तावना

समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएं एवं साध्य जिन्हें मनुष्य समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से सीखता है तथा जो व्यक्तिनिष्ठ अभिलाषाएं बन जाती हैं, मानवीय मूल्य की संज्ञा प्राप्त करती हैं। मूल्य व्यक्ति व समाज के व्यवहारों को नियंत्रित तथा उचित मार्ग की ओर अग्रसर करने में महती भूमिका का निर्वहन करते हैं। मानवीय मूल्य एक

योजक है जो व्यक्तिगत निर्णयों, उद्देश्यों एवं कार्यों को जोड़ता है। ये मानवीय मूल्य हमारे व्यवहारिक निर्णयों के आवश्यक एवं अपरिहार्य घटक हैं। ये मनुष्य के मानसिक तनावों एवं जटिलताओं को समझाते हुए आंतरिक संगति व पारस्परिक संबद्धता को समुत्पादित करते हैं। साथ ही वैयक्तिक व सामाजिक जीवन को आदर्श की ओर उन्मुख करते हैं। निष्कर्षतः मानवीय मूल्यों व नैतिक कर्तव्यों का जीवन में बड़ा महत्व है। आधुनिक युग में लगभग सभी समाजों में युद्ध, हिंसा, अपराध, अननुशासन, घृणा एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास दृष्टिगोचर होता है। इतिहास साक्षी है विभिन्न युगों में यह प्रवृत्ति प्रचलित रही है। इसके समानांतर ही सभी धर्मों एवं समाजों में मानवीय मूल्यों पर आधारित व्यवहार का भी सतत अस्तित्व रहा है। अतः मानवीय मूल्यों की सार्वभौमिकता प्रतिपादित होती है।

भारतीय संस्कृति एवं पुरातन धर्मग्रंथों में मानवीय मूल्यों एवं नैतिक कर्तव्यों पर आधारित जीवन चर्या का उपदेश दिया गया है। श्री राधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य विरचित संस्कृत काव्यों में भी अनेक नैतिक एवं मानवीय मूल्यों पर आधारित जीवनचर्या का समर्थन किया गया है।

सत्य की प्रतिष्ठा

सत्य एवं प्रिय वचनों को सनातन धर्म की संज्ञा देते हुए आचार्य मनु ने कहा है-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात्, एष धर्म सनातनः।।1

(सत्य बोलो, प्रिय बोलो किंतु वह सत्य न बोलो जो अप्रिय हो। दूसरों को प्रसन्न करने वाला (चापलूसी करने वाला) असत्य मत बोलो। यही सनातन धर्म है।)

सत्यं दमः तपः शौचं, संतोषश्च क्षमार्जवम्।
ज्ञानं नमो दया दानं, एष धर्म सनातनः।।2

(सत्य, इच्छाओं पर नियंत्रण, तप, पवित्रता, संतोष, क्षमा, सरलता, ज्ञान, शांति, दया और दान ये सनातन धर्म के लक्षण हैं।)

आचार्य श्री ने अनृतवाणी को त्याज्य बताकर सत्य की जीवन में प्रतिष्ठा को कल्याणकारी बताया है।

अनृतवाणी हातव्या यया जीवने परमोज्ज्वलता स्यात्। तदैवानुकरणं नृजीवनं जायते।3

(मिथ्या बोलना छोड़ें, जिससे जीवन में परम पवित्रता और उज्ज्वलता आएगी और तभी अनुकरणीय मानव जीवन होगा।)

परोपकार

परोपकारः कर्तव्यः, प्राणैरपि धनैरपि।
परोपकारजं पुण्यं,न स्यात्क्रतुशतैरपि।।

(मनुष्य को प्राणों से और धन से परोपकार करना चाहिए। सैकड़ों यज्ञों से अर्जित पुण्य से अधिक परोपकार से उत्पन्न पुण्य का महत्व है।)

आचार्य श्री ने अपने ग्रंथ उद्गारशतकम् में परोपकार का महत्व बताया है।

परोपकारस्य परमं महत्वं वरीवर्ति। अतोहि लक्ष्यं विहाय दातव्यम्। इति शास्त्रवचनानुसारेण परोपकारनिरता भवन्तु।4

(परोपकार की बड़ी महिमा है।अतएव 'लक्ष्यं विहाय दातव्यम्' इस शास्त्रीय वचन के अनुसार परोपकार परायण होना चाहिए।)

ये मनुजा: परोपकारपरायणा: सन्ति ते परमसौभाग्यशालिन: सन्ति।5

(जो मनुष्य परोपकार करते हैं वे निश्चित रूप से अतीव सौभाग्यशाली हैं।)

सत्संगति

सज्जनों की संगति को संस्कारपूर्ण जीवन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत माना है। भर्तृहरि विरचित नीतिशतक में सत्संगति का महत्व प्रतिपादित किया गया है।

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेत: प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्संगति: कथय किं न करोति पुंसाम्।।6

(सत्संगति मनुष्य के लिए क्या नहीं करती? सत्संगति बुद्धि की जड़ता को दूर करती है। वाणी में सत्य का सिञ्चन करती है। सम्मान और उन्नति में वृद्धि करती है। पाप को दूर करती है। चित्त को आह्लादित करती है। व्यक्ति के यश को चारों दिशाओं में प्रसारित करती है।)

दुस्सङ्गं सर्वथातो विहाय सर्वदा परमोत्तमश्रेष्ठमहानुभावानां सत्सङ्ग: श्री हरिकथावार्तां शास्त्रानुशीलनं च संपादनीयं साधकै:।7

(दुस्सङ्ग को सभी प्रकार से छोड़कर निरंतर परम श्रेष्ठ महानुभावों का सत्संग तथा श्री प्रभु की सुंदर कथा वार्ता और उत्तम शास्त्रों का मनन साधक जनों को करना चाहिए।)

दुस्सङ्ग: सर्वथा त्याज्य:, संसेव्या साधुसङ्गति:।
अभिज्ञै: नितरां लोकै:, कर्तव्यमात्म चिन्तनम्।।8

(दुस्सङ्ग का सर्वथा त्याग कर दें तथा उत्तम पुरुषों के पवित्र सत्संग में ही स्वयं को प्रवृत्त करें। विद्वानों द्वारा आत्म चिंतन किया जाना चाहिए। सर्वदा सर्वेश्वर श्री हरि की उपासना तथा उन्हीं का मंगलमय चिंतन अपने जीवन का कर्तव्य समझें।)

नारी का सम्मान

वर्तमान समाज में स्त्रियों की दशा चिंतनीय है। चारित्रिक अपराधों में निरंतर वृद्धि संस्कारहीनता की परिणति है। संस्कृत नीति ग्रंथों में नारी के महत्व की स्वीकारोक्ति है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता:।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफलाक्रिया:।।9

(जहां नारियों का मान, सम्मान एवं आदर (पूजा) होता है वहां स्वयं देवता निवास करते हैं, किंतु जहां स्त्रियों की निंदा एवं अनादर होता है वहां कोई कार्य सफल नहीं होता। इस प्रकार

भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत साहित्य में मानवीय मूल्यों एवं नैतिक कर्तव्यों की व्यावहारिक जीवन के लिए महती आवश्यकता अभिशंसित की गई है। जगद्गुरु निंबार्काचार्य श्री राधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य जी ने स्वरचित संस्कृत काव्यों में मानवीय मूल्यों की जीवन में स्थापना पर विशेष बल दिया है। आपने श्री सर्वेश्वर प्रभु (श्री कृष्ण) आदि के स्तोत्र साहित्य के अतिरिक्त भारतीय नागरिकों, विद्यार्थियों तथा युवाओं को उद्बोधित करते हुए अभिप्रेरणात्मक एवं उपदेशात्मक काव्य का सृजन किया है। कलियुग में भौतिकवाद की फांस में जकड़े जाते जीवन के प्रति आपकी चिंता एवं मानव कल्याण हेतु सद्गुरुओं के कर्तव्य पर आपकी लेखनी ने बहुत सृजन किया है।

उद्गारशतकम् काव्य में नारी विषयक उपदेश व्यवहरणीय है।

"या मातर: सन्ति,भगिन्य: सन्ति,बालिका:सन्ति तासां सुरक्षार्थं सर्वै: जनै: सर्वदा प्रयत्न: करणीय:।"10

(समाज में जो माताएं, बहनें और बालिकाएं हैं उनकी सुरक्षा के लिए सभी लोगों को सर्वदा प्रयास करना चाहिए।)

मातृ शक्ति का मान कर, यह है उत्तम कार्य।
उनकी सेवा में सदा, 'शरण' भक्ति अनिवार्य।।11

अहिंसा-

महाभारत के अनुशासन पर्व में अहिंसा का समर्थन करते हुए उसका महत्व वर्णित है।

अहिंसा परमो धर्म, तथाहिंसा परो दम:।
अहिंसा परमं दानं अहिंसा परमं तप:।।
अहिंसा परमोए यज्ञस्तथास्ति परमं फलम्।
अहिंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम्।।12

(अहिंसा परम धर्म है तथा अहिंसा परम दम है। अहिंसा ही परम दान, परम तप, परम यज्ञ, परम फल, परम मित्र एवं परम सुख है।)

अहिंसा वृत्त की अनुपालन का समर्थन करते हुए आचार्य श्री ने बताया है।

अहिंसा व्रत अनुपालन, करैं समादर प्राणि।
दुर्भाव से रहित होय, 'शरण' मधुर वद वाणि।।13
त्याज्या हिंसा जनैर्देशे, सेव्या भारतसंस्कृति:।
शरणागतलोकाश्च रक्षणीया सदा मुदा।।14

(धर्मप्राण इस भारत में मानव समुदाय द्वारा हिंसा वृत्ति का निरोध अपेक्षित है और भारतीय संस्कृति का सेवन परमावश्यक है। प्रसन्नता पूर्वक सदैव शरणागतजनों की रक्षा होनी चाहिए।)

मधुर वाणी-

संत कबीर दास जी ने मीठी वाणी के प्रभाव के बारे में कहा है-

ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय।

औरन को शीतल करे आपहु शीतल होय।।

इसी मानवीय मूल्य को आचार्य श्री ने भी 'प्रेरणाशतकम्' में वर्णित किया है। माधुर्यं वचने धार्यं कटुतां सर्वदा त्यजेत्।

सद्व्यवहारआचार:, श्रेष्ठसाधकलक्षणम्।।15

(अपनी वाणी में मधुरता हो। कटुतापूर्ण वचनों का सर्वदा त्याग करें। तथा सद्व्यवहार, सदाचार का पालन करना उत्तम साधक का लक्षण है।)

परनिंदा का परित्याग-

परनिंदा को शास्त्रों में हेय माना गया है। परदोष दर्शन से अनेक बुराइयां हमारे स्वयं के व्यवहार में स्थापित हो जाती हैं। आचार्य श्री ने इस विषय में छात्र वर्ग को निजवचनों से सावधान किया है।

परनिंदा परदोष से, बचे रहो धीमान।
सद्गुरु अवधारण करो, 'शरण' मिले सन्मान।।16

आलस्य का अभाव-

आलस्य ज्ञानार्जन में बाधक है इसके रहते निश्चित उद्देश्य पूर्ति हेतु उद्यम संभव नहीं। शास्त्रों में आलस्य को व्यक्ति का परम शत्रु कहा गया है।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपु:।
नास्त्युद्यमसमो बन्धु:,कृत्वा यं नावसीदति।।

(आलस्य मनुष्य के शरीर में निवास करने वाला परम शत्रु है। उद्यम (परिश्रम) के समान कोई बंधु नहीं है। उद्यम करके कोई भी दुखी नहीं होता है।)

आचार्य श्री ने भी सुखार्थी भक्तजनों को आलस्य के पूर्ण परित्याग की प्रेरणा दी है।

आलस्यं पूर्णतः त्यक्त्वा, भजते भक्तिमान्नर:।
श्री राधामाधवं भक्त्या, सोयञ्च लभते सुखम्।।17

(आलस्य को पूर्ण रूप से छोड़कर भक्तिमान पुरुष श्री राधा माधव भगवान का भक्ति पूर्वक भजन करता है वह परमानंद को प्राप्त करता है।)

आलस तज रिपु रूप है, दीर्घसूत्रिता छोड़।
प्रपठन में अतिमन्दता, 'शरण' तजो मन दोड़।।18

(आलस्य विद्यार्थी के लिए शत्रुस्वरूप है। कार्य को कल पर छोड़ देने की आदत का त्याग कर देना चाहिए।)

"आलस्यमपहाय सत्कर्तव्यनिरता भवन्तु।"

(आलस्य को छोड़कर उत्तम कर्म करने में तत्पर रहना परम श्रेयस्कर है।)

"अतिदीर्घसूत्रिता नोचिता।"

अतिदीर्घसूत्री होना (कार्य को कल पर डाल देने की वृत्ति) उचित नहीं है।

जीव मात्र पर दया का भाव

संस्कृत साहित्य में दया को धर्म का मूल कहा है। जीवों के प्रति दया भाव से ही मनुष्य का मनुष्य शोभित होता है।

धर्मो जीवदयातुल्यो, न क्वापि जगतीतले।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन कार्या जीवदयाङ्गिभिः।।

इस भूतल पर जीव दया के समान कोई अन्य धर्म नहीं है। अतः मनुष्य को सर्व प्रयत्नों से जीवों पर दया का आचरण करना चाहिए।

आचार्य श्री ने जीवों के प्रति दया का आचरण छात्र का प्रमुख गुण बताया है।

दया भाव सब जीव पर, गौमाता परिपाल।
ऐसे निर्मल छात्र गुण, 'शरण' लखैं गोपाल।।19

विविध पशु खेचरादीनां कृते तदनुकूलानुसारेणाहारव्यवस्था विधातव्या समग्रमानवैः।20

(विविध पशु, पक्षी आदि के लिए उपयुक्त आहार की व्यवस्था सभी लोगों द्वारा की जानी चाहिए।)

ग्रीष्मकाले च पशुपक्षिणां कृते जलव्यवस्थाऽनिवार्यरूपेणकर्तव्या भावुकजनैः।21

(भावुक जनों द्वारा ग्रीष्म काल में पशु-पक्षियों के लिए जल की व्यवस्था अनिवार्य रूप से की जानी चाहिए।)

उपसंहार

नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का अनुसरण मानव जीवन के लिए परमावश्यक है। जो मनुष्य जीवन में सदाचार का महत्व जानेगा, वही जीवन का मूल्य जान पायेगा। जो जीवन का मूल्य जानेगा, वही अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर पाएगा। अपने व्यक्तित्व के विकास से सही का निर्णय अपनी समझ के अनुसार करेगा। यह समझ ही विवेक है। विवेकपूर्ण जीवन से व्यक्ति की पहचान बनती है। यही उसके व्यक्तित्व का आधार है। वही व्यक्ति समाज, संस्कृति एवं राष्ट्रनिर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। सांस्कृतिक, शैक्षिक, पर्यावरणीय, सामाजिक व्यवस्था के ज्ञान के लिए, नैतिक और मानव अधिकार एवं जीवन कर्तव्य के ज्ञान के लिए, आध्यात्मिक, राजनीतिक दर्शन के ज्ञान के लिए, मनुष्य को आकार मानव से आचार मानव बनाने के लिए मानवीय मूल्यों की आवश्यकता है। आचार्य श्री के काव्यों में उपदिष्ट नैतिक एवं मानवीय मूल्यों को व्यवहार में उपयोग किया जाए, आचरण में सम्मिलित किया जाए तो हमारा जीवन आदर्श एवं अनुकरणीय बन सकता है।

संदर्भ सूची

1. मनुस्मृति
2. मनुस्मृति
3. उद्गारशतकम्- ४०
4. -उद्गारशतकम् ६६

5. -उद्गारशतकम् ३५
6. -नीतिशतकम्
7. -उद्गारशतकम् ४७
8. -भारत-भारती-वैभवम्, १०९
9. मनुस्मृति
10. -उद्गारशतकम् २५
11. - छात्र विवेक दर्शन, ४४
12. महाभारतम्, अध्याय ११७, दान धर्म पर्व
13. -छात्र विवेक दर्शन,६४
14. -भारत भारती वैभवम्, ७९
15. -प्रेरणाशतकम्, ७०
16. -छात्र विवेक दर्शन, ४१
17. -प्रेरणाशतकम्, ८३
18. -छात्र विवेक दर्शन, ३६
19. -छात्र विवेक दर्शन, ६२
20. -उद्गारशतकम्,२३
21. -उद्गारशतकम्, २८

मो.- **9251604605** ईमेल – **laxmansharma101@gmail.com**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 98-106
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

गीता में इन्द्रिय ज्ञान के सूत्र

राजेंद्र, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
पंजाब विश्वविद्यालय कास्टीचुयेंट कालेज सिखवाला, श्री मुक्तसर साहिब, पंजाब, भारत।

कर्मेन्द्रियाँ जड़ पदार्थ की अपेक्षा श्रेष्ठ है, मन इन्द्रियों से बढ़कर है, बुद्धि मन से भी उच्च है और वह (आत्मा) बुद्धि से भी बढ़कर है।

इन्द्रियाँ काम के कार्यकलापों के विभिन्न द्वार है। काम का निवास शरीर में है, किन्तु उसे इन्द्रिय रूपी झरोखे प्राप्त है। अतः कुल मिलाकर इन्द्रियाँ शरीर से श्रेष्ठ हैं आत्मा भगवान् के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करता है, अतः यहाँ पर वर्णित शारीरिक कार्यों की श्रेष्ठता परमात्मा में आकर समाप्त हो जाती है। शारीरिक कर्म का अर्थ है– इन्द्रियों के कार्य और इन इन्द्रियों के अवरोध का अर्थ है– सारे शारीरिक कर्मों का अवरोध। लेकिन चूँकि मन सक्रिय रहता है, अतः शरीर के मौंन तथा स्थिर रहने पर भी मन कार्य करता रहता है– यथा स्वप्न के समय मन कार्यषील रहता है। किन्तु मन के ऊपर भी बुद्धि की संकल्पषक्ति होती है और बुद्धि के ऊपर स्वयं आत्मा है। अतः यदि आत्मा प्रत्यक्ष रूप में परमात्मा में रत हो तो अन्य सारे अधीनस्थ – यथा –बुद्धि, मन तथा इन्द्रियाँ –स्वतः रत हो जायेंगे। इन्द्रिय विषय इन्द्रियों से श्रेष्ठ हैं और मन इन्द्रिय–विषयों से श्रेष्ठ है। अतः यदि मन रब की सेवा में निरन्तर लगा रहता है तो इन इन्द्रियों के अन्यत्र रत होने की सम्भावना नही रह जाती। इस मनोवृत्ति की विवेचना की जा चुकी है। यदि मन भगवान् की दिव्य सेवा में लगा रहे तो तुच्छ विषयों में उसके लगने की सम्भावना नहीं रह जाती। आत्मा को महान कहा गया है। अतः आत्मा इन्द्रिय–विषयों, इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि –इन सबसे ऊपर है। अतः सारी समस्या का हल यह ही है कि आत्मा के स्वरूप को प्रत्यक्ष समझा जाए। ''जो लोग इन्द्रियभोग तथा भौतिक ऐश्रवर्य के प्रति अत्यधिक आसक्त होने से ऐसी वस्तुओं से मोहग्रस्त हो जाते हैं, उनके मनों में भगवान् के प्रति भक्ति का दृढ़ निश्चय नहीं होता।''1

''जब मनुष्य मनोधर्म से उत्पन्न होने वाली इन्द्रियतृप्ति की समस्त कामनाओं का परित्याग कर देता है और जब इस तरह से विशुद्ध हुआ उसका मन आत्मा में सन्तोष प्राप्त करता है तो वह विशुद्ध दिव्य चेतना को प्राप्त (स्थितप्रज्ञ) कहा जाता है।''2

मनुष्य को चाहिए कि बुद्धि के द्वारा आत्मा की स्वाभाविक स्थिति को ढूंढे और फिर निरन्तर परमात्मा में लगाये रखे। इससे सारी समस्या हल हो जाती है। सामान्यतः नवदीक्षित अध्यात्मवादी को इन्द्रिय–विषयों से दूर रहने की सलाह दी जाती है। किन्तु इसके साथ मनुष्य को अपनी बुद्धि का उपयोग करके मन को सषक्त बनाना होता है। यदि कोई बुद्धिपूर्वक अपने मन को भगवान् के शरणागत होकर लगाता है, तो मन स्वतः सषक्त हो जाता है और यद्यपि इन्द्रियाँ सर्प के समान अत्यन्त बलिष्ट होती हैं, किन्तु ऐसा करने पर वे दन्त–विहीन साँपों के समान अषक्त हो जाएँगी। यद्यपि आत्मा बुद्धि, मन तथा इन्द्रियों का भी स्वामी है तो भी जब तक इसे सदृढ नहीं कर लिया जाता तब तक चलायमान मन के कारण नीचे गिरने की पूरी सम्भावना बनी रहती है। विष्णु के दस अवतारों में श्री कृष्ण का स्थान मुख्य रूप से लिया जाता हैं।

इन्द्रियों के द्वारा हमें बाहरी विषयों –रूप, रस,गंध, स्पर्श एंव शब्द का तथा अभ्यान्तर विषयों –सुख–दुःख आदि का ज्ञान प्राप्त होता है। इन्द्रियों के अभाव में हम विषयों का ज्ञान किसी प्रकार से भी प्राप्त नही कर सकते । इसलिए तर्क भाषा के अनुसार इन्द्रिय वह प्रमेय है जो शरीर से संयुक्त अतींद्रिय (इन्द्रियों से गृहीत न होनेवाला) तथा ज्ञान का कारण हो।

शरीर का संयुक्त ज्ञान इन्द्रियों से प्राप्त होता है।

न्याय के अनुसार इन्द्रियां दो प्रकार की होती हैंः
1.वहिरिंद्रिय– घ्राण, रसना, चक्षु, त्वक्, तथा श्रोत्र पांच और
2. अतरिंद्रिय – केवल मन

इनमें बाहय इन्द्रियाँ क्रमशः गंध ,रस, रूप, स्पर्श, तथा शब्द की उपलब्धि मन के द्वारा होती हैं। सुख –दुःख आदि भीतरी विषय हैं। इनकी उपलब्धि मन के द्वारा होती है। मन हृदय के भीतर रहनेवाला तथा अणु परमाणु से युक्त माना जाता है। इन्द्रियों की सत्ता का बोध प्रमाण, अनुमान से होता है, प्रत्यक्ष से नहीं जिनमें ज्ञानेंद्रियाँ तथा कर्मेंद्रियाँ पांच–पांच मानी जाती है। ज्ञानेंद्रियाँ आंख, जिहवा, नाक, कान तथा त्वचा हैं। कर्मेंद्रियाँ मुख, हाथ, पैर, मलवार तथा जननेंद्रियँ हैं जो क्रमशः बोलने , ग्रहण करने, चलने, मल त्यागने तथा सन्तानोत्पादन का कार्य करती हैं। संकल्पविकल्पात्मक मन ग्यारहवीं इन्द्रिय माना जाता है।

मस्तिष्क के भीतर कपाल के नीचे एक छिद्र है, उसे ब्रहमरंध्र कहते हैं। वहीं से सुष्मना रीढ़ से होती हुई मूलाधार तक गई है। सुष्मना नाड़ी जुडी है– सहस्त्रकार से। इड़ा नाड़ी शरीर के बायीं तरफ स्थित है तथा पिंगला नाड़ी शरीर के दायीं तरफ अर्थात इड़ा नाड़ी में चंद्र स्वर और पिंगला नाड़ी में सूर्य स्वर स्थित रहता है। सुष्मना मध्य में स्थित है, अतः जब हमारे दोनों स्वर चलते हैं तो माना जाता है कि सुष्मना नाड़ी सक्रिय है। इस सक्रियता से ही छठी इन्द्री जागृत होती है। इड़ा, पिंगला और सुष्मना के अलावा पूरे शरीर में हजारों नाड़ियां होती है। उक्त सभी नाड़ियों का शुद्धि और सशक्तीकरण सिर्फ प्राणायाम और आसनों से ही होता है। शुद्धि और सशक्तिकरण के बाद ही उक्त नाड़ियों की शक्ति को जागृत किया जा सकता है। छठी इन्द्री को जागृत करने के लिए योग में अनेक उपाय बताए गए हैं।

इसे परामनोविज्ञान का विषय भी माना जाता है। असल में यह संवेदी बोध का मामला है। गहरे ध्यान प्रयोग से यह स्वतः ही जागृत हो जाती है। कहते हैं कि पांच इन्द्रियाँ होती हैं– नेत्र, नाक, जीभ, कान और यौन,। इसी को दृश्य, सुगंध, स्वाद, श्रवण और स्पर्श कहा जाता है। किन्तु एक और छठी इन्द्री भी होती है जो दिखाई नही देती, लेकिन उसका अस्तित्व महसूस होता है। वह मन का केंद्रबिंदु हैं। '' जिस प्रकार कछुवा अपने अगों को संकुचित करके खोल के भीतर कर लेता है, उसी तरह जो मनुष्य अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियविषयों से खींच लेता है, वह पूर्ण चेतना में दृढ़तापूर्वक स्थिर है।''[3]

प्राणब्रहम, प्राणशक्ति और प्राणवायु

परमात्मा की सृष्टि में जो क्रियात्मकता (करने की शक्ति) व गत्यात्मिकता (चलने या हिलने की) शक्ति है, उसे ही प्राणशक्ति कहते हैं अर्थात् शरीर की चेतना ही प्राण है। प्राण केवल श्वास (सांस) नही है वरन् वह शक्ति या तत्व हैं जिससे श्वास लेने व छोडने की समस्त क्रियाऐं एक जीवित शरीर में होती हैं। देवता, मनुष्य, पशु, आदि प्राण के सहारे ही सांस लेते हैं। जब तक शरीर में नाक के छिद्रों से प्राणवायु का संचार होता रहता है, तब तक गूंगा, बहरा, अंधा मनुष्य भी 'जीवित' कहा जाता है और जब प्राणवायु का नाक के छिद्रों द्वारा आवागमन समाप्त हो जाता है तब मनुष्य मृत' मान लिया जाता है।

प्राण शक्ति के कारण ही मनुष्य, पशु–पक्षी, कीट–पतंग, वृक्ष–लता एंव पर्वत विकसित होते हैं। जब इनमें प्राणशक्ति नही रह जाती तब ये सूखने व सड़ने लगते हैं। मनुष्य व पशुओं में प्राणशक्ति चले जाने के लक्षण तुरन्त प्रकट हो जाते हैं, वृक्षों में कुछ देर में ओर पत्थरों आदि में बहुत देर से प्रकट होते हैं। जब तक शरीर में प्राण हैं तब तक जीवन है, अतः प्राण ही सभी की आयु है, इसलिए प्राण को 'सर्वायुष' भी कहते है। ऋग्वेद में कहा गया है– 'प्राणवायु! आप प्रत्यक्ष ब्रहम हैं।''

प्राणों को ब्रहम क्यों कहा जाता है?

छान्दोग्योपनिषद के पांचवे अध्याय में एक सुन्दर कथा है– एक बार प्राण के साथ शरीर की सभी इन्द्रियों का विवाद हुआ कि हममें कौन बड़ा और श्रेष्ठ है? आकाश, वायु, अग्नि, पृथ्वी, वाणी, मन, चक्षु, श्रोत (कान)– इन सभी ने अपने–अपने माहात्म्य का वर्णन किया और कहा कि हम शरीर को धारण किए हुए हैं। प्राण ने कहा–अरे मूर्खो! अज्ञान को प्राप्त मत हो, मैं ही इस आत्मा के लिए पांच रूप से विभाजित होकर शरीर को धारण कर रहा हूं। इन्द्रियों ने इस पर विश्वास नही किया। प्राणों सहित समस्त इन्द्रियों ने पिता प्रजापति के पास जाकर कहा –'भगवान! यह बतायें कि हम सब में बड़ा

कौन है?' प्रजापति ने कहा –'जिसके निकल जाने पर यह शरीर अत्यन्त हेय समझा जाए वही सबसे बडा है।'

प्रजापति की इस बात पर विश्वास न करके सबसे पहले वागिन्द्रिय (बोलने की इन्द्रिय) ने शरीर का साथ छोड दिया परन्तु इससे शरीर की बोलने की शक्ति को छोड़कर और कोई हानि नही हुई, प्राणी गूंगा बनकर जीवित रहा। इसी तरह एक–एक करके सभी इन्द्रियों ने शरीर का साथ छोड़कर परीक्षा की कि क्या हमारे शरीर में न रहने से यह जीवित रहेगा या नहीं? पर इन्द्रियों के निकल जाने पर प्राणवायु के रहते शरीर को 'जीवित' ही कहा गया 'मृत' नहीं।

अन्त में शरीर का त्यागकर प्राणों के निकलने का समय आया। प्राणों के शरीर छोड़ने से पहले ही सब के सब नष्ट होने लगे, सभी इन्द्रियाँ बैचेन व शिथिल होने लगीं, उनका तेज चला गया। तब सभी इन्द्रियाँ प्राणों से शरीर का त्याग न करने की प्रार्थना करने लगीं।

(प्राणों के पुनः स्थिर होने पर सब ऐसे मधुमक्खियों की रानी के उड़ने पर सब मक्खियां उड़ जाती हैं एंव बैठने पर बैठ जाती हैं। हार मानकर सभी इन्द्रियाँ पुन वापिस आकर शरीर में स्थित हो गयीं।) ''देहधारी जीव इन्द्रिभोग से भले ही निवृत्त हो जाय पर उसमें इन्द्रियभोगों की इच्छा बनी रहती है। लेकिन उत्तम उस के अनुभव होने से ऐसे कार्यो को बन्द करने पर वह भक्ति में स्थिर हो जाता है।[4]''

शरीर में इन्द्रिय, मन आदि में प्राण ही सबसे श्रेष्ठ है।

अंत में सब इन्द्रियों ने प्राण की प्रस्तुति करते हुए स्वीकार किया कि प्राण का स्थान शरीर में सबसे ऊंचा है प्राण सभी इन्द्रियों का उज्जीवक (जीवन शक्ति), शक्ति और बल है। इन्द्रियों में कार्य करने की शक्ति प्राण से ही प्राप्त होती है। प्राणशक्ति के बिना सभी इन्द्रियाँ निष्क्रिय हो जाती हैं। इसी से आचार्यों ने प्राणों को 'ब्रहम' की संज्ञा दी है।

प्राणों की उत्पति– प्राण की उत्पति के संबंध में शास्त्रों में अनेक मत हैं । एक मत के अनुसार परमात्मा की जब एक से अनेक की इच्छा होती है–' एकोऽहं बंहु स्याम', तब पंचमहाभूत प्रकट होते हैं। इन्ही रजोगुणी पंचमहाभूतों से प्राण की उत्पति होती है।

प्राणवायु और पंचप्राण

शरीर रूपी नगर का राजा प्राणवायु है। गतिशीलता के कारण प्राण को वायु समझा जाता है किन्तु प्राण वायु नही है, प्राण वायुदेवता का अध्यात्म रूप है जो अपने पंचव्यूह (पांच व्यापक रूप में) प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान आदि रूप में शरीर में रहते हैं। जैसे परमात्मा के चार व्यूह–वासुदेव, संकर्षण, प्रदयुम्न और अनिरूद्ध हैं और वैसे ही प्राणवायु पांच व्यापक रूप में शरीर में स्थित है। प्राणशक्ति एक है किन्तु शरीर में उनकी स्थिति और कार्यो के आधार पर प्राणों की संख्या में विभिन्नता है। प्राण को एक , पांच, सात , नौ, दस, ग्यारह तथा तेरह तक माना गया है।

पंचप्राण

शरीर में एक ही प्राणवायु अलग–अलग स्थानों पर विभिन्न नामों से जानी जाती हैं। जैसे–
हृदय में स्थित वायु प्राण है।
गुद्दा में स्थित वायु अपान है।
सारे शरीर में धूमने वाला वायु व्यान कहलाता है।
कण्ठ में स्थित वायु उदान है।
नाभिस्थान में स्थित वायु समान कहलाती है।

कार्यों के आधार पर दस प्रकार की प्राणवायु

प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त, और धनंजय ये दस प्रकार के प्राणवायु हैं। प्राणवायु सांस को अंदर ले जाना और बाहर निकालना, खाये हुए अन्न–जल को पचाना, अन्न को मल, पानी को पसीना ओर मूत्र तथा रस को वीर्य बनाना प्राणवायु का कार्य है। हृदय से लेकर नाक तक यह प्राणवायु स्थित है और वहां की इन्द्रियों का काम इसी से चलता है।

अपानवायु–इस प्राणवायु का कार्य मल–मूत्र व वीर्य को निकालना, गर्भ को नीचे ले जाना व कमर, घुटने व जांघ का कार्य करना है।

समानवायु– यह प्राणवायु शरीर में नाभि से हृदय तक स्थित रहती है। अन्न से पचे रस को सभी अंगों व नाड़ियों में बराबर बांटना इसका कार्य है।

उदानवायु– यह कण्ठ में रहकर सिर तक घूमता है। शरीर को उठाऐ रखना इसका काम है। मौत के समय उदानवायु सूक्ष्मशरीर (आत्मा) को स्थूल शरीर (देह) से बाहर निकाल देती है और कर्म, गुण, संस्कार व वासनाओं के अनुसार दूसरे गर्भ में प्रवेश करती है। योगीजन इसी के द्वारा स्थूल शरीर से निकलकर सभी जगह आते–जाते हैं।
व्यानवायु– व्यान का स्थान पेडू से ऊपर है। यह सूक्ष्म नाड़ियों में घूमता हुआ शरीर के सभी अंगों में रक्त का संचार करता है।
नागवान– छींकना, जंभाई आदि इसी प्राणवायु का है।
कूर्मवायु– शरीर में संकुचन की क्रिया इसी पर आश्रित हैं।
कृकरवायु– भूख–प्यास का लगना आदि कार्य इसी प्राणवायु के हैं।
देवदत्तवायु– निंद्रा, ऊंघना, थकान आदि देवदत्तवायु का कार्य है।
धनंजयवायु– शरीर के पोषण का कार्य यह प्राणवायु करती है।

इस प्रकार शरीर, इन्द्रियां और मन प्राणशक्ति से चलती है। प्राणवायु को अपने वश में करने का नाम 'प्राणायाम' है। प्राणवायु का नियन्त्रण कर संचय होने से 'समाधि' लगती है जिससे योगीजन काल को वश में करके मनचाहे समय तक जीवित रह सकता है ओर सरलता से इच्छानुसार प्राण–त्याग कर सकते है। पुराने कुसंस्कारी अभ्यासों को निरस्त करने के लिए नए उत्साह से, साहसपूर्वक सत्यप्रयोजनों को दैनिक क्रियाकलाप में सम्मिलित करना पड़ता है और बार–बार उभरने वाली पशु–प्रवृतियों को निरस्त करने के लिए कडा रूख अपनाना पडता है। इस प्रकार अपने आप से जूझने को ही संयम समझना चाहिए। राजेन्द्र की भूमिका, स्वंय से संघर्ष करने में प्रत्येक कर्मयोगी को निभानी पडती है। '' इन्द्रियाँ इतनी प्रबल तथा वेगवान हैं कि वे उस विवेकी पुरूष के मन को भी बलपूर्वक हर लेती है, जो उन्हें वश में करने का प्रयत्न करता है।''[5]

जीवन एक युद्धस्थल है, जिसमें मनुष्य को सतत कामुक प्रतिकूल विचारों से लेकर चिर संचित प्रवृत्तियों तक एंव ऋतुकाल की बदलती परिस्थितियों से लेकर वातावरण में अस्वाभाविक परिवर्तन से जूझना पडता है। जीवनी शक्ति, जो उसे मानसिक रूप से लड़ सकने योग्य साहसी एंव उसके शरीर संस्थान को रोगी होने से बचाती है , एक ही अनुदान की परिणति हैं–संयम जो इसे अपनाता है, वह न रोगी होता है न दुखीः। वह जीवन संग्राम में कभी दुखीः नही होता तथा विशृंखलित अस्त–व्यस्त विचार उसे प्रभावित नही कर पाते। संयम एंव संघर्ष एक –दूसरे के पर्यायवाची हैं तथा असंयम की परिणति ही दीन–हीन दरिद्रता, रोग–शोक के रूप में होती है। जीवन देवता की उपासना तब ही भली प्रकार संभव है, जब अपने जीवन रसों को व्यर्थ बहाना छोडकर मनुष्य उन्हें सृजनात्मक चिंतन व कर्तव्य में नियोजित करें। यदि व्यक्ति असंयम के दुष्परिणामों को समझ जाए, तो भूतल स्वर्ग पर आ जाए तथा दुःख दारिद्रय सर्वथा समाप्त हो जाए।

जीवन सम्पदा के चार क्षेत्र हैं– इंद्रिय शक्ति, समय शक्ति, विचार शक्ति, धन (साधन) शक्ति। आरंभ की तीन तो ईश्वर प्रदत्त हैं। चौथी इन तीनों के संयुक्त प्रयत्न से भौतिक क्षेत्र में पुरूषार्थ द्वारा अर्जित की जाती है। जो व्यक्ति इन्हें देवी विभूतियां मानकर इनका सुनियोजन करता है, अभाव से भरे संसार में रहते हुए भी साधन एकत्र कर लेता है। शारीरिक सामर्थ्य, वाणी का सही उपयोग एवं समय सम्पदा का सही सुनियोजन करने के लिए ये विभूतियां भगवान ने बहुत सोच–समझकर मानव को विरासत में दी हैं।

दस इंद्रियों में दो प्रमुख हैं, जिनमें से एक जिहवा तथा दूसरी जननेन्द्रिय है। जिसने इनको वश में कर लिया , समझो उसने शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य को प्राप्त कर लिया है। जिहवा संयम से शारीरिक स्वास्थ्य तथा जननेन्द्रिय के संयम से मनोबल अक्षुण्ण रहता है। जिहवा का शरीरगत स्वास्थ्य से सीधा संबंध है। जिहवा स्वाद को प्रधानता देकर ऐसे पदार्थों को खाती रहती है, जो अनावश्यक ही नही, हानिकारक भी होते हैं। स्वाद–स्वाद में भोजन की मात्रा बढने से पेट खराब तथा असंख्य रोग हो जाते हैं। '' जो इन्द्रियों को पूर्णतया वश में रखते हुए इन्दिय–संयमन करता है और अपनी चेतना को मुझमें स्थिर कर देता है, वह मनुष्य स्थिरबुद्धि कहलाता है।,'' 6

समय संयम से शिथिलता रहने से मनुष्य निश्चित रूप से आलसी और प्रमादी बनता है। नियमितता न रहने से जो किया जाता है, वह आधा–अधूरा रहता है। समय का सदुपयोग, सुनियोजित श्रम से ही किया जा सकता है। आलस्य का अर्थ है– शारीरिक श्रम से बचना तथा प्रमाद, मानसिक

जड़ता का नाम है। शरीर बलवान होते हुए भी व्यक्ति श्रम से जी चुराऐ, तो उसे प्रमाद कहा जाता है। हमारे सबसे समीपवर्ती शत्रु आलस्य और प्रमाद ही हैं। जो समय देवता की अवहेलना करते हैं, वे जीवन को निरर्थक व्यतीत कर चलते बनते हैं। समय के असंयमी ही अल्पजीवी कहलाते हैं, भले ही उनकी आयु कुछ भी हो। समय ईश्वर प्रदत्त सम्पदा है उसे श्रम में मनोयोगपूर्वक नियोजित करके विभिन्न प्रकार की संपदाऐं, विभूतियां अर्जित की जा सकती हैं। जो समय गंवाता है, उसे जीवन गंवाने वाला ही समझा जाता है।

समय की तरह ही विचार प्रवाह को भी सत्यप्रयोजनों में निरत रखा जाए। उत्कृष्ट उपयोगी विचारों को मर्यादा में सीमाबद्ध रखने से वे सृजनात्मक प्रयोजनों में लगते हैं और महत्वपूर्ण प्रतिफल उत्पन्न करते हैं। मनोनिग्रह के अभ्यास से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त करते हैं। नित्य विचारों की अनगढ़ता अस्त–व्यस्तता से बचना चाहिए। विचारों को सुनियोजित कर लक्ष्य विशेष से जोड़कर लौकिक व आत्मिक जगत में लाभाविन्त होना चाहिए। व्यक्ति जो भी कार्य करता है, वह विचारों की परिणति है। ''जो जैसा चाहता है, वह वैसा ही करता है।'' इस उक्ति को सदैव स्मरण रखना चाहिए। विचारों को आवारा कुत्तों की तरह अचिंत्य चिंतन में भटकने न देने का नित्य अभ्यास करना चाहिए। विचारों को हर समय उपयोगी दिशाधारा के साथ नियोजित करके रखना चाहिए। अनगढ़, निरर्थक विचारों से जूझने के लिए सदविचारों की सेना को पहले से ही तैयार रखना चाहिए। अचिंत्य चिंतन उठते ही जूझ पड़े और उन्हें निरस्त करके भगा दें। चिड़िया घर से बडा होता है, उसमें पशु–पक्षियों का घुमने–फिरने की आजादी होती है पर बाहर जाने नही दिया जाता, ठीक यहीं नीति विचार वैभव के बारे में भी बरती जाए, उन्हें जहां–तहां बिखरने न दिया जाए।

परिश्रम एवं मनोयोग का प्रत्यक्ष फल धन है। भौतिक एंव आत्मिक दोनों क्षेत्रों में व्यक्ति को अपव्यय की छुट नहीं है। पैसा चाहे अपना हो या पराया, मेहनत से कमाया गया हो या मुफ्त में मिला हो, उसे हर हालत में जीवनोपयोगी, समाजोपयोगी सामर्थ्य मानना चाहिए। श्रम, समय एंव मनोयोग मात्र सत्यप्रयोजनों हेतु ही व्यय करना चाहिऐ। श्रम, समय एंव मनोयोग तीन संपदाऐं भगवत प्रदत्त हैं। अतः धन को काल देवता एंव श्रम देवता का सम्मिलित अनुदान करना चाहिऐ। जैसी दूरदर्शिता समय और विचार के अपव्यय के लिए बरतने की है, वैसी ही धन पर भी लागू होती है। बचाया धन परमार्थ मे ंही लगाना ठीक रहता है। बुद्धिमानी इसी में हैं कि जितना भी कमाया जाए, उसका अनावश्यक संचय अथवा अपव्यय न हों। जो कमाए हुए धन का सदाशयता में उपयोग नही करता, वह घर में दुष्प्रवृत्तियों को आमंत्रित करता है। लक्ष्मी उसी घर में फलती–फूलती है, जहां उसका सदुपयोग होता है। आडम्बरयुक्त विवाह, प्रदर्शन, फैशन परस्ती में अनावश्यक खर्च करने से उपार्जन का सही उपयोग नहीं होता। यहीं से सामाजिक अपराधों को बढ़ावा मिलता है। पारिवारिक कलह, मुकदमेबाजी आदि भी इन्हीं कारणों से उपजती है। समुद्र संचय नही करता, मेघ बनकर बरस जाता है, तो बदले में नदियां दूना जल लेकर लौटती है। यदि वह भी कृपण हो, संचय करने लगता, तो नदियां सूख जातीं, अकाल पड़ जाता और यदि अत्याधिक उदार हो घनघोर बरसने लगता तो अतिवृष्टि की विभीषका आ जाती है। अतः समन्वित नीति ही ठीक है। ध्यान रखना चाहिए कि जो उपार्जन से बचाया जाए, उसे उचित प्रयोजन में नियोजित कर दे। कमाने में न अनीति बरती जाए और न उपेक्षा। खर्च करने में सज्जनता एवं सत्परिणामों की जांच पड़ताल रखी जाए अन्यथा संपन्नता, दरिद्रता से भी अधिक घातक सिद्ध होती है। इससे समाज में दूषित परम्पराएं पनपती हैं। धन को लक्ष्मी कहते हैं। सत्यप्रयोजन में लगे तो लक्ष्मी, अपव्यय किया जाए, अनीति से कमाया या खर्च किया जाए तो वह माया हैं माया का नाश सदैव हुआ है।

संयम पर टिक पाने का कारण उसका स्वरूप न समझ पाना है। स्वरूप न समझ पाने से व्यक्ति उसी तरह फंस जाते हैं, जैसे अंधेरी रात में मार्ग में भरे पानी को सूखी जमीन समझकर व्यक्ति उसमें पैर फंसा देता है। स्वरूप एंव महत्त्व समझना कठिन नहीं है, परंतु उसके लिए मनुष्य को पूरा प्रयास तथा नित्य प्रति अभ्यास करना होगा। स्वरूप और महत्व समझने के लिए आवश्यक उधोग न कर पाना भी असंयम की वृत्ति की ही प्रतिक्रिया है। अतः जो संयम का लाभ लेना चाहें वे उसका स्वरूप और महत्व समझें। संयम का एक पक्ष जहां अनावश्यक अपव्यय को रोकना है, वहां दूसरी ओर उसे सृजनात्मक कार्यों हेतु नियोजित करना भी है। सामर्थ्य तभी श्रेयस्कर परिणाम उत्पन्न करती हैं, जब उसे अस्त–व्यस्तता एंव अनुपयुक्तता से बचाकर सृजनात्मक सत्यप्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किया जाऐ।

सप्तर्षियों की बैठक होने वाली थी। उससे पूर्व ही वेदव्यास को महाभारत लिखकर देना था। समय कम था, तो भी उन्होंने गणेश जी की मदद ली और महाभारत लिखना प्रारंभ कर दिया। महाभारत समय से पूर्व ही लिखा गया। अंतिम श्लोक लिखते हुए व्यास जी ने कहा– गणेश आश्चर्य है कि पूरा महाभारत लिखा गया और इस बीच आप एक शब्द भी नहीं बोले। गणेश जी ने कहा– भगवन् इस संयम के कारण ही हम लोग वर्षों का कार्य कुछ ही दिन में संपन्न करने में समर्थ हुए हैं। पांच ज्ञानेंद्रियां और पांच कर्मेंद्रियां।(1) आंख, (2) कान, (3) जिहवा (4) त्वचा नाक ये इन्द्रियां विषयों का ज्ञान प्राप्त कराती हैं। आंख से भला बूरा कहना, कान से कोमल कठोर शब्द सुनना, नाक से सुगन्ध दूर्गन्ध सूंघना, जिह्वा से खाद्य–अखाद्य का स्वाद जानना, त्वचा से कोमल या कठोरता का अनुभव करना। प्रत्येक इन्द्रिय का एक देवता होता है उसी से विषयों की उत्पत्ति होती है। आंख का विषय रूप और सूर्य देवता है। सूर्य या अग्नि न हो तो आंखें बेकार हैं। कान का विषय शब्द ,गुण आकाश है। नाक का विषय गन्ध ओर गुण पृथ्वी है। जीभ का विषय रस ओर गुण जल है। त्वचा का विषय स्पर्श और गुण वायु है। इन गुणों और शक्तियों के कारण इन इन्द्रियों का उपयोग बहुत अधिक है।

पांच कर्मेद्रिंयों में – 1. वाणी, 2. हाथ, 3. पैर, 4. जननेंद्रिय, 5. गुदा हैं। वाणी या मुख से बोलते हैं, स्वाद चखते हैं। हाथ से कार्य करते हैं, पैर से चलते हें। जननेंद्रिय से मूत्र त्याग और गुदा से मल निकालते हैं।

यह इन्द्रियाँ आत्मा की सुविधाजनक विकास यात्रा के सहायक उपकरण है। यह आत्मा के औजार हैं, सेवक हैं, परमात्मा ने इन्हें इसलिये प्रदान किया है कि इनकी सहायता से आत्मा अपनी आवश्यकताऐं पूरी करें और सुख प्राप्त करें। यह सभी इन्द्रियां बडी उपयोगी हैं। सभी का कार्य जीवन को उत्कर्ष और आनन्द प्राप्त करना है। यदि उनका सदुपयोग किया जाए तो मनुष्य निरन्तर जीवन का मधुर रस चखता हुआ जन्म को सफल बना सकता है।

ज्ञानेन्द्रियां ईश्वर ने शरीर में ऊपर की ओर बनाई हैं और कर्मेन्द्रियाँ नीचे की ओर। इससे परमात्मा ने ज्ञान को प्रधानता दी है, और यह संकेत दिया है कि ज्ञान के अनुसार, विवेक के अनुसार ही कर्म करो। इनसे तुम्हें सुख मिलेगा और अधोगामी विषयों में भटके तो यही इन्द्रियां तुम्हारे लिए काल रूप और विनाश का कारण बन जायेंगी।

राजेन्द्र यह शरीर एक रथ है। इस पर आरूढ़ होने वाला स्वामी जीवात्मा है। जीवात्मा को यह वाहन मोक्ष प्राप्त करने के लिए मिला है। दसों इन्द्रियां इस रथ के घोड़े हैं। मन इन घोड़ों को नियंत्रण में रखने वाली बागडोर है। इन्द्रियों के घोड़े विषयों की सड़क पर चलते हुए मुक्ति यात्रा की ओर बढ़ते हैं। इस वाहन का सारथी है मनुष्य की बुद्धि और उसका विवेक। यदि वह सजग है तो इन्द्रियाँ विषयों में न भटककर कुशलतापूर्वक अपने स्वामी को परमात्मा की समीपता में पहुंचा देती है। इन्द्रिय संयम का सिर्फ इतना ही मतलब है कि इन्द्रियाँ जब भी विषयों की और दौडें तब उन्हें सावधानी से सम्भाला जाए और उस शक्ति को बर्बाद न किया जाए जिससे आत्मा की विकास यात्रा पूरी होती है। '' इन्द्रियविषयों का चिन्तन करते हुए मनुष्य की उनमें आसक्ति उत्पन्न हो जाती है और ऐसी आसक्ति से काम उत्पन्न होता है और फिर काम से क्रोध प्रकट होता है।, ''[7]

इंद्रिय नियंत्रण का मूल मंत्र है –आत्म संयम। शरीर की शक्तियाँ जीव की विकास यात्रा के लिए उपयोगी नहीं आवश्यक भी हैं। शरीर में बल ओर वीर्य की प्रचुर मात्रा न रहे तो वह आत्मिक आदेशों का पालन भली प्रकार नहीं कर सकेगा इसलिए वीर्य रक्षा आवश्यक है और संभोग क्रिया को नियंत्रित कर दिया जाता है। यह सन्तानोत्पत्ति का साधन है ताकि भावी पीढ़ियां चलती रहें पर बेकाम वीर्य पात का कोई उपयोग नहीं, उल्टे उससे शारीरिक शक्ति का पतन होता है और मनुष्य की बुद्धि विभ्रमित होकर आत्म–कल्याण का मार्ग छोड़ देती है।

आहार शरीर की सबसे बडी आवश्यकता है, उसे सभी जानते हैं। आहार न मिले तो जीवित रहना मुश्किल हो जाय। यह शरीर के लिए अत्यंत आवश्यक धर्म है किन्तु शरीर–रक्षा के लिए स्वाद की उपयोगिता समझ में नही आती। केवल स्वाद–2 की लालसा से पेट खराब हो जाता है, स्वास्थ्य गिर जाता है। इस तरह आहार जो शरीर की आवश्यकता थी वहीं विधर्मी बनकर हमारी शक्तियों के पतन का कारण बन जाता है कोई भी इन्द्रिय हो उसके उपभोग की एक सीमा निर्धारित है। उस सीमा के अन्दर बने रहने से ही उसका सच्चा उपयोग किया जा सकता है। पर यदि उसका अतिक्रमण किया

गया तो रोग और शोक घेर लेंगे। उपकारी इंद्रियाँ ही तब बन्धन का कारण बन जाएगी इसलिये इन्द्रिय निग्रह के लिए आत्म संयम की बड़ी आवश्यकता है।

इतना जानते, समझते हुए भी लोग विषयासक्त देखे जाते हैं इसका कारण भांति–2 के प्रलोभन होते हैं। लोगों को तरह–तरह के भोग भोगते देखकर, श्रृंगार, सजावट तथा बनावट देखकर, अविवेकी जन खुद भी वैसा ही करने के लिए ललायित होते हैं। इन प्रलोभनों में प्रायः नैतिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति और निर्बल चरित्र वाले ही फंसते हैं। जिनकी आवश्यकताऐं विलासी इच्छाऐं, चटोरपन, अनुचित मांगे, नशे बढ़े हुये हैं वे ही प्रायः प्रलोभनों के सामने घुटने टेकते हैं और उसके दुष्परिणाम भोगते हैं।

इन प्रलोभनों से बचने के लिये प्रतिदिन कुछ समय निकालकर आत्म चिन्तन करना और आत्म संकेतों दवारा आत्मा तथा मन को बलवान बनाना आवश्यक है मेरा मन पर पूर्ण अधिकार है। मैं अपने मन का स्वामी हूं। वह मेरी आज्ञा से कार्य करता है। प्रचण्ड अग्नि और भयंकर तूफान भी मूझे नष्ट नहीं कर सकते। मैं अमर हूं, शाश्वत हूं। शरीर का सम्राट मैं आत्मा असंख्यों सूर्यों की शक्ति रखता हूं। मैं विश्व को प्रेममय देखता हूं। मेरा मन से कोई विरोध नहीं है, मैं जो कुछ करता हूं वह सब आत्म–कल्याण की भावना से होता है।'' इस प्रकार का संकल्प प्रतिदिन शरीर के तमाम झंझटों से थोडा समय निकालकर दोहराते रहना चाहिये। ऐसा करने से विषयों के प्रलोभनों से सावधान बने रहेंगे। इन दिनों इस देश में दीर्घजीवी पुरूषों की कमी इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वीर्य रक्षा पर आवश्यक ध्यान नही दिया जाता ।

इन्द्रिय संयम के लिए ब्रह्या व्रत की महिमा सर्वविदित है। इसकी शक्ति अमोघ मानी गई है और आज संसार में जितने व्यक्तियों ने महान और उपयोगी काम कर दिखाये हैं वे किसी न किसी रूप में ब्रह्या के अनुगामी थे। आजकल के लोग कभी संभोग की नीति की स्वच्छन्दता का प्रचार करते हैं। तब वे केवल भोग प्रधान पार्थिव अंश को ही ध्यान में लेते हैं जीवन की इतनी क्षुद्र कल्पना वे ले बैठे हैं कि थोडे ही दिनों में उन्हें यह अनुभव हो जाता है कि ऐसी स्वन्तत्रता में किसी तरह की सिद्धि नही है और न सच्ची तृप्ति ही। उन्हें कभी सन्तोष नही मिलता।

मनुष्य शरीर में जीवात्मा का अवतरण निःसंदेह उसका बहुत बडा सौभाग्य होता है। विचार, विवेक और जीवन से मुक्ति के अन्य साधन जितने मनुष्य योनि में मिले होते हैं वे अन्यत्र उपलब्ध नहीं । मनुष्य चाहे तो अनन्त विभूतियों का स्वामी बन सकता है। मनुष्य देवता बन सकता है मनुष्य भगवान बन सकता है। सारी संभावनाऐं इस शरीर में सन्निहित हैं। इसके लिए इन्द्रिय संयम मनुष्य मन पांच इन्द्रियों के विषय वस्तुओं से बने इस संसार की ओर भागता रहता है। तुम यदि शांत बैठे हो, चाहे तो आंखे खुली हों, या बंद देखों, तुम्हारा मन कहां जाता है? तुम्हारा मन कुछ देखने के लिए भागता है, तुम कोई दृश्य, किसी व्यक्ति को देखना चाहते हो। इसी तरह मन कुछ सुंघने , स्वाद लेने, सुनने अथवा स्पर्श करने के लिए अथवा कोई पढ़े सुने विचार की ओर भागता रहता है। ऐसे किसी भी अनुभव की चाह तुम्हें वर्तमान क्षण मे नहीं रहने देती है।

तुम्हारी प्रसन्नता के साधन तुरंत ही रसहीन बन जाते हैं, पूरी सजगता और तन्मयता से अपनी हर एक इच्छा को देखो और याद करो कि तुम मर जाने वाले हो। तुम्हें मीठा खाने की बहुत इच्छा है, ठीक है तुम्हारे पास क्विंटल भर मीठा हो जाए तब सजगता से देखो , इसमें क्या है? तुम पाओगे इसमें कुछ भी नही है।और क्या इच्छा होती है, सुन्दर दृश्य? लगातार दृश्य ही देखते जाओ, कितनी देर तक तुम देखते रह पाओगे? तुम कैसे भी बेहतरीन दृश्यों को भी भूल जाते हो, तुम बस कुछ क्षण मात्र ही किसी दृश्य को लगातार देख सकते हो। आंखे थक जाती है और तुम्हें उन्हें मूंदना ही पड़ता है। और तुम्हारे मन में क्या इच्छाऐं उठ सकती हैं? काम वासना? तुम कितना सम्भोग कर सकते हो? जितना कर सकते हो वह कर के खत्म करो, तुम्हें पता चलेगा कि इसमें कुछ भी नहीं है। कुछ क्षण बाद ही जो शरीर अत्यधिक आकर्षक था, वह सौंदर्यविहीन प्रतीत होने लगता है। इसके अलावा और कोई भी विषय वस्तु, इन सभी में सीमितता है, पर यदि तुम मन को परखोगे तो पाओगे कि मन असीमित की चाह रखता है। मन को असीमित सुख की चाह है जो पांच इन्द्रियां नहीं दे सकती। यह असंभव है, तुम इस चक्कर मे बार–बार वहीं करते करते थक जाते हो। अधिकतर लोग ऐसे हैं जो स्वयं को वैरागी मानते हैं, वह संसार को दोष देते रहते हैं, इन्द्रियों को दोष देते हैं और विषय वस्तुओं से भयभीत हो दूर भागते हैं। उन्हें लगता है कि यह सब बड़ा प्रलोभन है। उन्हें कुछ प्रलोभित कर सकता

है, तुम्हें कैसे कुछ लुभा सकता है। प्रलोभन का भय और भी बुरा है। क्या तुम यह समझ रहे हो? कैसे तुम्हें कुछ प्रलोभित कर सकता है? इन्द्रियों को दोष न देते हुए, विषय वस्तुओं के सम्मान और सत्कार के साथ, युक्तिपूर्वक स्वयं में स्थित हो जाना ही वैराग्य है। '' जिस प्रकार पानी में तैरती नाव को प्रचण्ड वायु दूर बहा ले जाती है उसी प्रकार विचरणशील इन्द्रियो में से कोई एक जिस पर मन निरन्तर लगा रहता है, मनुष्य की बुद्धि को हर लेती है।,''[8]

कुछ क्षण के लिए ही सही तुम कहो की चाहे कितना भी सुन्दर दृश्य क्यो न हो, मेरी उसे देखने में कोई रूचि नहीं, कितना भी स्वादिष्ट भोजन क्यों न हो, अभी समय नही है और मेरी खाने में अभी कोई रूचि नही है, कितना ही सुन्दर संगीत क्यों न हो, अभी इस समय मुझे सुनने में भी कोई आसक्ति नहीं, कितना भी सुन्दर स्पर्श क्यों न हो, मुझे उसे महसूस करने में कोई भी रूचि नही है। चाहे कुछ ही क्षण के लिए ही सही, अपनी इन्द्रियों को विषय वस्तुओं के प्रति इस लालसा और ज्वरता से मुक्त कर लेना ही वैराग्य है। केवल कुछ क्षणों के लिए ही सही, मन को भौतिक इन्द्रिय सुख से समेटकर स्वयं में स्थापित कर लेना ही वैराग्य है। यह ध्यान के पथ की दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जब भी तुम गहरे ध्यान करना चाहते हो, तुम्हारा मन वैराग्य में होना चाहिए। बिना वैराग्य के ध्यान संभव ही नहीं है, बिना वैराग्य के ध्यान भी तुम्हें विश्रांति नहीं देगा। फंसा हुआ मन एक के बाद एक इच्छाओ के पीछे भागते–2 थक जाता है। तुम पीछे मुडकर अपनी सभी इच्छाओ को देखो, क्या उन्होंने पूरे होने पर कभी भी तुम्हें कोई आराम दिया है? नहीं, इन्होंने कुछ और इच्छाओं को ही जन्म दिया है। फिर मन इन उपजी हुई इच्छाओं में लग जाता है, फिर ये इच्छाऐं भी कुछ संतुष्टि नही देती बल्कि एक और आशा जगाती हैं कि कहीं कुछ और अधिक ऐसे तुम एक गोल चक्कर काटते हुए झूले में सवार हो जाते हो जो कही पहुंचता नही है। तुम्हें ऐसा भ्रम होता है कि तुम कोसों दूर चले हो पर तुम कहीं नही पहुंचते। इच्छाओं के पीछे जीवन ऐसी ही एक दौड बन जाता है। जिसमें भागते–2 भी कही पहुंचते नहीं। जो मन इच्छाओं से भरा हुआ है, वह ध्यान में नही उतर सकता।

अब इसमें दो तरह के मत हैं, पहला तो यह कि मन में कोई इच्छा नहीं होनी चाहिए। मन में कोई इच्छा न होना भी एक इच्छा ही है। ऐसे में कुछ लोग अपनी इच्छाओं को मारने में लगे रहते हैं, वह भी घूमा फिरा कर भागते रहते हैं और ऐसे कुछ घटता नहीं हैं।

मन की किसी भी इन्द्रिय सुख अथवा कोई भी सूने हुए अलौकिक सुख की चेष्ठा एक बाधा है, मन की यह भागदौड़ बाधा है। ध्यान में कोई भी चाह एक बाधा है, तुमने कभी किसी से सुना कि उनके ध्यान में उन्हें प्रकाश दिखा या फिर कोई तो स्वर्ग से आया और उन्हें हाथ पकडकर ले गया और फिर तुम आंख बंद कर वही देखने लगते हो। यह सब मिथ्या है।

प्रसन्नता की चाह तुम्हें दुखी कर देती है, यह परखो की जब भी तुम अप्रसन्न अथवा दुखी हो तो उसके पीछे तुम्हारी प्रसन्नता की आकांक्षा है। प्रसन्नता की लालसा दुख ले आती है। यदि तुम प्रसन्नता के लिए लालयित नही होते तो तुम प्रसन्न होते हो। तुम्हारी प्रसन्नता की लालसा दुख को आमंत्रित करती है। जब तुम प्रसन्नता की परवाह नहीं करते, तब तुम मुक्त हो जाते हो और जब तुम मुक्ति की भी परवाह नहीं करते, तब तुम प्रेम को प्राप्त होते हो। प्रसन्नता के लिए परवाह न करना पहला कदम है। दूसरा कदम है परम वैराग्य, जब तुम मुक्ति की भी परवाह नही करते तब तुम मुक्त होते हो।

प्रसन्नता मन की एक अवधारणा मात्र है। तुम्हें लगता है कि जो तुम चाहते हो यदि वह सब तुम्हारे पास आ जाये तो तुम प्रसन्न हो जाओगे। जो भी तुम चाहते हो, वह सब तुम्हारे पास हो, क्या तुम प्रसन्न हो जाओगे? प्रसन्नता की इस लालसा को विराम देना ही वैराग्य है।

इसका अर्थ यह नहीं है कि तुम्हें दुखी होना चाहिए, ऐसा न है, इसका अर्थ यह भी नहीं है कि तुम्हें स्वयं का आनंद नही उठाना चाहिऐ, पर प्रसन्नता की लालसा से जब मन मुक्त होता है तभी तुम ध्यान में उतरते हो। तब ही योग संभव है।

अपने कपोल सपनों और कल्पनाओं को नष्ट कर दो। अपने सभी सपनों और कल्पनाओं को अग्नि को समर्पित कर दो, उन्हें स्वाहा हो जाने दो। तुम कौन सी बड़ी प्रसन्नता चाहते हो? उसे कितने दिनों तक बना कर रख पाओगे? क्या ऐसा नहीं है?निश्चित रूप से ऐसा ही है। यह सब कुछ समाप्त होने वाला है इससे पहले कि यह जमीन तुम्हें खा जाऐ, मुक्त हो जाओं। इस ज्वरता से मुक्त हो जाओ, जिसने तुम्हारे मन को जकड रखा है। इस प्रसन्नता की लालसा से मुक्त हो जाओ। '' किन्तु समस्त

राग तथा द्वेष से मुक्त एंव अपनी इन्द्रियों को संयम द्वारा वश में करने में समर्थ व्यक्ति भगवान् की पूर्ण कृपा प्राप्त कर सकता है।,'' [9]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीमद्भगवद्गीता (यथारूप): कृष्णकृपामूति : श्री मद् ए.सी भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, भक्ति वेदान्त बुक ट्रस्ट, 1983, पृष्ठ 90
2. पृष्ठ 98
3. पृष्ठ 100
4. पृष्ठ 101
5. पृष्ठ 101
6. पृष्ठ 102
7. पृष्ठ 103
8. पृष्ठ 106
9. पृष्ठ 105

Mb 9815844696

www.bohalshodhmanjusha.com **Bohal Shodh Manjusha** **ISSN: 2395-7115**
Impact Factor: 8.642 **February 2025** **Page No. : 107-110**
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत का प्रथम आम चुनाव एक महापर्व एवं चुनौतिया

सुरेश कुमार, सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान)
एस.जी.पी.बी. राजकीय कन्या महाविद्यालय, पाली

प्रस्तावना,

आज के वर्तमान समय मे एक देश एक चुनाव का मुद्दा जोरो–सोरो से गरमाया हुआ जब भारत आजादी के बाद पहली बार चुनाव हुआ था तो भारत के सामने क्या चुनौती थी और क्या अनुभव थे जिस प्रकार हमे पहला एक्सपीरियंस हमेशा शानदार होता है। चाहे वो आपका पहली बार साईकिल चलाना हो, पहला दोस्त बनाना हो या पहली बार स्कुल कॉलेज जाना हो ये एक्सपीरियंस मेमोरी बन जाती है यह एक्सपीरियंस किसी व्यक्ति विशेष का नही बल्कि पूरे देश का अनुभव था वो अनुभव जो प्रथम आम चुनाव को लेकर है जो इतिहास का सबसे बडा चुनाव था यह ऐसा चुनाव जिसके बारे मे मैग्जीन में लिखा गया था कि जवाहर लाल नेहरू अपने जीते जी ये देख लेगें कि भारत का पहला चुनाव बुरी तरह असफल रहा इतना ही नही इण्डियन सिविल सर्विस के एक अग्रेंज अधिकारी ने यह तक कह दिया कि आने वाला वक्त लाखो अनपढ लोगो के मतदान की बेहुदगी से भरी नोटंकी देखेगा तो हम इस शोध पत्र में हम जानने की कोशिश करते है जो कहानी दुनिया के सबसे बडे लोकतंत्र को लोकतंत्र बनाने में कितनी कठिनाईयों एवं चुनौतियों का सामना कैसे किया और पहला आम चुनाव हमने सफलतापूर्वक करवाया जो दुसरे देशो के लिए एक भुलभूलैया से कम नही है।

औपनिवेशिक काल से स्वतंत्रता की ओर प्रवेश

पण्डित नेहरू ने 15 अगस्त 1947 को मध्यरात्रि को दिया गया ऐतिहासिक भाषण ये वो वक्त था जब हिन्दुस्तान 200 वर्षो के औपनिवेशिक दमन, दर्द और गुलामी से आजादी मिली थी तब नेहरू ने कहा था कि दुनिया सो रही होगी तो भारत आजादी के लिए जागेगा लेकिन मेरे मन में सवाल ये आता है कि सही मायनो में भारत की आजादी क्या होगी एवं ऐसा क्या करना चाहिए जिससे भारत के नागरिको को लगे कि इस समय वह खुले में सांस ले रहे है। यू तो आजादी की कई परिभाषा है सबसे आसान भाषा में कहे तो लोग आजादी तब महसूस करते है जब उन पर राज किसी और का नही हो बल्कि उनका खुद का राज होगा यानि जनता का, जनता द्वारा, जनता के लिए शासन इसी आधार पर देश में लोकतंत्र स्थापित होता है और इस मुकाम को पाने के लिए ही होता है ‘‘चुनाव’’ भारत का पूरा संविधान लागु होने के पहले ही अनु. 326 को लागू कर दिया था यह कि भारत औपनिवेश काल से स्वतंत्रता कि और प्रवेश था।

पहले आम चुनाव की चुनौतियॉ

स्वतंत्रता का अन्तिम आधार है चुनाव जिस प्रकार किसी भी नये काम को करने में थ्योरी और वास्तविक जमीन स्तर पर किसी कार्य को करने में अन्तर होता है रामचन्द्र गुहा ने इण्डिया आफ्टर गांधी में लिखा है कि चुनाव एक एक्ट के माध्यम से तय हो गया लेकिन चुनाव कैसे होगा, कौन करवायेगा, कैसे होगा, यह एक बडा सवाल था चुनाव करवाना कितना कठिन काम था ये जानने से पहले भारत कि भौगोलिक एवं सामाजिक कठिनाइया थी ।

भौगोलिक एवं सामाजिक चुनौती

आप कल्पना किजिए कि एक ऐसा देश जो उत्तर में हिमालय से लेकर कन्या कुमारी और पश्चिम मे गुजरात, राजस्थान से लेकर पूर्व अरूणाचल मिजोरम तरह तरह की विविधताओं से भरा हुआ है कई घने जंगल है कही समुद्री टापू है तो कही गर्म रेगिस्तान तो कही बर्फीली वादियॉ है जहॉ पर लोग एक मिलियन से अधिक क्षेत्र पर फैले हुए हो इसलिए हर दूर–दराज के गांवो के अन्तिम मील तक जाने के बाद मतदान का आयोजन कर एक बडी भौगोलिक स्थिति जरूर थी अब भारत की सामाजिक स्थिति को समझते है 1951 में भारत की कुल जनसख्या 36.10 करोड थी और साक्षरता दर 18.33 प्रतिशत थी इसके अलावा एक देश जिसने हाल ही में आजादी का स्वाद चखा हों जिस भूभाग के लोगो में सदियो की गुलामी की आदत हो जहा भूखमरी गरीबी हो वहा लोकतांत्रिक चुनाव कैसे कराये जा सकते है एवं कैसे लोगो को समझाएगे कि खेतिहारी किसान जैसे गरीब आदमी के पास वोट की ऐसी ताकत है कि वो अपने वोट से सरकार को चुन भी सकता है और बदल भी सकता है कैसे लोगो को वोट देने के लिए जागरूक करेगे कि आपको वोट देने जाना है कौन करेगे इस समस्या का समाधान कैसे विश्व के सबसे बडे लोकतंत्र के लिए चुनाव करवाने के लिए किसी संस्था की आवश्यकता महसूस हुई इस बात को ध्यान मे रखकर 25 जनवरी 1950 चुनाव आयोग नामक सवैधानिक संस्था का गठन किया गया।

चुनाव आयोग व प्रथम आयुक्त सुकुमार सेन

चुनाव आयोग कि स्थापना के बाद अब उसके पीठाधीश की आवश्यकता थी इसके लिए एक खास आदमी को चुना गया 21 मार्च 1950 को चुनाव आयोग की बागडोर सुकुमार सेन को सौपी गई इस प्रकार प्रथम चुनाव आयुक्त सुकुमार सेन बन गये। सुकुमार सेन आम आदमी नही थे इन्होने कोलक्ता के प्रसीडेन्सी कॉलेज के अलावा लन्दन विश्वविद्यालय से स्नातक कि उपाधि हासिल की थी खास बात यह कि वे गणित जैसे विषय में स्वर्ण पदक विजेता थे 1921 में भारतीय सिविल सेवा में शामिल हुए थे इसके साथ ही सेन पश्चिम बंगाल के सचिव भी रहे एवं कई जिलो में कलेक्टर भी रह चुके थे सेन के लिए भी पहला आम चुनाव करवाना आसान नही था हर मतदाता की पहचान, नाम और पंजीकरण किया जाना था राजनैतिक चिन्ह, मतपत्र, मतपेटिया डिजाइन की जानी थी फिर मतदान केन्द्रो को उचित दूरी पर बनाए रखा जाना था और चुनाव क्षेत्र का मार्गदर्शन भी किया जाना था इसके साथ ही ईमादार और कुशल अधिकारियो की भी आवश्यकता थी वोटिंग पारदर्शी होनी चाहिए ताकि चुनाव लडने वाले राजनैतिक दल निष्पक्षता से चुनाव में भाग ले सके इसके अलावा लोकसभा के साथ–साथ राज्य विधानसभा के भी चुनाव होने थे इस सभी कामो में बहुत समय लगने वाला था लेकिन सेन सभी मुश्किलो से लडने के लिए तैयार थे फिर वो घडी आ गई जिसका सभी को इन्तजार था 19 अप्रैल 1950 को भारत का चुनाव सम्बन्धित कानून The Representative Of People Act का प्रस्ताव पारित करते हुए प्रधानमंत्री नेहरू ने कहा कि चुनाव अगले वर्ष यानि 1951 में होगे।

सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार व मतदान सूची

भारत में अगर वास्तविक लोकतंत्र पहली शर्त यह थी कि सभी वयस्क मताधिकार प्रदान कर वोट देने का अधिकार प्रदान करना यानि अमीर हो या गरीब हो पुरूष हो या महिला राजा हो या फकिर सभी को समान आधार पर मत देने का अधिकार प्रदान करना भारत में 175 मिलियन नागरिको सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार प्रदान कर पश्चिम के देशो को बडे आचार्श्य में डाल दिया कि जिस देश में विभाजन को झेला है जिसमें 12 मिलियन शरणार्थीयों ने विभाजन देखा हो बडी मुस्किल से रियासतो का विलय किया है क्योंकि उस समय कम देश थे जिन्हाने वयस्क मताधिकार प्रदान किया था जैसे कि आपने आप को बडा लोकतंत्र कहने वाला अमेरिका महिलाओ को मतदान का अधिकार 1919 मे सर्वप्रथम न्यूजीलेण्ड ने 1893 ने महिलाओं को मत देने का अधिकार दिया यु.के. ने 1928 फ्रांस ने 1945 में एवं प्रत्यक्ष लोकतंत्र वाले देश स्विट्जरलैण्ड ने 1971 में महिलाओ को मत देने का अधिकार दिया लेकिन भारत ने एक साथ सभी को मत का अधिकार प्रदान किया लेकिन मूल समस्या मतदान के लिए सूची तैयार करना था नवम्बर 1947 में मतदाता सूची तैयार करने के लिए एक योजनातहत जनप्रतिनिधित्व नियम 1950 में पारित किया मतदाता सूची का प्रथम प्रकाशन नवम्बर 1950 में किया गया तथा अन्तिम प्रकाशन 1951 में बिहार, उडिसा, पंजाब

के लोगो का नामकरण किया गया इसके बाद संसद ने जनप्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 पारित किया गया जिसके माध्यम से विधायिका, मशीनरी, मतगणना चुनाव खर्च, योग्यता से सम्बन्धित चुनाव के अन्य प्रावधान किये गये।

शरणार्थियों और महिलाओ की समस्या

भारत में यह प्रावधान किया गया कि 21 वर्ष की उम्र के व्यक्ति को वोट देने का अधिकार है। खास बात यह कि आजादी के बाद भी शरणार्थियो का भारत में आना जारी रहा इनको भारतीय लोकतंत्र हिस्सा कैसे बनाए और शरणार्थियों को वोटिक अधिकार दिया जाए यह भी बडी समस्या थी इस प्रकार भारत सरकार शहरो एवं गांवो में स्थायी पुनर्वास करवा कर शरणार्थियो की समस्या हल कर दी एवं मतदान का अधिकार प्रदान किया लेकिन उत्तर भारत के अलावा राजस्थान के ग्रामीण अंचलो में अजीब समस्या थी महिला अपने जब सरकारी नुमाइन्दो ने नाम दर्ज करने लिए इनके घरो में गये तो उनका असली नाम खेता की लुगाई, भैरा की बहुरीया, रूपा कि अम्मा, कलुआ की अम्मा आदी नामों से महिलाओ के नामो का रजिस्टर किया गया परिणामस्वरूप प्रथम आम चुनाव में 2.8 मिलियन महिलाओ के नाम मतदाता सूची से बाहर किये गया।

जागरूकता कार्यक्रम एवं मतपत्र

1951 में बडे पैमाने पर गरीबी, अशिक्षा के माहौल में चुनाव करवाने के लिए जागरूकता की आवश्यकता थी जिसके लिए लोगों चुनाव आयोग द्वारा जागरूक करने के लिए फिल्मे दिखाई तथा समाचार पत्रों का प्रयोग किया गया व रेडियो पर लोगो को वोट डालने के लिए जागरूक किये गये तथा रेडियो पर सविधान पर कई कार्यक्रम प्रचारित किये गये जिसमे यह बताया गया कि वोट का प्रयोग कैसे करना है जागरूकता बडाने के लिए 397 नये समाचार पत्रो का प्रकाशन किया गया यह कार्यक्रम सफल हुआ इसी के साथ मतपत्र का डिजाइन किस प्रकार किया जाए जिसके माध्यम से मतदाता अपने मनपसन्द के उम्मीदवार को वोट डाल सके क्योंकि उस समय ई.वी.एम. तो नही थी इस प्रकार प्रत्येक उम्मीदवार के चुनाव चिन्ह कि मतपेट चुनाव केन्द्र पर रखी गई और अलग–अलग भाषा में उम्मीदवार का नाम लिखा गया एवं चुनाव में एक विशेष प्रकार कि स्याही जिसको मत दाता के अंगुली पर लगाया गया चुनाव में कुल 3,89,816 शीशियो का उपयोग किया गया।

चुनाव में मतपत्र एक रूपये के आधार का मतपत्र उपयोग किया गया जिसका रंग गुलाबी था जिस पर भारत निर्वाचन आयोग अंकित किया गया इसमें राज्य को दर्शाने वाले दो अक्षर व एक क्रंमाक भी अंकित किया गया था जैसे बिहार के लिए बी.आर., राजस्थान के लिए आर.जे. मतपत्र पर क्रमाक संख्या काले रंग मे तथा राष्ट्रीय चिन्ह सफेद रंग में साथ ही लोकसभा के लिए जैतुनि हरे रंग की एक मोटी पट्टी का उपायो किया गया तथा विधानसभा के चॉकलेटी रंग की पट्टी वाले मतपत्र का उपयोग किया गया पहले मौक पर पोलिंग डिल 5 अगस्त 1951 में राजस्थान उदयपुर मे की गई थी।

प्रथम आम चुनाव मे राजनैतिक दलो के चुनाव चिन्ह

कुल 14 राष्ट्रीय पार्टियो को राष्ट्रीय दलों का दर्जो दिया गया जबकि कुल 53 पार्टियो ने चुनाव लडा था

(1) जिसमे प्रमुख रूप से दावेदार काग्रेस थी जिसके स्टार प्रचारक नेहरू थे जिन्होने कुल 9 सप्ताह में कुल 9000 मील हवाई, 5200 मील कार से 1600 मील रेल से यहा तक कि 90 मील नाव से भी यात्रा कि थी काग्रेस का चुनाव चिन्ह दो बैलो की जोडी।

(2) दुसरा दल सी.पी.आई. जिसका चिन्ह बाली व हन्सिया।

(3) अन्य वाम दलों में किसान मजदूर प्रजा पाटी जिसका चुनाव चिन्ह झोपडी था जिसके अध्यक्ष जीवतराम भगवानदास कृपलानी थे जे.पी. कृपलानी

(4) सोशलिस्टपार्टी चुनाव चिन्ह बरगद का पेड प्रमुख नेता जयप्रकाश नारायण व राम मनोहर लोहिया किन्नोर के कल्पान में मतदान किया इस प्रकार शेष भारत में 10 दिसम्बर 1951 को देश के अन्य भागो में वोट पडे वे राज्य में त्रावण कोर कोम्पीन, उडीसा, मध्यप्रदेश, हैदराबाद व पंजाब शेष सभी राज्यों में जनवरी 1952 में मतदान हुआ उतरप्रदेश उत्तरी पहाडी इलाको मे मतदान फरवरी के दूसरे पखवाडे में हुआ सबसे अधिक मतदान केरल के कोट्टायम मे 80.5 प्रतिशत मे तथा सबसे कम 18 प्रतिशत वर्तमान मध्यप्रदेश के शहडोल मे भारत की वितीय राजधानी बोम्बे जिसमे 1349 मतदान केन्द्र बनाए गये जिसमे 70 प्रतिशत हुआ

बॉम्बे के चुनाव के अगले दिन बर्मा से सटे मीजो पहाडियो मे चुनाव हुआ लगभग 92000 आदिवासी जंगलो के रास्तो से कई दिनो तक चलके के बाद मतदान केन्द्र पर पहुचकर वोट किया इस प्रकार पुरे भारत में 44.87 प्रतिशत मतदान हुआ। इस प्रकार काग्रेंस 364 सी.पी.आई.–16 सोसलिस्ट पॉर्टी 12 के.एम.पी.पी.–9 भारतीय जनसंघ 3 अम्बेडकर जी के दल (एस.सी.एफ.) ने 2 सीटे काग्रेंस को भी कई जगह पर हार का सामना करना पडा जिसमें मुख्यरूप मोरारजी देसाई हार गये इस प्रकार प्रथम आम चुनाव में – कम्यूनिष्ट रवि नारायण रेड्डी जो पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ्रंट से चुनाव जीते जिनके नेहरू से भी अधिक मत प्राप्त किये जिनका निर्वाचन क्षेत्र नलगोड़ा था।

(5) अनुसूचित जाति महासंघ (एस सी एफ) चुनाव चिन्ह हाथी नेता डॉ. B.R. अम्बेडकर
(6) भारतीय जनसंघ चुनाव चिन्ह जलता दीया नेता – श्यामा प्रसाद मुखर्जी
(7) हिन्दू महासभा – चुनाव चिन्ह घोडे पर बैठा एक सैनिक
(8) अखिल भारतीय राम राज्य परिषद – चुनाव चिन्ह दो पहाडो के मध्य निकला हुआ सूर्य नेता करपात्रि महाराज
(9) रिवॉल्यूशनरी सोशलिस्ट पाटी – चुनाव चिन्ह फावडा व खुरपी नेता त्रिदेव चौधरी प्रथम आम चुनाव मे 1874 लोकसभा उम्मीदवार थे संसदीप क्षेत्र 401 सीटे 489 जिसमे मतदान का दिन भौतिक क्षेत्र व जलवायु के आधार पर बनाये गये थे जिसमे 1, लाख 96 हजार 84 मतदान केन्द्र बनाए गये चुनाव के लिये 3 लाख से अधिक अधिकारी व कर्मचारी को ट्रेनिंग दी गई थी लॉएण्ड ऑर्डर के लिए 3.38 लाख पुलिसकर्मी को तैनात किया गया था मतदान दिसम्बर 1951 व फरवरी 1952 के बीच हुआ हिमाचल प्रदेश मे सबसे पहले मतदान हुआ हिमाचल के चीनी व पोंगी विधानसभा क्षेत्र में 25 अक्टूबर 1951 को हुआ क्यो यहां पर शीत ऋतु मे बर्फ बारी हो जाती है।

इस प्रकार स्वतंत्र भारत के पहले मतदान बने श्यामसरन नेगी उन्होने हिमाचल प्रदेश के इस प्रकार जीते से ज्यादा जिस व्यक्ति के हार के चर्चा की वो थे बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर जो मुबई उतर मध्य लोकसभा क्षेत्र से चुनाव मैदान मे थे जो अपने पूर्व निजी सहायक नारायण सदोबा काजरोलकर से लगभग 5000 वोटो से हार गये वही आचार्य जे.बी. कृपलानी उतर प्रदेश के फैजाबाद से हारे लेकिन उनकी पत्नी सुशिला कृपलानी ने कांग्रेस उम्मीदवार मनमोहन सहगल को हराया इस प्रकार प्रथम लोकसभा चुनाव ने उम्मीदवारो को 25000 रूपये व पूर्वोत्तर राज्यो के उम्मीदवारो के लिए 10,000 खर्च करने की अनुमति थी इस प्रकार भारत सरकार के 10.5 करोड रूपये का खर्च हुआ था।

निष्कर्ष :– भारत जब गुलामी से सम्प्रभु राष्ट्र की और आगे बढ़ा तब संविधान में बिना किसी भेदभाव के सभी नागरिको को मतदान का अधिकार दिया गया इस बात कि गारन्टी स्वय संविधान की उद्देश्यका करती है कि संविधान की सर्वोच्च शक्ति भारतीय जनता में निहित है इस शोध के माध्यम से हम निष्कर्ष निकाल सकते कि जब प्रथम आम चुनाव की घोषणा कि तब पश्चिम के मुल्क हमारे लोकतंत्र को शक के नजरिये से देखते थे लेकिन भारत ने सफलता पूर्वक चुनाव का आयोजन करवा के भारतीय जनता को प्रजातंत्र निर्णय प्रकिया में शामिल किया एवं नागरिको की प्रत्यक्ष व निरन्तर भागीदारी को सुनिश्चित किया।

सन्दर्भ सूची :–

1. समकालीन भारतीय राजनीति – एन.सी.आर.टी. कक्षा – 12
2. प्रवीण कुमार – सी.एल.जी. डिग्री कॉलेज – सुमेरपुर
3. बी.बी.सी. हिन्दी – रियान फजल
4. Study IQ by Amrit Upadhyay
5. भारत निर्वाचन आयोग
6. इण्डिया ऑफटर नेहरू – रामचन्द्र गुहा

ई–मेल आई.डी. –skchouhan670@gmail.com मोबाईल न. – 9928914776

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 111-114
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

खानवा युद्ध और राणा सांगा

भोजाराम, अतिथि शिक्षक इतिहास,
राजकीय महाविद्यालय सांकड़ा,जैसलमेर

सार –

खानवा युद्ध भारत के इतिहास में निर्णायक युद्ध में माना जाता है इस युद्ध के परिणामों ने न केवल राजस्थान बल्कि भारत के इतिहास को व्यापक दृष्टि से प्रभावित किया है इसमें एक तरफ उत्तर भारत का शक्तिशाली महाराणा सांगा जिसने उत्तराधिकारी संघर्ष में अंतत विजय होकर मेवाड़ का शासक बना। राणा सांगा ने जो हिंदूपत के नाम से जाना जाता है। उसने अपने पड़ोसी राज्यों गुजरात और मालवा जो मेवाड़ के प्रतिद्वंदी थे उनको पराजित कर दिल्ली सल्तनत के सुल्तान इब्राहिम लोदी को पटकनी दे दी अब संपूर्ण उत्तरी भारत में उनके समक्ष टिकने वाला शासक कोई नहीं रहा।

वहीं दूसरी तरफ मुगल बाबर था जिसे अपने पिता से परगना की छोटी सी रियासत मिली थी वहां पर भी उनके चाचाओं से संघर्ष हुआ तो उसने समरकंद पर आक्रमण करके अधिकार किया। लेकिन वहां पर भी स्थाई अधिकार नहीं हो पाया तो बाबर ने भारत के पश्चिमी भाग काबूल पर अधिकार कर भारत पर आक्रमण करने का विचार किया।

बाबर ने पानीपत के युद्ध में इब्राहिम लोदी को हराकर दिल्ली और आगरा का शासक बना। अब उसका सामना महाराणा सांगा से होना अवश्यभावी हो गया।

खानवा युद्ध महाराणा सांगा की पराजय से विधर्मी आक्रांताओं को देश से बाहर निकालने तथा हिंदू राज्य की स्थापना के सपने चूर–चूर हो गए। इस युद्ध में राजपूतों की युद्ध पद्धति कूटनीति महत्वाकांक्षा उजागर हो गई जो उन परिस्थितियों में सही साबित नहीं हुई।

प्रस्तावना –

उत्तराधिकारी संघर्ष के बाद राणा सांगा में 1509 ईस्वी में रायमल की मृत्यु के बाद मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। उसे समय मेवाड़ चारों ओर शत्रुओं से घिरा हुआ था दक्षिण पश्चिम में गुजरात दक्षिण पूर्व में मालवा तथा उत्तर पूर्व में दिल्ली के मुस्लिम शासको से चित्तौड़ को सुरक्षित रख पाना एक चुनौती थी। वहीं राजपूताना के राज्य भी अपनी छोटी–छोटी रियासतों में स्वतंत्रता बनाए रखना चाहते थे।

राणा सांगा ने अपनी कूटनीति रणचातुर्य और वीरता से राजपूताना के सभी राजपूतों से मित्रता कर ली तथा पड़ोसी मुस्लिम राज्यों से उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी भी ले ली।

अब सांगो न मेदिनीराय को शरण देकर मालवा को कमजोर कर दिया और उसकी सहायता से मालवा के शासक महमूद खिलजी को परास्त कर बंदी बना लिया। लेकिन 6 महीने बाद उसको रहा कर दिया। हालांकि कुछ विद्वान राणा सांगा के इस कार्य को उनकी अदूरदर्शिता बताते हैं लेकिन राणा ने सनातनी संस्कृति की भावना रखते हुए यह कार्य किया था।

ईडर के उत्तराधिकारी संघर्ष में राणा सांगा ने भाग लेकर गुजरात के सुल्तान को नाराज कर दिया था। लेकिन राणा ने गुजराती सेना के आक्रमण को असफल कर दिया।

मालवा गुजरात को परास्त करने के बाद राणा सांगा ने दिल्ली सल्तनत से टक्कर ली तथा 1517 में खतौली में इब्राहिम लोदी को परास्त किया तथा 1518 में बाड़ी के युद्ध में लोदी की सेना को परास्त किया।

यहीं से राणा सांगा का स्वर्ण काल शुरू होता है अब राणा सांगा उत्तर भारत का सबसे शक्तिशाली शासक बन गया।

दिल्ली सल्तनत को परास्त करने के बाद राजपूताना के सभी छोटे–मोटे राज्य राणा सांगा की अधीनता में आ गए। अब राजपूत शासक राणा सांगा से मैत्री कर अपने को सौभाग्यशाली मानने लगे। और भारत में हिंदू राज्य की स्थापना के सपने बुनने लगे। बाबर ने अपने ग्रंथ बाबरनामा में लिखा है कि राणा का मुल्क 10 करोड़ की आमदनी का था उसकी सेवा में 1 लाख सवार थे और उसके साथ 7 राजा 9 राव और 104 छोटे सरदार थे।

1526 ईस्वी में भारत की इतिहास में परिवर्तन आया और मुगल बाबर ने पानीपत के युद्ध में इब्राहिम लोदी को हराकर दिल्ली की गद्दी पर अधिकार कर लिया तथा सल्तनत की सता को समाप्त कर दिया।

यदि इस समय राणा सांगा ने दूरदर्शिता का परिचय दिया होता और पानीपत युद्ध के बाद थकी हुई मुगल सेनासे मुकाबला कर दिल्ली और आगरा में अपनी सत्ता स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए था ताकि पृथ्वीराज चौहान के बाद दिल्ली पर पुनः हिंदू राज्य स्थापित हो पाता।

यद्यपि बाबर ने स सांगा पर झूठा विश्वासघात का आरोप लगाया कि सांगा ने उसे भारत पर आक्रमण का न्योता दिया तथा सहायता देने का वादा किया। लेकिन ऐसा नहीं है क्योंकि सांगा दो बार दिल्ली की सेना को हरा चुका था उसे बाबर की सहायता की आवश्यकता नहीं थी और दूसरी बात बाबर एक विदेशी था तो सहायता मांगने का कोई औचित्य नहीं था।

हालांकि राणा सांगा ने चंद्रगुप्त मौर्य समुद्रगुप्त सम्राट हर्ष की भांति संपूर्ण भारत पर आधिपत्य स्थापित करने की दूरदर्शिता नहीं थी।

खानवा युद्ध के कारण –

बाबर ने आरोप लगाया कि राणा ने उसे सहायता देने और भारत पर आक्रमण हेतु बुलाया है जबकि राणा सांगा की शक्ति और बहादुरी को देखकर बाबर ने ही राणा से सहायता मांगी थी ऐसा ही उचित लग रहा है। दोनों शासको की महत्वाकांक्षाएं टकराई। पानीपत युद्ध के बाद सांगा ने दिल्ली सल्तनत के 200 गांव को अपने अधिकार में कर लिया और दोनों राज्यों की सीमाएं टकराने लगी। बाबर भी पड़ोसी शक्तिशाली मेवाड़ राज्य को बनाए रखना नहीं चाहता था।

राणा ने समझा कि बाबर पानीपत युद्ध के बाद लूट खसौट कर वापस काबूल चला जाएगा लेकिन बाबर द्वारा यहां पर स्थाई शासन स्थापित करने की स्थिति राणा सांगा के लिए असहनीय थी।

इब्राहिम लोदी का छोटा भाई महमूद लोदी सांगा की शरण में आ गया तथा हसन खां मेवाती सहित सांगा से मिल गया और विदेशी बाबर को बाहर निकालने हेतु योजना बनाई। संघर्ष का एक कारण धार्मिक और सांस्कृतिक विचारधारा भी थी एक का शक्तिशाली होना दूसरे के धर्म के लिए क्षति पूर्ण हो सकता था। हालांकि राणा के साथ मुस्लिम सेनापति थे तो यह बात राणा के परिपेक्ष में सही साबित नहीं होती।

खानवा युद्ध –

पानीपत में बाबर की विजय के बाद राणा सांगा ने सभी राजपूत शासको और सरदारों को निमंत्रण भेजा और सभी राजपूत राणा की सेवा में अपने सामर्थ्य अनुसार उपस्थित हुए।

राणा सांगा ने बयाना क्षेत्र के मुस्लिम सरदारों को खदेड़कर बयाना की ओर बढ़ा। बयान में इस समय बाबर की ओर से मेहंदी ख्वाजा दुर्गरक्षक था। राणा सांगा की घेराबंदी से दुर्ग में तैनात मुगल सेना की स्थिति शोचनीय थी और निराश होकर मुगलों ने आत्म समर्पण कर लिया।

बयाना की विजय महाराणा सांगा की अंतिम महान विजय थी।

इस युद्ध की पराजय से मुगल सेना में राणा की सेना का खौफ इतना बढ़ गया कि मुस्लिम सी ने युद्ध लड़ने से मना कर दिया था। इसी समय काबुल से आए ज्योतिषी मोहम्मद शरीफ ने मुगलों की पराजय की भविष्यवाणी कर दी।

बाबर ने हतोत्साहित मुगल सेना में जोश भरने के लिए एक उत्तेजित भाषण दिया। युद्ध को जिहाद घोषित किया गया तथा स्वयं ने शराब न पीने की कसम खाई और मुसलमानों से लिए जाने वाले धार्मिक कर (

तमगा) को बंद करने की घोषणा की। फिर बाबर मार्च 1527 में सेना सहित खानवा मैदान में जा पहुंचा और अपनी सेना तोपखाने को सुव्यवस्थित करने लग गया।

बयाना युद्ध के बाद सांगा ने बाबर का काबुल से सहायता रसद मार्ग बंद करने का विचार किया तथा देरी से खानवा मैदान पहुंचा जिससे बाबर को अपनी सेना सुव्यवस्थित करने का समय मिल गया।

यदि सांगा ने भयभीत मुगल सेना पर तत्काल आक्रमण किया होता तो शायद परिणाम कुछ और होता।

बाबर ने अपनी सेना को तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल नई सैनिक गतिविधियों का प्रयोग करते हुए अपने सेना को सजाया। बाबर ने उजबेगों तुर्कों द्वारा सेना में हुए प्रयोग को आजमाया जबकि दूसरी तरफ राणा सांगा की सेना संख्या बल में ज्यादा थी तथा परंपरागत पद्धति वाली सैनिक गतिविधियों पर आधारित थी। हाथियों पर अधिक भरोसा जताया गया तथा सेना में नई तकनीक को नहीं अपनाया गया। 17 मार्च 1527 को प्रातः 9:00 बजे रणभेरी बजी।

राणा सांगा की सेना का प्रारंभिक आक्रमण इतना जोरदार था कि मुगल सेना का एक भाग तीव्र गति से नष्ट हो गया। तभी मुस्तफा रूमी की तोपों की मार से राजपूत सेवा में भगदड़ मच गई। राजपूतों की अग्र पंक्ति के हाथी तोपों के गोलों से घबराकर वापस अपनी सेना को रौंदने लगे। इस समय तुलुगमा पद्धति पर आधारित अश्वारोही सेना ने राजपूतों पर आक्रमण किया था थकी हुई राजपूत सेना इस ऊर्जावान सैनिकों का मुकाबला ना कर सकी तभी सलहदी तंवर अपनी सेना सहित युद्ध मैदान से बाहर आ गया। हसन खां मेवाती सहित कई राजपूत सरदार युद्ध में काम आ गए, तो आक्रोशितराणा स्वयं युद्ध लड़ने आ गया लेकिन एक तीर सिर पर लगने से राणा मूर्छित हो गए।

काठियावाड़ के झाला राज सिंह के पुत्र झाला अज्जा ने राणा सांगा के राज्य चिन्ह को धारण किया और अजमेर के पृथ्वीराज, जोधपुर के मालदेव एवं सिरोही के अखैराज की देखरेख में राणा को युद्ध मैदान से बाहर निकाल कर बसवा ले जाया गया।

युद्ध स्थल में राणा की मौजूदगी नहीं होने पर राजपूत सेवा का धैर्य टूट गया। और अंत में विवश होकर राजपूत सेना युद्ध मैदान छोड़कर भाग निकली। बाबर को निर्णायक विजय मिली। उसने कटे राजपूत सैनिकों के सिरों की मीनार बनाई और 'गाजी' की उपाधि धारण की।

इस युद्ध में राणा सांगा और राजपूत सेना की पराजय के कई कारण उजागर हुए जो संख्या बल में अधिक होने पर भी राजपूतों की पराजय हुई । संलहरी तंवर का भी सेना सहित युद्ध से निष्क्रिय रहना भी सांगा की हार का कारण रहा।

संलहरी तंवर के मन में शंका थी कि यदि सांगा जीत गया तो दिल्ली को पुनः अफगानों को दे देगा जबकि सलहदी तंवर पैतृक राज्य दिल्ली को चाहता था। सांगा की गुप्तचर व्यवस्था सही नहीं थी यदि वह पानीपत युद्ध को देखकर खानवा युद्ध की योजना बनाते तो शायद परिणाम और होते।

खानवा युद्ध का परिणाम –

खानवा युद्ध के परिणाम बड़े व्यापक और दूरगामी निकले। राणा सांगा की यह पराजय केवल राजस्थान के लिए ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारत के लिए घातक प्रभावित हुई। इस पराजय ने राजपूतों की एकता को ही समाप्त नहीं किया बल्कि उनकी शक्तिहीनता को भी प्रकट कर दिया।

जिसका लाभ अकबर ने उठाया और राजपूतों को अपने अधीन कर संपूर्ण भारत में मुगल साम्राज्य का प्रचार किया। इसी युद्ध का एक अप्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि औरंगजेब जैसे धर्मान्धी शासक ने भारतीय संस्कृति को व्यापक रूप से धराशाई किया।

डॉ एस आर शर्मा ने लिखा ''राजपूतों की सर्वोच्चता का भय सदैव के लिए समाप्त हो गया।''

इस युद्ध के बाद राजपूत में महाराणा प्रताप मालदेव और चंद्रसेन को छोड़कर अन्य शासको में वह आत्मविश्वास स्वाभिमान नजर नहीं आया जो पृथ्वीराज, चौहान, हमीर, कुंभा, राणा सांगा आदि पूर्ववर्ती शासको में था।

खानवा युद्ध से ही भारत में मुगलों की नींव मजबूत हुई थी जिससे मुगल साम्राज्य लगभग 200 वर्षों तक चलता रहा।

अब राजपूत शासक मुगलों की अधीनता में ही अपना भला मान बैठे जिसे उनकी शौर्यता, स्वाभिमान, वीरता, बलिदान आदि गुण कमजोर होते गए।

खानवा में राजपूतों की हार से राजस्थान की सदियों पुरानी स्वतंत्रता तथा उसकी प्राचीन हिंदू संस्कृति को सफलतापूर्वक रक्षा करने वाला कोई नहीं बचा।

घायल राणा सांगा को बसवा में होश आया तो वह इरिच के मैदान में बाबर का मुकाबला करने आ गया। सरदारों ने राणा सांगा को युद्ध न करने हेतु समझाया लेकिन वह नहीं माना। सरदारों ने महसूस किया कि अब एक और पराजय हुई तो मेवाड़ का सर्वनाश हो जाएगा अतः मेवाड़ को सर्वनाश से बचने के लिए उन्होंने सांगा को विष दे दिया।

निष्कर्ष –

राणा सांगा उत्तरी भारत के एक महान योद्धा थे जिन्होंने अपने देश की रक्षार्थ अपना एक हाथ, एक पाव तथा एक आंख को दी थी। अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता को बनाए रखने हेतु वह अंततः संघर्ष करता रहा। उसने अपनी दूरदर्शिता से राजपूताने के राजाओं में एकता बनाए रखी तथा विदेशी आक्रांताओं को भारत से बाहर निकलने का प्रयास किया। इतिहास में राणा सांगा का नाम अंतिम भारतीय हिंदू सम्राट के रूप में अमर है।

राणा सांगा का पूरा जीवन युद्ध में ही बीता जिससे उसे सांस्कृतिक उत्थान का समय नहीं मिला। महाराणा सांगा के ऊंचे लक्ष्यों की प्राप्ति में जनता ने उनका पूरा साथ दिया।

अनेक गुण होते हुए भी राणा सांगा उसे समय परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन नहीं कर पाया वह शत्रु के रण चातुर्य को नहीं अपना पाया। गुप्तचर व्यवस्था से शत्रु का सही आकलन नहीं कर पाया।

महाराणा सांगा ने मालवा गुजरात दिल्ली को हराने के बाद संपूर्ण भारत पर अधिकार कर एक हिंदू राष्ट्र के निर्माण में कूटनीति से काम नहीं किया वह केवल राजपूताना में अपने साम्राज्य विस्तार तक की सीमित रहा।

जिस प्रकार पानीपत के तीसरे युद्ध ने मराठा शक्ति को आघात लगाया था उसी भांति खानवा युद्ध ने राजपूतों की शक्ति को आघात पहुंचा इस युद्ध में भी राजपूत ने अपने सरदार सैनिक वृहद मात्रा में खोए।

खानवा युद्ध अस्त्र–शस्त्रों के हिसाब से बराबरी का युद्ध नहीं था एक तरफ बाबर के पास उसे समय की आधुनिक तकनीक थी तोपखाने बंदूके तुलुगमा पद्धति आदि और दूसरी तरफ राणा सांगा के पास तलवार तीर कमान हाथी थे। जो संख्या में दुगुने होने के बावजूद भी बाबर के सामने नहीं टिक पाए।

राणा सांगा यदि उसे आधुनिक तकनीक का अपनी सेना में प्रयोग करता तो शायद हिंदू साम्राज्य की स्थापना का कार्य असंभव नहीं होता।

13वीं सदी में मुस्लिम सत्ता की स्थापना के बाद मुस्लिम शासको ने हिंदुओं पर इतने अत्याचार किए। अलाउद्दीन खिलजी फिरोज तुगलक सिकंदर लोदी जैसे आक्रांताओं ने हिंदू प्रजा को अनेक कष्ट दिए तब निराशा जनता में राणा सांगा द्वारा दिल्ली गुजरात मालवा को हराकर शक्ति संपन्न होना एक नई ज्योति प्रज्वलित कर दी थी और हिंदू जनता प्रसन्नता का अनुभव करने लगी थी।

खानवा युद्ध से पहले तथा बयाना युद्ध के बाद बाबर के मन में भी राणा सांगा का खौफ चल रहा था उसे भी अपनी हार का संदेह हो गया था लेकिन अत्यंत संघर्षि जीवन जीते आया बाबर आर पार के युद्ध में शामिल होने के लिए तैयार हो गया था। क्योंकि उसके पास खोने के लिए ज्यादा कुछ नहीं था मगर पाने के लिए सोने की चिड़िया पूरा भारत देश था जिसका उपयोग उसकी कई पीढ़ियां 200 वर्षों तक करती रही।

संदर्भ सूची –

1. राजस्थान का इतिहास – गोपीनाथ शर्मा
2. वीर विनोद भाग 1 – कवि राजा श्यामल दास
3. उदयपुर राज्य का इतिहास भाग 1 – G. H. ओझा ।
4. राजस्थान का इतिहास संस्कृति परंपरा एवं विरासत – डॉ हुक्मीचंद जैन और डॉ नारायण लाल माली
5. राजस्थान का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास – डॉ कालूराम शर्मा डॉ प्रकाश व्यास

75972 49720

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 115-120
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ज्योतिषशास्त्र और राजस्थान लोक साहित्य का घनिष्ठ संबंध: एक अध्ययन

सिमरन कोठारी, शोधार्थी हिन्दी विभाग,
श्री वनराज आर्ट्स एंड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर
वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत

प्रस्तावना:

राजस्थान का लोक साहित्य विविधता और गहराई से भरपूर है। इस लोक साहित्य में ज्योतिषशास्त्र का प्रभाव गहराई तक समाहित है, क्योंकि ज्योतिष केवल एक विद्या ही नहीं, बल्कि जीवन जीने की एक पद्धति भी है, जो लोक परंपराओं, रीति-रिवाजों, और सामाजिक संरचनाओं में अपना स्थान बनाती है।

ज्योतिषशास्त्र की परिभाषा :

ज्योतिषशास्त्र भारत की प्राचीनतम विद्याओं में से एक है, जो ग्रह-नक्षत्रों के अध्ययन और उनके मानव जीवन पर प्रभाव का विवरण करता है। यह वेदों, पुराणों और शास्त्रों में विशेष रूप से उल्लेखित है। ज्योतिषशास्त्र (Astrology) भारतीय परंपरा में एक प्राचीन विज्ञान है, जो ग्रहों, नक्षत्रों और अन्य खगोलीय पिंडों की स्थिति और उनके मानव जीवन, प्रकृति, और घटनाओं पर प्रभाव का अध्ययन करता है। यह विद्या मानवीय जीवन के भूत, वर्तमान और भविष्य को समझने और उसका मार्गदर्शन करने का माध्यम है। ज्योतिषशास्त्र केवल भविष्यवाणी तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति में एक मार्गदर्शन प्रणाली के रूप में समाहित है।

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएँ:

1. **वराहमिहिर:**

"ज्योतिष वह विज्ञान है जो पृथ्वी और खगोल के बीच संबंध को समझकर भूत, वर्तमान और भविष्य की घटनाओं का अनुमान करता है।"

2. **पाराशर ऋषि:**

"ग्रह, नक्षत्र, सूर्य और चंद्रमा की स्थिति और गति के आधार पर मानव जीवन के शुभ और अशुभ प्रभावों का अध्ययन ही ज्योतिष है।"

3. आधुनिक परिभाषा:

ज्योतिष एक ऐसा अध्ययन है जो खगोलीय पिंडों (जैसे ग्रह, तारे, चंद्रमा) की स्थिति और गति के आधार पर उनके मानवीय जीवन और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करता है।

ज्योतिषशास्त्र के प्रमुख अंग है :-

- सिद्धांत ज्योतिष: खगोलीय गणनाओं का विज्ञान।
- होरा ज्योतिष: मानव जीवन पर ग्रहों का प्रभाव।
- संहिता ज्योतिष: प्राकृतिक घटनाओं और पर्यावरणीय प्रभावों का अध्ययन।

लोक साहित्य की परिभाषा :

लोक साहित्य (Folk Literature) उस मौखिक साहित्य को कहा जाता है जो किसी समाज या समुदाय की परंपराओं, भावनाओं, संस्कारों, विश्वासों और सांस्कृतिक धरोहर का जीवंत रूप है। यह साहित्य लोक भाषा में रचित होता है और पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से संप्रेषित होता है। लोक साहित्य समाज के मूल्यों, परंपराओं और आदर्शों को संरक्षित और प्रसारित करने का माध्यम है। राजस्थान का लोक साहित्य कविताओं, गीतों, गाथाओं, कहावतों और लोककथाओं का समृद्ध संग्रह है। यह साहित्य पीढ़ियों से मौखिक रूप में प्रचलित है और इसमें राजस्थान के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और ऐतिहासिक पक्षों का चित्रण मिलता है।

विद्वानों द्वारा लोक साहित्य की परिभाषा:

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी:

"लोक साहित्य वह है जो समाज की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है और जिसमें लोकजीवन की अनुभूतियाँ, आदर्श, और संस्कार प्रकट होते हैं।"

2. रामनरेश त्रिपाठी:

"लोक साहित्य वह मौखिक साहित्य है, जो जनता की सामूहिक अभिव्यक्ति है और जिसमें उनके सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक पहलुओं का समावेश होता है।"

3. डॉ. श्यामसुंदर दास:

"लोक साहित्य वह है जो लोक द्वारा रचा और लोक के लिए रचा गया हो तथा जिसमें लोकजीवन की समस्याएँ, आदर्श और संघर्ष झलकते हों।"

लोक साहित्य की विशेषताएँ:

- मौखिक परंपरा: यह लिखित न होकर मौखिक रूप से आगे बढ़ता है।
- सरलता और स्वाभाविकता: लोक साहित्य की भाषा सरल और स्वाभाविक होती है।
- सामूहिकता: यह किसी व्यक्ति विशेष का नहीं, बल्कि समाज का सामूहिक सृजन होता है।

- सांस्कृतिक दर्पण: यह समाज की सांस्कृतिक और सामाजिक धरोहर का प्रतिनिधित्व करता है।
- विविधता: इसमें लोककथाएँ, लोकगीत, कहावतें, गाथाएँ, नृत्य, और प्रथाएँ सम्मिलित होती हैं।

लोक साहित्य के उदाहरण:

- राजस्थान में: पाबूजी की फड़, ढोला-मारू की गाथा।
- लोकगीत: विवाह गीत, त्योहार गीत, श्रम गीत।
- लोक कथाएँ: पंचतंत्र, जातक कथाएँ।

ज्योतिषशास्त्र और राजस्थान लोक साहित्य का घनिष्ठ संबंध : एक अध्ययन

1. ज्योतिषशास्त्र का लोक साहित्य में स्थान :

I. त्योहार और उत्सव:

राजस्थान के विभिन्न त्योहारों और मेलों का समय निर्धारण ज्योतिषीय गणनाओं के आधार पर होता है। जैसे: गणगौर, तीज और करवा चौथ चंद्रमा की स्थिति पर आधारित होते हैं। गुर्जर गौतम जात्रा या पंचमी पर गोगाजी का पूजन जैसे आयोजन ज्योतिषीय महत्व के साथ जुड़े हैं।

II. लोककथाओं में ग्रह-नक्षत्रों का वर्णन :

राजस्थान की लोककथाओं में ज्योतिषीय प्रतीक अक्सर देखे जाते हैं। जैसे, ग्रहों और नक्षत्रों की कहानियों को प्रतीकात्मक रूप से मनुष्यों के जीवन और भाग्य से जोड़ा जाता है।

III. परंपरागत ज्ञान और भविष्यवाणी :

लोक साहित्य में विद्वानों द्वारा ग्रहण, वर्षा, सूखा, और अन्य प्राकृतिक घटनाओं की भविष्यवाणी की जाती है। यह परंपरा गाँवों में प्रचलित है, जहां ज्योतिषी अपने ज्ञान के आधार पर निर्णय लेते हैं।

2. राजस्थान के लोक गीत और ज्योतिषशास्त्र :

राजस्थान के भजन, माँड, और वाचिक परंपरा के गीतों में ज्योतिष के प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है। उदाहरण: लोकगीतों में चंद्रमा और सूर्य का महत्व। विवाह के मंगलगीतों में शुभ मुहूर्त और ग्रहों की स्थिति का उल्लेख।

3. समाज में ज्योतिष का प्रभाव :

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह, गृह प्रवेश, खेती और व्यापार जैसे कार्य ज्योतिषीय विधियों के अनुसार किए जाते हैं।

4. संस्कृति का संरक्षण और आधुनिक संदर्भ :

आज के समय में राजस्थान लोक साहित्य में ज्योतिष का महत्व कम नहीं हुआ है। यह एक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में संरक्षित है और आधुनिक समाज में भी प्रासंगिक बना हुआ है|

5. राजस्थान के लोक विश्वास और ज्योतिष :

राजस्थान के लोक साहित्य में यह विश्वास दृढ़ता से समाहित है कि ग्रह-नक्षत्र मनुष्य के जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित करते हैं। इसके प्रमाण हैं:

i. **नवग्रहों की पूजा:** गांवों में मंदिरों और धार्मिक स्थलों पर नवग्रहों की पूजा का प्रचलन।

ii. **राहु-केतु की लोककथाएँ:** ग्रहण के समय राहु-केतु से जुड़े पौराणिक संदर्भ लोक गीतों और कथाओं में सुनाए जाते हैं।

iii. **शुभ और अशुभ घड़ियाँ:** "राहुकाल" और "गुलिक काल" जैसे समय का उल्लेख राजस्थान के दैनिक जीवन के निर्णयों में देखा जाता है।

6. कृषि और ज्योतिष :

राजस्थान जैसे कृषि प्रधान राज्य में खेती और ज्योतिष का अभिन्न संबंध है।

i. **फसलों की बुवाई और कटाई:** चंद्रमा की कलाओं के अनुसार समय निर्धारित किया जाता है।

ii. **वर्षा के पूर्वानुमान**: ज्योतिष और लोक मान्यताओं के माध्यम से वर्षा का पूर्वानुमान लगाया जाता है। "गंगा दशहरा" पर पानी की मात्रा देखकर आने वाले वर्ष का जलवायु पूर्वानुमान।

7. विवाह और सामाजिक आयोजन :

i. **शुभ मुहूर्त:** विवाह और अन्य सामाजिक आयोजनों में शुभ मुहूर्त का निर्धारण ज्योतिषियों के द्वारा किया जाता है।

ii. **मांगलिक गीत:** शादी में गाए जाने वाले गीतों में ज्योतिषीय प्रतीकों, जैसे चंद्रमा, सूर्य, और नक्षत्रों का उल्लेख किया जाता है।

iii. **विवाह संस्कार:** राजस्थान के विवाह संस्कारों में कुंडली मिलान, ग्रह दोष निवारण, और शुभ योग का महत्व है।

8. लोक साहित्य में ज्योतिषीय कथाएँ :

i. **पौराणिक संदर्भ :**_राजस्थान की गाथाओं और कहानियों में ज्योतिष के पौराणिक संदर्भ मिलते हैं। पन्नाधाय की गाथा में ग्रहों और नक्षत्रों का प्रभाव। वीर तेजाजी की कथाओं में ज्योतिषीय विचारधारा और ग्रहों के प्रकोप से बचने के उपाय।

ii. **प्राकृतिक घटनाओं का प्रतीकात्मक वर्णन :**

- **सूर्य और चंद्रमा की कहानियाँ**: इन्हें जीवन के संघर्ष और विजय के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।
- **सप्त ऋषियों की कथा:** आकाशगंगा और तारामंडल से जुड़ी मान्यताओं को लोक साहित्य में समाहित किया गया है।

9. राजस्थानी ज्योतिषीय कहावतें और मुहावरे

लोक साहित्य में कहावतें और मुहावरे ज्योतिष के प्रभाव को स्पष्ट करते हैं। जैसे:"चंद्र के बिना अमावस नहीं, और नक्षत्र बिना दिशा नहीं।" "सूरज का तेज कम हो तो जीवन में अंधकार बढ़ता है।"

10. ज्योतिषीय प्रतीकों का धार्मिक महत्व :

राजस्थान में धार्मिक स्थलों और अनुष्ठानों में ज्योतिषीय गणनाओं का महत्व देखा जाता है।

i. **पुष्कर का मेला:** यह कार्तिक पूर्णिमा पर आयोजित होता है, जो चंद्रमा की स्थिति से जुड़ा है।

ii. **कुंभ और सिंहस्थ मेले:** नक्षत्रों की विशेष स्थिति पर आयोजित होते हैं।

11. राजस्थानी साहित्य और लोक नृत्य में ज्योतिष :

i. **लोक नृत्य:** राजस्थान के लोक नृत्यों, जैसे कालबेलिया और गेर में भी ग्रहों और नक्षत्रों का प्रभाव दिखता है।

ii. **माँड गायकी:** माँड गायकी में समय, ग्रहों और उनकी चाल को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है।

आधुनिक युग में ज्योतिष और लोक साहित्य का महत्व :

आधुनिक युग में भी राजस्थान में ज्योतिष और लोक साहित्य का महत्व कम नहीं हुआ है।

- **शोध और अध्ययन:** राजस्थान विश्वविद्यालय और अन्य संस्थानों में इस विषय पर शोध किए जा रहे हैं।
- **पर्यटन और सांस्कृतिक संरक्षण:** लोक साहित्य और ज्योतिष की प्राचीन परंपराएँ पर्यटन को बढ़ावा देती हैं।

निष्कर्ष :

ज्योतिषशास्त्र और राजस्थान लोक साहित्य का संबंध न केवल सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समाज की सामूहिक चेतना और परंपराओं का भी प्रतिबिंब है। यह अध्ययन हमें प्राचीन ज्ञान और आधुनिक समाज के बीच संतुलन बनाने की प्रेरणा देता है। राजस्थान की समृद्ध लोक परंपराएँ और ज्योतिषशास्त्र आपस में इतनी गहराई से जुड़े हुए हैं कि यह एक-दूसरे को परस्पर प्रभावित और पोषित करते हैं। लोक साहित्य में न केवल ज्योतिष के तत्व प्रचुर मात्रा में मिलते हैं, बल्कि यह मानवीय जीवन के हर पहलू में ज्योतिष की उपयोगिता को भी दर्शाता है। राजस्थान का लोक साहित्य और ज्योतिषशास्त्र केवल सांस्कृतिक या धार्मिक महत्व तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज के दैनिक जीवन का हिस्सा है। दोनों का संबंध गहरा और परस्पर पूरक है। इन परंपराओं का अध्ययन न केवल हमारी सांस्कृतिक धरोहर को सहेजता है, बल्कि जीवन के गूढ़ पहलुओं को समझने का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

संदर्भ :

लोक साहित्य और ज्योतिषशास्त्र पर आधारित परिभाषाओं और विवरणों के लिए निम्नलिखित संदर्भों का उपयोग किया जा सकता है:

लोक साहित्य के संदर्भ

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी - *हिन्दी साहित्य का आदिकाल*
2. रामनरेश त्रिपाठी - *काव्य-ज्ञान*
3. डॉ. श्यामसुंदर दास - *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
4. डॉ. भगवतशरण उपाध्याय - *भारतीय लोक साहित्य*
5. डॉ. कृष्णलाल मिश्र - *लोक साहित्य का वैशिष्ट्य*

ज्योतिषशास्त्र के संदर्भ

1. वराहमिहिर - *बृहत्संहिता*
2. पराशर ऋषि - *पराशर होरा शास्त्र*
3. भट्टोत्पल - *खगोल शास्त्र*
4. डॉ. सुरेश चंद्र मिश्र - *भारतीय ज्योतिष का इतिहास*
5. डॉ. रमाकांत शुक्ल - *ज्योतिष विज्ञान: एक अध्ययन*

अन्य महत्वपूर्ण संदर्भ

1. एनसीईआरटी (NCERT) - *हिन्दी साहित्य एवं संस्कृति*
2. राजस्थान विश्वविद्यालय के शोध पत्र - *राजस्थान का लोक साहित्य और संस्कृति*
3. भारतीय लोककला और संस्कृति परिषद् - *लोक साहित्य और परंपराएँ*

इन पुस्तकों और स्रोतों से लोक साहित्य और ज्योतिषशास्त्र पर गहराई से अध्ययन और शोध किया जा सकता है।

Email Id: simrankothari29@gmail.com Mobile No.8306858684

www.bohalshodhmanjusha.com **Bohal Shodh Manjusha** **ISSN: 2395-7115**
Impact Factor: 8.642 **February 2025** **Page No. : 121-124**
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नीलोत्पल मृणाल के उपन्यास डार्क हॉर्स के विभिन्न पात्रों का संवाद

प्रो. ब्रजलता शर्मा, शोध निर्देशिका हिन्दी विभाग,
प्रियंका यादव, शोध छात्रा हिन्दी,
पी.के. विश्वविद्यालय करैरा जिला – शिवपुरी (म.प्र.)

शोध सार

संवाद एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा विभिन्न पात्र अपनी संवेदना एवं भाव को प्रकट करते है। संवाद के द्वारा पात्रों के व्यवहारिक जीवन का मूल्यांकन किया जाता है कि पात्र किस प्रकार की भाषा का प्रयोग कर रहा है। पात्र हमेशा शिक्षित एवं अशिक्षित श्रेणी में आते है। शिक्षित पात्रों का संवाद करने का तरीका अशिक्षित पात्रों से अलग होता है। सिविल की तैयारी करने वाले लड़के को जब भी कोई पिता स्टेशन छोड़ने जाता तो मानिए वह पीएसएलवी छोड़ने गया हो खुट्टी, उत्साह, डर, संदेह, संभावना सब तरह के भाव चेहरे पर एक साथ दिखते हैं। विनायक जी तुरंत हरकत में आ गए थे। झटपट झटपट चलते हुए एस–3 तक पहुँच गए, बोगी में चढ़े और तेरह नं. सीट के नीचे जाकर झोला सरका दिया। तब तक पीछे–पीछे संतोष भी बैग लटकाए आ गया। विनायक बाबू ने लंबी साँस छोड़ते हुए कहा, "चलो सामान एडजस्ट हो गया। आराम से जाना बिना किसी लाग–लपेट में पड़े एकदम लक्ष्य बनाके पढ़ो कामभर जितना खर्चा हो, निकाल लेना। एटीएम तुमको दे ही दिए हैं। पूरा समाज का नजर है सबको दिखाना है कुछ करके हम पैसा देने में कमी नहीं करेंगे, तुम्हारा काम मेहनत है, इसमें कभी नहीं करना।" असल में एक सिविल अभ्यर्थी बेटे और बाप के बीच रिश्ते का आधार इन्हीं दो परम सत्य के आस–पास मँडराता है। पिता पैसे को लेकर निश्चित करता है और बेटा परिणाम को लेकर बेटे को खर्च चाहिए और पिता को परिणाम।

ट्रेन खुलने का समय हो गया। संतोष ने पिता के पाँव छुए, पीठ पर एक जोरदार धौल वाला आशीर्वाद देते विनायक हुए बाबू योगी से बाहर की ओर निकलते हुए बोले, "चलो, जय गणेश! पहुँच के फोन कर देना।"

मुख्य बिन्दु : खुशी, उत्साह, डर, संदेह, संभावना, आशीर्वाद

संवाद हमेशा व्यक्ति के ज्ञान, विवेक, व्यवहारिकता, प्रियभाषिता, आर्कषण, शब्दों का सही चयन एवं संवाद करने के सरोकार इन सभी का विशेष ख्याल रखना चाहिए हिंदी पट्टी के क्षेत्र में कोई पिता तब तक बेटे को गले नहीं लगाता जब तक कि वह खुद से कमाने–खाने न लगे। ट्रेन की सीटी बजी। रेलगाड़ी धीरे–धीरे प्लेटफॉर्म से सरकने लगी। विनायक बाबू बाहर आ गए बाइक स्टार्ट कर निकल गए। "दिल्ली घुस गया। स्टेशन पर लग रहा है तेरह नं. पर लग रहा है।" अचानक पैसेंजर की हलचल और बातों से संतोष की आँख खुली। साथ के पैसेंजर सीट के नीचे से अपने–अपने सामान खींच रहे थे। संतोष ने आँख मलते हुए पूछा, "दिल्ली आ गया क्या ?" "हाँ, उतरिए आ गया महराज।" एक पैसेंजर ने चलते–चलते कहा।

रात भर मोबाइल पर गाना सुनते–सुनते कब नींद आई और कब दिल्ली, संतोष को पता ही नहीं चला। संतोष तुरंत मिडिल बर्थ से नीचे कूदा, अपने जूते खोजने लगा। संतोष का तो एकदम दिल धक कर गया। "ये क्या! दिल्ली पहुँचते ही झटका। नया पच्चीस सौ का वुडलैंड गायब!" फिर उसने गर्दन नीचे कर सीट के कोने में देखा तो पाया कि उसके दोनों जूते वही दुबके पड़े थे। उसने हाथ से खीचकर जूते निकाले एक मोजा गीला था शायद रात को किसी ने खाते वक्त पानी गिरा दिया था। संतोष ने दिना सोचे बैग की जिप

खोल मोजे उसमें डाल दिए और केवल जूते पहन जल्दी–जल्दी योगी से बाहर निकला।' अपने पैंट की पिछली जेब से कागज का एक टुकड़ा निकाला और उसमें लिखवाए गए निर्देश को पढ़कर एक नजर अपने दाएँ–बाएँ डाली बाई ओर उसे अजमेरी गेट की तरफ जाने के लिए तीर का निशान दिखा संतोष उसी दिशा में चलते हुए स्टेशन से बाहर आ गया।" "मेट्रो स्टेशन किपर पड़ेगा ?" संतोष ने एक सज्जन से पूछा।

"वो सामने ही तो है, लेफ्ट में भई।" सज्जन ने चलते–चलते बताया। संतोष ने धीरे से बैंक्स कहा, हालाँकि इतनी मिमियाई आवाज वाली वैंक्स उस सज्जन तक पहुँचने से पहले वह जा चुका था। मेट्रो की सीढ़ियों से नीचे उतरते ही उसने सबसे पहले टिकट काउंटर की तरफ नजर दौड़ाई। सारे काउंटर पर मधुमक्खी के छत्ते जैसी भीड़ थी। बीच में लाइन तोड़कर पुसने का मतलब या कोई भी भनभना के काट सकता था। तभी उसकी नजर लाइन में काउंटर से पाँचवें नंबर पर खड़े हाथ में एक भारी–सा झोला लिए लगभग साठ–पैंसठ बरस के बुजुर्ग पर पड़ी। उसने इधर–उधर देखा और तुरंत उस बुजुर्ग के करीब जाकर बोला, "चाचा, ये विश्वविद्यालय का टिकट यहीं मिलेगा ?"

"सारी दिल्ली का यही मिलेगा बेटे, तुझे जाना कहाँ है?" बुजुर्ग ने उसकी आधी बात सुने बिना पूछ "जी, हमको विश्वविद्यालय जाना था।" संतोष ने थोड़ा स्पष्ट स्वर में कहा "टोकन मिलता है, टोकन बोलियो टिकट नहीं।" बुजुर्ग ने लगभग नसीहत के अंदाज में कहा चाचा, लाइए मैं आपका झोला पकड़ लूं बहुत भारी होगा।" संतोष ने एकदम होशियारी भरी विनम्रता से कहा।"

"बेटे, झोला छेड़ पीछे जा के लाइन पकड़ ले लाइन लंबी होती जाएगी। तेरे को झोला बोला पकड़ने की जरूरत नहीं चांदनी चौक जा रहा हूँ। कठिन है इसमें। कोई भारी–सारी नहीं है। चालीस साल से यही पकड़े चल रहा हूँ। ओए आगे बढ़ो भई।" बुक ने संतोष को कहते हुए आगे वाले को खोचा।

"अरे कपार पर चढ़ क्या येऊन दे नही रहा है। आगे वाला बढ़ेगा तब न बढ़ेंगे कोच रहे हैं पीछे से एकदम।" बूढ़े के आगे वाले व्यक्ति ने खीज से कहा बूझ समझ गया आगे वाला आदमी चालीस बरस का होकर भी मिजाज में उसका बाप है। सो उसने चुप रहना ठीक समझा तब–तक चूड़े के ठीक पीछे वाले व्यक्ति ने बूढ़े के कंधे पर कान ले जाकर पूछा, "क्या हुआ अंकल ?"

"कुछ नहीं जी, टोकन नू पुस रहा वा लौडा अजी हम लाइन में खड़े हैं इसी देर से बेवकूफ हैं क्या कह रहा था, लाइए आपकी पकड़ दूँ। अवे मेरी क्या पकड़ेगा, अपनी पकड़ है।" बुड़े ने बिना पीछे मुड़े कहा इतना सब सुन संतोष मन–ही–मन बुझऊ को गरियाता हुआ पीछे लाइन में जाकर खड़ा हो गया। अब तक लाइन और लंबी हो गई थी। अभी–अभी गाँव से निरीह बुझा देख आए संतोष को दिल्ली का सवाना बुझपा एकदम अमरीश पुरी टाइप लगा। सोचने लगा, 'साला, याचा शब्द भी फेल हो गया हम सबके तरफ तो चाचा कहने की गर्माहट से चोर–डकैत, पुलिस–दरोगा जैसा मोटा चदरा भी पिघल जाता है। यहाँ साला छेद तक नहीं हुआ। उसकी अपनी भावना में समझा जाए तो मूड अंदुआ गया था उसका अंदुआना' आदमी के खिन्न होने की चरम अवस्था को कहते है। लगभग बीस मिनट तक खड़े लाइन में चलने के बाद उसका नंबर आया।'

"भईया एक विश्वविद्यालय स्टेशन का चेकन दे दीजिए।" संतोष ने पाँच सौ का नोट देते हुए कहा "चेंज दे दो भई।" काउंटर वाले ने कहा "चेंज नही है सर।" संतोष ने स्वर नीचे करके कहा "चलो देख लो भई, हटो साइड आ जाओ पीछे वाले को आने दो।" काउंटर वाले ने अपना हाथ उचकाते हुए कहा संतोष एकदम खिन्न मन से साइड हो गया।

"साला, सर शब्द भी फेल।" यही सोचा उसके बज में उसके सारे शब्द चुबे जा रहे वे यहाँ यह धीरे–धीरे समझ रहा था कि यह शहर शब्दों से परे है, भावनाओं से परे है। संतोष साइड में खड़ा लोगों द्वारा दिए जा रहे हर नोट को बड़ी उम्मीद से देख रहा था कि जल्द पाँच सौ का खुदरा पूरा हो जाए। "लाओ जल्दी से पैसे, कहाँ का हूँ?" अचानक अपने पैसे वाले दराज को देखते हुए काउंटर वाले ने संतोष से कहा। संतोष ने साइड से ही खड़े–खड़े झट से अपना हाथ काउंटर के शीशे के गोल छेद में घुसा दिया और बोला, "हाँ, विश्वविद्यालय का चाहिए सर" टोकन लेकर संतोष अंदर प्लेटफॉर्म पर जाने की लाइन में खड़ा हो गया।

लाइन में आगे सरकते हुए जैसे ही उसने अपने दोनों बैग और झोला स्कैनर मशीन में डाले एक क्षण में ही यह विचार उसके मन में काँध गया कि स्केलिंग में सत्तू, ठेकुवा, निमकी और लिट्टी का फोटो देख पता नहीं क्या छवि बन जाएगी इन जाँच करने वाले सिपाहियों के मन में एकदम देहाती समझने का बैग के मशीन

से बाहर निकलते ही यह डर भी मन से निकल गया। बैग उठाकर संतोष ने एंट्री गेट पर टोकन टच कराया और गेट जैसे के खुलते ही बिजली की फुर्ती से इस तरह उस पार हुआ नाथुला हो, जो बस एक पल के लिए खुला है और फिर तुरंत बंद हो गया तो पता नहीं कब तक इसी पार चीन में रहना होगा। हड़बड़ाहट में अपना बैग उसने इसी पार छोड़ दिया। संतोष गेट के उस पार से अपने बैग को ऐसे देखने लगा जैसे गदर फिल्म में सन्नी देओल ने सीमा पार अमीषा पटेल को देखा था। उसे लगा मेरा बैग अब उसी पार रह जाएगा। तब तक एक व्यक्ति ने उसका बैग उसे पकड़ाया। उसे अब जाकर चैन मिला। विश्वविद्यालय जाने वाली मेट्रो आ गई. दरवाजा खुलते ही कोई तीन–चार व्यक्ति नीचे उतरे और लगभग दो–ढाई सौ लोग उसपर सवार हो गए।

संतोष भी लटक–झटककर चढ़ गया सोच रहा था कि जब से ट्रेन से उतरा हूँ साला एक मिनट का चैन नहीं है। हर जगह समस्या है। कही शांति नाम का चीज नहीं है। कहाँ मराने आ गए। सब कहे थे मेट्रो में आराम है। झाँट आराम है इसमें, कटहल के जैसा आदमी लोड है! सोचते–सोचते वह अब विश्वविद्यालय स्टेशन पहुँच चुका था। मेट्रो से बाहर आ उसने एक आदमी से पूछा, "हैलो, ये मुखर्जी नगर बत्रा चौक के लिए कहाँ से ऑटो मिलेगा ?" "वो सामने से मिल रहा है, पकड़ लो।" उस आदमी ने कहा। ऑटो पर बैठते ही संतोष ने ऑटो वाले से कहा, "भइया मुखर्जी नगर, बत्रा चौक पर रोक दीजिएगा।"

"टेंशन मत लो भई वहीं तक जाएगी।" ऑधे वाले ने बेफिक्र अंदाज में कहा और फुल वॉल्यूम में पंजाबी गाना बजाने लगा। अगले दस मिनट बाद संतोष मुखर्जी नगर के बत्रा सिनेमा के सामने खड़ा था। चंद्रयान चाँद पर पहुँच चुका था। अब संतोष अपने सपनों के नगर 'मुखर्जी नगर' में खड़ा था। चारों तरफ सफल अभ्यर्थियों के पोस्टर–ही–पोस्टर इनकी सफलता का शिल्प रखने वाले महान कारीगरों के नामचीन कोचिंग के होर्डिंग्स। भिन्न–भिन्न मुद्राओं में बातचीत और चिंतन कर आ–जा रहे भविष्य के सिविल सेवक जूस की दुकान पर सूखे और बाढ़ की चर्चा। चाय की दुकान पर जीडीपी पर बहस कोचिंग से छूटे किताब से भरे रंग वाले छात्र का तुरंत किताबों की दुकान पर ये दिल मांगे मोर वइप से किताब ढूंढना। ठीक वैसी नजर से जैसे बगुला सागर में मोती ढूँढ रहा हो पराठे की दुकान पर आतंकवाद से निपटने की चर्चा।

ऐसा अदभुत नगर या मुखर्जी नगर। अभी–अभी मुखर्जी नगर उत्तरा संतोष जो अपने दिल में तैयारी का एक दीया लिए उतरा वा ऐसे दृश्यों को देखकर अब वो कुछ ही पल में मशाल बन चुका था। बिजली के खंभों और पेशाबघरों में लगे एक से नौ सौ रैंक तक के सभी सफल छात्रों के पोस्टर में संतोष खुद को महसूस कर रहा था। वह इस नयी दुनिया का हिस्सा बनकर गौरवान्वित था। दस से पंद्रह मिनट तक इस एहसास को पी लेने के बाद उसने अपने फोन में एक नंबर डायल किया।

"हैलो, हाँ रायसाहब नमस्कार! हम संतोष बोटा रहे है। यहाँ मुखर्जी नगर पहुँच गए हैं।" संतोष ने कहा उपर से रायसाहब की आवाज आई, "स्वागत है। स्वागत है भाई। कहाँ पर है अभी आप? "जी, ये बत्रा सिनेमा के ठीक सामने खड़े हैं। एक वे जूस का दुकान है उसी के पास है।" संतोष ने इधर–उधर नजर टटोलते हुए कहा "बस दस मिनट रुकिए वहीं, हम आते हैं।" कहकर रायसाहब ने फोन काटा संतोष की रायसाहब से मुलाकात बोकारो में एक शादी के दौरान हुई थी।[6]

रायसाहब ने तभी संतोष को अपना पता–ठिकाना और नंबर देते हुए कहा था, "अगर दिल्ली में मन हो तैयारी करने का तो जरूर बताइएगा।" रायसाहब का पूरा नाम कृपाशंकर राय था। वे मूलतः यूपी के गाजीपुर से थे। रायसाहब पिछले पाँच साल से मुखर्जी नगर में तैयारी के लिए रह रहे थे। पिछले साल ही उन्होंने अपने तीसरे प्रयास में आईएएस की मुख्य परीक्षा दी थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से इतिहास में एम ए. करने के बाद उन्होंने बी एड भी कर रखा था। किसान परिवार से थे पर किसानी ठीक–ठाक थी, पिता खेती–बाड़ी से मजबूत थे। कृपाशंकर के झड़ते जल और तेजी से लटकती झुर्रियों के अदब में साथी उन्हें 'रायसाहब' कहते थे। "अरे लीजिए आ ही गए आप भी आईएएस बनने!" सामने से आते ही संतोष को गले लगाते हुए रायसाहब ने कहा।

"देखिए। अब आपकी शरण में हैं, जो बना दीजिए। आईएएस या आईपीएस।" संतोष ने अपनी चॉइस बताते हुए कहा। बातों से स्पष्ट था वह राजस्व सेवा में नहीं जाना चाहता था। प्रकृति ने दो प्रकार के पात्र बनाये है। पुरुष एवं नारी दोनो भाषाशैली अलग–अलग होती है, जिसके आधार पर सामाजिक मूल्यांकन कर लिया जाता है।

संदर्भ सूची

1.नीलोत्पल मृणाल डार्क हॉर्स पेंगुइन प्रकाशन संस्करण 2024 पृ. 5
2.वही पृ. 7
3.वही पृ. 8
4.वही पृ. 8
5.वही पृ. 9
6.दही पृ. 12

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 125-132
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

शोध/अनुसंधान क्या है ? गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान
What is Research? Qualitative & Quantitative Research

Dr. Rashmi, HOD, History Department,
Hindu Kanya Mahavidyalaya Jind

प्रस्तावना (Introduction) :-

वर्तमान समय में ज्ञान तथा प्रगति के क्षेत्र में शोध वह शक्ति है जो समय समय पर समाज के विकास व वृद्धि को गति प्रदान करती है। साथ ही यह विभिन्न जरूरतों, मांगों और चुनौतियों के साथ दुनिया को समझने व निर्णय लेने में भी मुख्य भूमिका निभाती है। शोध के अंतर्गत मुख्य रूप से दो विधियो का प्रयोग किया जाता है मात्रात्मक और गुणात्मक। शोध में डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए उपयोग की जाने वाली ये दो अलग-अलग पद्धतियां हैं। मात्रात्मक शोध विधियों में संख्यात्मक डेटा का संग्रह करने के लिए सांख्यिकीय विश्लेषण का उपयोग शामिल है। इस प्रकार के शोध का उपयोग अक्सर परिकल्पनाओं का परीक्षण, कारण और प्रभाव- संबंधों की पहचान करने के लिए किया जाता है। प्रयोग, सर्वेक्षण और अवलोकन संबंधी अध्ययन मात्रात्मक शोध विधियों के उदाहरण हैं। गुणात्मक शोध विधियों में गैर-संख्यात्मक डेटा का संग्रह शामिल होता है। डेटा का विश्लेषण आमतौर पर सामग्री विश्लेषण, विषयगत विश्लेषण जैसी तकनीकों के द्वारा किया जाता है। अक्सर इस प्रकार के शोध का उपयोग किसी विषय की गहरी समझ हासिल करने और जटिल घटनाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है। कुल मिलाकर, दोनों विधियों की अपनी महत्ता और सीमाएँ हैं। शोधकर्ता अक्सर किसी विषय की अधिक व्यापक समझ हासिल करने के लिए दोनों विधियों के संयोजन का उपयोग करते हैं।

(A). शोध/अनुसंधान क्या है (What is Research) :-

शोध अंग्रेजी भाषा के शब्द **Research** का पर्यायवाची हैं जिसका अर्थ खोज करना या फिर से गहन जांच करना है। शोध नए ज्ञान का निर्माण करने तथा पुराने ज्ञान को नए तरीके से उपयोग करने के लिए किया जाता है। शोध के अंतर्गत मुख्य रूप से दो प्रकार की शोध पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है - गुणात्मक शोध और मात्रात्मक शोध।

शोध/अनुसंधान के उद्देश्य (Research of objectives):

1. मौजूदा स्थिति या समस्या की जाँच करना ।
2. कोई अन्य विधि (method) या ढांचा बनाना।
3. नया ज्ञान उत्पन्न करना।
4. सामान्य मुद्दो का अन्वेषण और विश्लेषण करना।
5. समस्या का समाधान प्रस्तुत करना
6. मौजूदा जान की समीक्षा और संश्लेषण करना

(B). गुणात्मक शोध (Qualitative Research) :-

गुणात्मक अनुसंधान, अनुसंधान की वह पद्धति है जिसका उपयोग अवधारणाओं, विचारों या अनुभवों को समझने के लिए, गैर-संख्यात्मक डेटा (जैसे, पाठ, वीडियो या ऑडियो) एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग किसी समस्या के बारे में गहन जानकारी प्राप्त करने या शोध के लिए नए विचार उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है।

गुणात्मक अनुसंधान की विधियां (Qualitative research methods):-

- साक्षात्कार (Interview)
- केन्द्रित समूह (Focus Group)
- सामग्री विश्लेषण (Content Analysis)
- अवलोकन (Observation)
- नृवंशविज्ञान (Ethnography)
- खुले प्रश्नों, सर्वेक्षण और प्रश्नावली (Open Ended questions, Surveys and Questionnaires)
- केस स्टडी (Case Study)

a) **साक्षात्कार (Interview) :-** गुणात्मक शोध में सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली विधियों में से एक साक्षात्कार है क्योंकि वे शोधकर्ता को स्रोत से सीधे अत्यधिक जानकारी एकत्र करने की अनुमति देते हैं। साक्षात्कार प्रतिभागियों की राय, विश्वास, प्रेरणा तथा अनुभवों का पता लगाते हैं। संवेदनशील विषयों पर डेटा एकत्र करने में साक्षात्कार विधि विशेष रूप से फायदेमंद होती हैं। साक्षात्कार ऑनलाइन वीडियो कॉल के ज़रिए या व्यक्तिगत रूप से आयोजित किए जा सकते हैं। गुणात्मक शोध में अध्ययन की प्रकृति के आधार पर साक्षात्कार, संरचित, अर्ध-संरचित या असंरचित हो सकते हैं।

b) **केन्द्रित समूह (Focus Group) :-** गुणात्मक शोध में दूसरी महत्वपूर्ण विधि केंद्रित समूह चर्चा है। केंद्रित समूह चर्चा के साथ, शोधकर्ताओं को पता चलता है कि प्रतिभागियों का एक विशेष समूह विषय को कैसे समझता है। इसमें शोधकर्ता किसी विषय पर लोगों के अनुभवों और विचारो को जानने के लिए एक समूह के साथ बातचीत करता है। इस

विधि में आयु, योग्यता, वित्तीय पृष्ठभूमि, सामाजिक उपस्थिति और जनसांख्यिकी जैसे अन्य मापदंडों पर भी विचार किया जाता है। अक्सर केंद्रित समूह चर्चा के माध्यम से एकत्र किया गया गुणात्मक डेटा अधिक विस्तृत वर्णनात्मक और अत्यधिक वर्णनात्मक होता है।

c) **सामग्री विश्लेषण (Content Analysis) :-** गुणात्मक शोध में सामग्री का अच्छे से व सही रूप में विश्लेषण करने के लिए यह सर्वोत्तम विधि है। इसके अंतर्गत थीम, पैटर्न और अर्थों को स्पष्ट करने के लिए पाठ दस्तावेज़ों, ऑडियो और वीडियो फ़ाइलों या दृश्य सामग्री का व्यवस्थित रूप से विश्लेषण किया जाता हैं।

d) **अवलोकन (Observation) :-** गुणात्मक शोध की विधियो में सबसे उपयुक्त विधि अवलोकन है। अवलोकन विधि किसी घटना के बारे में अधिक जानने का एक तरीका है। अवलोकन की प्रकृति को या तो पूर्ण पर्यवेक्षक या भागीदार के रूप में पर्यवेक्षक या पूर्ण भागीदार के रूप में प्राप्त किया जा सकता है। यह परिकल्पना के निर्माण के लिए एक महत्वपूर्ण आधार है।

e) **नृवंशविज्ञान (Ethnography) :-** यह भी एक गुणात्मक अनुसंधान विधि है जिसका प्रयोग अक्सर सामाजिक विज्ञान में विशेष तौर से मानवशास्त्र और समाजशास्त्र में किया जाता है। इसके अंतर्गत अक्सर मानव, समाज तथा संस्कृतियों से संबंधित अनुभवजन्य आँकड़े जुटाने का कार्य किया जाता है। इस विधि को स्टडी ऑफ कल्चर भी कहा जाता है।

f) **खुले प्रश्नों, सर्वेक्षण और प्रश्नावली (Open Ended questions, Surveys and Questionnaires) :-** गुणात्मक शोध की विशिष्ठ विधियों में खुले प्रश्नों, सर्वेक्षण और प्रश्नावली विधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि इनके माध्यम से प्रतिभागियों से ज्यादा से जादा जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ओपन-एंडेड, सर्वेक्षण और प्रश्नावली विधि में संगठनों को व्यक्तिगत रूप से मिले बिना उत्तरदाताओं से विचार और राय एकत्र करने की अनुमति देते हैं। प्रश्नावली को इलेक्ट्रॉनिक रूप से भेजा जा सकता है और उन्हें सबसे अधिक लागत प्रभावी, गुणात्मक डेटा संग्रह उपकरणों में से एक माना जाता है। ओपन-एंडेड प्रश्न प्रतिभागियों को लंबे और गहन उत्तर देने की अनुमति देते हैं जिससे आप बड़ी मात्रा में डेटा निकाल सकते हैं।

g) **केस स्टडी (Case Study) :-** केस स्टडी एक गुणात्मक शोध पद्धति है जिसमें किसी विशिष्ट विषय या मुद्दे की गहरी समझ हासिल करने के लिए विस्तृत जांच की जाती है । केस स्टडी का इस्तेमाल कई विषयों में किया जाता है, खासकर सामाजिक विज्ञान मे। इसमें शोधकर्ता एक विशिष्ट संदर्भ में जटिल घटनाओं को समझने के लिए एक एकल इकाई या कुछ इकाइयों (व्यक्तियों या संगठनों) का विस्तार से अध्ययन करता है उदाहरण के तौर पर पुलिस केस।

(C). मात्रात्मक अनुसंधान (Quantitative research):-

मात्रात्मक अनुसंधान, अनुसंधान की वह पद्धति है जिसका उपयोग संख्यात्मक और सांख्यिकीय साक्ष्य के आधार पर लोगों के दृष्टिकोण और व्यवहार के बारे में सिद्धांतों का परीक्षण करने के लिए किया जाता हैं। प्रासंगिक स्थितियों में उपयोगकर्ताओं के बारे में परोक्ष रूप से मापने योग्य, पूर्वाग्रह मुक्त, डेटा प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता बड़ी संख्या में उपयोगकर्ताओं (जैसे, सर्वेक्षणों के माध्यम से) का नमूना लेते हैं।

मात्रात्मक अनुसंधान की विधियां (Quantitative research methods) :-

*बंद-प्रश्न, सर्वेक्षण और प्रश्नोत्तरी (Close-Ended questions, Surveys and Questionnaires)

*प्रयोगात्मक (Experimental)

*वर्णात्मक (Descriptive)

*सहस्बन्धात्मक (Correlation)

*संरचित साक्षात्कार (Structured Interview)

a) **बंद-प्रश्न, सर्वेक्षण और प्रश्नोत्तरी (Close-Ended questions, Surveys and Questionnaires) :-** मात्रात्मक अनुसंधान विधियो में बंद-अंत,सर्वेक्षण और प्रश्नोत्तरी जैसी विधियों का भी प्रयोग किया जाता हैं। बंद-अंत वाले प्रश्नों के साथ संरचित सर्वेक्षणों का उपयोग है। प्रश्न प्रकारों में मुख्य रूप से श्रेणीबद्ध (जैसे "हाँ/नहीं") और अंतराल/अनुपात प्रश्न (जैसे रेटिंग-स्केल, लिकर्ट-स्केल) शामिल हैं। इनका उपयोग व्यवहार, विशेषताओं या राय और लिंग, आय, व्यवसाय जैसी जनसांख्यिकीय जानकारी के आधार पर जानकारी एकत्र करने के लिए किया जाता है। इन्हें ऑनलाइन, फ़ोन पर या व्यक्तिगत रूप से आयोजित किया जा सकता है। जैसे गूगल फॉर्म।

b) **प्रयोगात्मक (Experimental) :-** मात्रात्मक अनुसंधान विधियो में सबसे महत्वपूर्ण विधि प्रयोगात्मक विधि है। प्रयोगात्मक विधि को casual research भी बोलते हैं। इसमें हम कंट्रोल, नियंत्रण व हेर फेर कर सकते हैं। इसका उदेश्य कारण व प्रभाव को जानना होता है। साथ ही इसका उद्देश्य एक विस्तृत विवरण प्रदान करना भी है जो अन्य शोधकर्ताओं को अध्ययन को दोहराने और इसकी वैधता का मूल्यांकन करने की अनुमति देता है।

c) **वर्णनात्मक (Descriptive) :-** वर्णनात्मक शोध वह पद्धति है जो किसी स्थिति, जनसंख्या या घटना का वर्णन करने के लिए उपयोग की जाती है । इसका उपयोग अक्सर क्या, कहाँ, कब और कैसे जैसे सवालों के जवाब देने के लिए किया जाता है, लेकिन क्यों के लिए नहीं। साधारण शब्दो में कहे तो यह चीजों को एज इट एज बताता है। क्यों की व्याख्या नहीं करता है। इसमें कितना,कब, क्या की स्टडी होती है।

d) **सहसंबंधात्मक (Correlational) :-** सहसंबंध विधि के अंतर्गत दो चरों के बीच उनके संबंध को मापा जाता है की वे कितनी मजबूती के साथ और किस दिशा में एक दूसरे

से संबंधित है। जब एक चक्र में वृद्धि होती है तो दूसरे में वृद्धि होगी, कमी होगी या नहीं होगी। इस प्रकार के संबंध को जांचने के लिए सहसंबंधात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार यह दो चरो के बीच संबंध को दर्शाता है। कारण व प्रभाव को नहीं बताता।

e) **संरचित साक्षात्कार (Structured Interview) :-** संरचित साक्षात्कार में पूर्वनिर्धारित (आमतौर पर बंद) प्रश्न होते हैं, जिनमें साक्षात्कारकर्ताओं के बीच बहुत कम या कोई भिन्नता नहीं होती है। आमतौर पर विस्तार या अनुवर्ती प्रश्नों की कोई गुंजाइश नहीं होती है, जिससे वे विशिष्ट विषयों पर शोध करने के लिए बेहतर अनुकूल होते हैं।

(D). मिश्रित पद्धति दृष्टिकोण(Mixed methods approach) :-

कई मामलों में, शोधकर्ता मिश्रित पद्धति दृष्टिकोण का विकल्प चुन सकते हैं, जिसमें गुणात्मक और मात्रात्मक पद्धतियों को मिलाकर दोनों दृष्टिकोणों की महत्ता का लाभ उठाया जा सकता है। शोधकर्ता घटनाओं का गहराई से पता लगाने और परिकल्पनाएँ बनाने के लिए गुणात्मक डेटा का उपयोग कर सकते हैं, जबकि मात्रात्मक डेटा का उपयोग इन परिकल्पनाओं का परीक्षण करने और निष्कर्षों को व्यापक आबादी तक सामान्यीकृत करने के लिए किया जा सकता है।

ऐतिहासिक विधि (Historical method) :- यह ऐतिहासिक विधि गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार की होती है। ऐतिहासिक शोध विभिन्न स्रोतों और विधियों का उपयोग करके अतीत की घटनाओं, लोगों और समाजों की जांच और अध्ययन करने की प्रक्रिया है। इस प्रकार के शोध का उद्देश्य उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर अतीत का पुनर्निर्माण और व्याख्या करना है। ऐतिहासिक विधि के दो प्रकार हैं।

I. **तुलनात्मक** :- इस प्रकार के ऐतिहासिक शोध में समानताओं और अंतरों की पहचान करने के लिए दो या अधिक घटनाओं, लोगों या संस्कृतियों की तुलना की जाती है।

II. **व्याख्यात्मक :-** इस प्रकार का ऐतिहासिक शोध अतीत की घटनाओं, लोगों या संस्कृतियों के अर्थ की व्याख्या करने पर केंद्रित है।

(E). डेटा संग्रहण विधियाँ (Data Collection Methods) :-

गुणात्मक और मात्रात्मक शोध के बीच डेटा संग्रह को लेकर भी अंतर होता है क्योंकि वे अलग-अलग प्रकार के डेटा से निपटते हैं। गुणात्मक शोध समाज के भीतर मानव व्यवहार को समझने के लिए व्यक्तिगत या वर्णनात्मक रूप से संबंधित है। मात्रात्मक शोध चर के बीच संबंधों को चित्रित करने के लिए संख्यात्मक या मापने योग्य डेटा से संबंधित है। इसलिए, एकत्रित किए जा रहे डेटा की प्रकृति और शोध उद्देश्यों के कारण गुणात्मक डेटा संग्रह विधियाँ मात्रात्मक डेटा संग्रह विधियों से काफी भिन्न होती हैं। नीचे प्रत्येक शोध दृष्टिकोण के लिए डेटा संग्रह विधियों की सूची दी गई है।

1) **प्राथमिक डेटा विश्लेषण (Primary data analysis) :-** प्राथमिक डेटा वह डेटा होता है जिसे किसी विशिष्ट शोध या विश्लेषण के लिए सीधे अपने स्रोत से एकत्र किया जाता है। प्राथमिक डेटा, डेटा संग्रह का मूल रूप है जिसे सीधे स्रोत से एकत्र किया जाता है।

उदाहरण के लिए, सर्वेक्षणों, लोगों से जनमत सर्वेक्षणों, प्रयोगों के माध्यम से एकत्र किया गया डेटा आदि।

2) **द्‌वितीयक डेटा विश्लेषण (Secondary Data Analysis) :-** द्‌वितीयक डेटा वह डेटा है जो प्राथमिक स्रोतों के माध्यम से पहले से ही एकत्र किया गया है और शोधकर्ताओं को अपने स्वयं के शोध के लिए उपयोग करने के लिए आसानी से उपलब्ध कराया गया है। इसके अंतर्गत किसी शोधकर्ता ने किसी खास प्रोजेक्ट के लिए डेटा एकत्र किया हो सकता है, फिर उसे किसी दूसरे शोधकर्ता द्‌वारा इस्तेमाल किया जाता हैं। डेटा को राष्ट्रीय जनगणना के मामले की तरह बिना किसी खास शोध उद्‌देश्य के सामान्य उपयोग के लिए भी एकत्र किया जा सकता है। किसी विशेष शोध के लिए द्‌वितीयक के रूप में वर्गीकृत डेटा को किसी अन्य शोध के लिए प्राथमिक कहा जा सकता है। यह तब होता है जब डेटा का दोबारा उपयोग किया जा रहा हो, जिससे यह पहले शोध के लिए प्राथमिक डेटा बन जाता है और दूसरे शोध के लिए द्‌वितीयक डेटा बन जाता है जिसके लिए इसका उपयोग किया जा रहा है।

(F). गुणात्मक बनाम मात्रात्मक शोध परिणाम(Qualitative vs Quantitative Research Results) :-

गुणात्मक शोध और मात्रात्मक शोध से विभिन्न शोध परिणाम प्राप्त होते हैं, जिनमें से प्रत्येक की अपनी महत्ता और सीमाएँ होती हैं। उदाहरण के लिए,

- गुणात्मक शोध में मानवीय अनुभवों, प्रेरणाओं और दृष्टिकोणों के गहन वर्णनात्मक विवरण प्रदान किए जाते हैं जो हमें उन विषयों या आख्यानों और संदर्भों की पहचान करने की अनुमति देते हैं जिनमें व्यवहार, दृष्टिकोण या घटनाएँ घटित होती हैं।
- दूसरी ओर, मात्रात्मक शोध संख्यात्मक डेटा उत्पन्न करते हैं जिसका सांख्यिकीय रूप से विश्लेषण किया जाता है ताकि पैटर्न और संबंधों को निष्पक्ष रूप से स्थापित किया जा सके तथा बड़ी आबादी के बारे में सामान्यीकरण किया जा सके और भविष्यवाणियाँ की जा सकें। इस संख्यात्मक डेटा को ग्राफ़, टेबल या चार्ट के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।
- गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान घटनाओं पर मूल्यवान दृष्टिकोण प्रदान करते हैं, जहाँ गुणात्मक शोध गहराई और व्याख्या पर ध्यान केंद्रित करता है, वही मात्रात्मक शोध संख्यात्मक विश्लेषण और वस्तुनिष्ठता पर जोर देता है।

(G). गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग कब करें(When to use qualitative and quantitative research approaches) :-

गुणात्मक और मात्रात्मक शोध के बीच चयन करने का निर्णय विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है, जैसे कि शोध प्रश्न, उद्‌देश्य, आप आगमनात्मक या निगमनात्मक दृष्टिकोण अपना रहे हैं, उपलब्ध संसाधन, समय और धन जैसे व्यावहारिक विचार, और जांच के तहत घटना की प्रकृति। सरल शब्दों में, मात्रात्मक शोध का उपयोग तब किया जा सकता है जब शोध का उद्‌देश्य किसी परिकल्पना को साबित करना या उसका परीक्षण करना है, जबकि गुणात्मक

शोध का उपयोग तब किया जाना चाहिए जब शोध प्रश्न अधिक खोजपूर्ण हो और अवधारणाओं, व्यवहार या अनुभवों की गहन समझ की आवश्यकता हो।

(H). गुणात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग(Use of qualitative research approach) :-

गुणात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग निम्नलिखित परिदृश्यों में किया जाता है:-

I. **जटिल परिघटनाओं का अध्ययन करना :-** गुणात्मक अनुसंधान में जटिल परिघटनाओं का अध्ययन करने पर बल दिया जाता है। इसमें शोधकर्ता के लिए किसी परिघटना की गहराई, जटिलता और संदर्भ को समझना आवश्यक होता है।

II. **प्रतिभागियों के दृष्टिकोण एकत्रित करना :-** जब लक्ष्य किसी निश्चित व्यवहार के पीछे के कारण को समझना हो, तथा प्रतिभागियों के व्यक्तिपरक अनुभवों और धारणाओं को समझना हो तो गुणात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग किया जाता है।

III. **परिकल्पनाएं या सिद्धांत उत्पन्न करना** :- गुणात्मक अनुसंधान के अंतर्गत परिकल्पनाएं, सिद्धांत या वैचारिक रूपरेखा के निर्माण पर जोर दिया जाता है।

(I). मात्रात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग (Use of quantitative research approach) :-

मात्रात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण का उपयोग निम्नलिखित परिदृश्यों में किया जाता है:

I. **परिकल्पनाओं का परीक्षण करना या सिद्धांतों को प्रमाणित करना :-**मात्रात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण परिकल्पनाओं का परीक्षण करने, संबंध स्थापित करने, या कारण-और-प्रभाव संबंधों की जांच करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

II. **सामान्यीकरण :-** मात्रात्मक अनुसंधान में बड़े, प्रतिनिधि नमूनों का उपयोग करके निकाले गए निष्कर्षों को व्यापक रुप से जनसंख्या पर सामान्यीकृत किया जाता है।

III. **सांख्यिकीय विश्लेषण :-** मात्रात्मक अनुसंधान डेटा में संबंधों, पैटर्न या प्रवृत्तियों को मापने के लिए कठोर सांख्यिकीय विश्लेषण की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष (Conclusion) :-

इस प्रकार हम कह सकते हैं शोध नए ज्ञान का निर्माण करने और पुराने ज्ञान को नए ढंग से प्रस्तुत करने के लिए कई जाती है। गुणात्मक और मात्रात्मक शोध डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए दो मूल्यवान उपकरण हैं। उचित विधि का चयन शोध प्रश्न पर निर्भर करता है। यह शोध डिजाइन और उपलब्ध संसाधनों पर भी निर्भर करता है। दोनों विधियों के अपने लाभ और सीमाएँ हैं, जिनपर शोध उद्देश्यों के आधार पर विचार किया जाना चाहिए। अतः किसी भी व्यवसाय, प्रौद्योगिकी और विज्ञान के डेटा का विश्लेषण करने के लिए गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। गुणात्मक अनुसंधान मौखिक और लिखित रूप से दिए गए डेटा पर निर्भर करता है, जबकि मात्रात्मक अनुसंधान निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सांख्यिकी और अवलोकन पर निर्भर करता है।

संदर्भ (Reference) :-

1. श्रीवास्तव.,बी. के.(2015). इतिहास लेखन : अवधारणा,विधाएं एंव साधन, एस.बी.पी.डी.पब्लिशिंग हाऊस
2. Chaubey, J.(2023).Itihas Dharshan,Dr.Jarkhandey Chaubey
3. पाण्डेय, रस्तोगी.(2018). इतिहास लेखन कला, सजीवन प्रकाशन
4. परजापत,पी.(2024).इतिहास दर्शन एवं इतिहास लेखन,पब्लिशर्स पप्पू सिहं
5. कार,ई.एच.(2023).इतिहास क्या हैं, लक्ष्मी पब्लिकेशन
6. खुराना डॉ,बंसल डॉ.(2020).इतिहास-लेखन,धारणाएँ तथा पद्दतियाँ, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशक
7. अमरातुंगा, डी., बाल्ड्री. डी., सरशार, एम. और न्यूटन, आर. (2002) “मात्रात्मक और गुणात्मक निर्मित पर्यावरण में अनुसंधानः “मिश्रित” आर का अनुप्रयोग शोध दृष्टिकोण।“
8. क्रॉसन, एफ. (2002) “शोध पद्धतिः एक समझ की ओर” नर्स शोधकर्ता
9. कस्टर, आर.एल. (1996). “गुणात्मक शोथ पद्धतियाँ।“ जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल टीचर एजुकेशन
10. गोबो, जी. (2015), “अगली चुनौतीः मिश्रित सेविलयित विधियों”, गुणात्मक अनुसंधान संगठन और प्रबंधनः एक अंतरराष्ट्रीय जर्नल, वीओएल.
11. हाइड, के.एफ. (2000) “गुणात्मक में निगमनात्मक प्रक्रियाओं को पहचानना।“ गुणात्मक बाजार अनुसंधानः एक अंतर्राष्ट्रीय जर्नल
12. एडवर्ड एनजेड (सं.), उपलब्धः http://plato.stanford.edu/archives/fall2010/entries/comte/.
13. चैपल. सी. (2004) “प्राकृतिक अनुसंधान की प्रकृति।“ उपलब्धः http://www.gsu.edu/-mstswh/courses/it7000/papers/the1.htm. अभिगम दिनांकः 27 मई, 2004)

Email -rashmiashok4@gmail.com Contact - 9812532133

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 133-136
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नारी व्यथा का दस्तावेज : डॉ॰ मीना अग्रवाल का कथा साहित्य

सुमन देवी, शोधार्थी
हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, 124001

सारांश

उत्तरप्रदेश के हाथरस में पली–बढ़ी डॉ॰ मीना अग्रवाल हिन्दी साहित्य जगत् के लिए कोई अपरिचित नाम नहीं है वरन् एक सशक्त हस्ताक्षर है जो कला साहित्य एवं भक्ति की त्रिमूर्ति है। डॉ॰ मीना अग्रवाल साहित्य एवं भक्ति की त्रिमूर्ति है। डॉ॰ मीना अग्रवाल साहित्य के अतिरिक्त सामाजिक गतिविधियों में भी लगातार हिस्सा लेती रही है। उनका खेल–कूद, लेखन, भ्रमण नृत्य कला व संगीत, रंगमंच–अभिनेयता के अतिरिक्त विविध सम्मेलनों एवं संस्थाओं में भी सक्रिय योगदान जारी है। अपनी बहुमुखी प्रतिभा के कारण उन्हें रोटरी फांउडेशन सम्मान, विदुषी विद्योत्तमा पुरस्कार, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय का शिक्षा पुरस्कार आदि अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। इस प्रकार मीना जी ने हिन्दी की लक्ष्य प्रतिष्ठित साहित्यकार, हाइकू मर्मज्ञ तथा नारीवादी चिंतक के रूप में अपनी अलग पहचान बना ली है। उनके लेखन का प्रमुख लक्ष्य नारी संघर्ष एवं व्यथा को अभिव्यक्त करना रहा है। लेखिका नारी व्यथा विषयक दृष्टिकोण प्रकट करते हुए कहती है – ”नारी इतिहास की सबसे दुखद घटना यही है कि पुरूषों ने अपने शताब्दियों के सामाजिक विकास में जीती जागती नारी को मात्र शरीर तक समेटकर रख दिया .... और इससे भी दुखद यह हुआ कि नारी–समाज ने भी अपने मानवीय अस्तित्व को शरीर तक सिमट जाना स्वीकार कर लिया।“[i]

वस्तुतः डॉ॰ मीना ने अपने साहित्य में नारी व्यथा की अभिव्यिक्ति को नजदीक से अनुभूत किया है। वर्तमान कथा साहित्य में नारी को शीर्ष पर देखने वाली लेखिका मीना अग्रवाल की कहानियों सरस, गंभीर एवं भावपूर्ण होती है। स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण को उजागर करने में इनका विशेष स्थान है। उन्होंने अपने साहित्य में देश–विदेश की निम्न मध्य व उच्च परिवार की शिक्षित नारी को अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत आलेख में लेखिका ने अधिकतर बुद्धिजीवी वर्ग की नारियों की घटनाओं को केन्द्रित रखा है। जो युवा पीढ़ी की मानसिकता, पाश्चात्य संस्कृति का कुप्रभाव, फैशन परस्त नई संस्कृति, रिश्तों में गौण होती संवेदना, बेरोजगारी, बलात्कार व शोषण, कन्या भ्रूण हत्या, पुरूष का अहम् एवं नारी को मात्र भोगविलास की वस्तु मानना, तलाक, समाज में बढ़ रहे अत्याचार, जीवन मूल्यों में आए परिवर्तन, नारी द्वारा नग्नता का चोला पहनाने वाले पुरूष–नारी की मानसिकात आदि विषयों पर करारा व्यंग्य किया है।

डॉ॰ मीना जी ने अपने साहित्य की कथाओं एवं लघुकथाओं के जरिये विशेष बौद्धिक उठापटक नही की है अपितु एक सरल एवं सहज बौद्धिक मन की स्वतः अद्भावना है। वस्तुतः उनका कथा साहित्य वर्तमान समाज के यथार्थ से परिपूर्ण है। तथा सम्पूर्ण नारीवर्ग की व्यथा को अपनी लेखनी द्वारा उकेरा हैं या यूँ कहे कि प्रत्येक कथा को स्वयं अपने मन से अनुभूत करके उन्हें शब्दरूपी अश्रुओं से पाठक के सामने प्रस्तुत किया है। इसके इतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विषयों को भी अपनी लेखनी से संस्पर्ष किया है।

मुख्य शब्द : मीना अग्रवाल का साहित्य, मीना अग्रवाल की नारी, नारी–व्यथा, नारी मुक्ति या नारी संवदेना, नारी विमर्श आदि।

प्रस्तावना

साहित्य समाज का दर्पण एवं दीपक होता है क्योंकि जा समाज में घटित होता है, वही साहित्य में प्रस्तुत किया जाता है। वस्तुतः ये दोनों एक दूसरे के सहयोगी है। समाज को साहित्य से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि इनका केन्द्र सदैव मानव ही रहता है। प्रतिदिन बदलते संदर्भो को एक संवेदनशील व चेतनायुक्त साहित्यकार ही युगानुकूल अपने साहित्य में अभिव्यक्ति प्रदान करने की क्षमता रखता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार "साहित्य में उन सभी बातों का जीवन्त विवरण होता है, जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है।"[ii]

जहाँ तक कथा साहित्य के उद्भव व विकास की बात करे तो लेखिका ने मानव व काहानी का उद्भव एक साथ माना है। वस्तुतः इन दोनों का परस्पर घनिष्ठ संबंध हैं।

वे लिखती है – "जवीन के वे महीन पल जो कविता, नाटक और उपन्यास के सोंचे में दलने संभव नहीं ये थे, कहानी बनकर स्थापित हो गए हैं।"[iii]

स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण को उजागर करने में इनका विशेष स्थान है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में जिन नारी चरित्रों का उद्घाटन किया है, उसमें आधुनिक युग में शिक्षा नौकरी, बेरोजगारी, अभिजात्य संस्कृति का कुप्रभाव, सामाजिक एवं ऐतिहासिक बदलवों के बावजूद औद्योगिकीकरण व मशीनीकारण के कारण महानगरों में ह्रास होते मानवीय मूल्यों का चित्रांकन प्रमुख विषय है।

अंदर धूप, बाहर धूप में चित्रित नारियाँ

यह हिन्दी की विख्यात साहित्यकार डॉ॰ मीना द्वारा रचित प्रथम कहानी संग्रह हैं। इसमें लगभग 2 दर्जन कहानियों है जिनमें मध्यम एवं उच्च मध्यमवर्गीय शिक्षित नारी जीवन की कठिनाईयों व संघर्ष का यथार्थ विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त किया है। इस संग्रह में उपर्युक्त वर्गों की शिक्षित महिलाएँ अपनी सामाजिक वैशिष्ट्य व्यक्तिगत प्रवृत्तियाँ व मानसिक विकृतियों के बीच से अंकित की गई है।

इस संदर्भ में लेखिका लिखती है – "इनमें से अधिकतर कहानियाँ बुद्धि जीवी वर्ग की उन महिलाओं पर केन्द्रित हैं, जिनके चरित्र का निर्माण एक नई अभिजात्य संस्कृति के माध्यम से हुआ है इस प्रक्रिया में जो विकृतियाँ उभरकर सामने आई है, उन्हें घटनाओं के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।"[iv]

इस संग्रह में चित्रित कहानियों में अतृप्तिबोध, अपनत्व, इकलौता बेटा, एक दिन मार्था के साथ, एक प्यार ऐसा भी, किराए की कोख, कोयला भई न राख, बदलते समय की पीड़ा, तलाक, दादी माँ, वह नहीं बदली, पराए पल, पागल लड़की अंदर धूप, प्रश्नचिह्न, फरिश्ते, अपनत्व बोध, माँ और ममता, रिश्ते, रेश्मा, शाल में लिपटा शरीर संबंधों की डोर, समर्पण, बाहर धूप शामिल है।

उपर्युक्त कहानियों की नारी पात्रों में रेशमा, उमा, बूढ़ी दादी, शैफाली, मानसी संगीता, मार्था, कामना, शालिनी, शोशाबा हरम, नूरी आदि। अनेक मुख्य पात्र है जिस संग्रह में रिश्तों में खत्म होती संवेदना, लाचारी व अभावग्रस्तता, तलाक या अलगाव, हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिकता, फैशन के नाम पर बढ़ती नग्नता, वृद्धों की टीस व पीड़ा एवं राजनीतिक यथार्थ, बढ़ते हुए मशीनीकरण से मानवीय मूल्यों का होता ह्रास, प्रेम से कुंठित नारियाँ, यौन शोषण व भ्रूण हत्या, जैसे जघन्य अपराधों जैसी घटनाओं से परिपूर्ण है। रेशमा कहानी की गरीब व अभावग्रस्ता से लाचार जब रेशमा अपने बेटे के साथ चमत्कार की भाँति करतब दिखाती है और अनजाने में अपने बेटे की हत्या की दोषी मान ली जाती हैं 'रेशमा अपनी असहनीय पीड़ा व्यक्त है मृत्युदंड की इच्छा रखती है– "अब मैं जीना नहीं चाहती मेमसाब। अल्लादाद नहीं रहा तो जीने का कोई मतलब भी नहीं रहा।"[v]

इसी प्रकार 'कोयला भई न राख' कहानी उमा श्रीवास्तव पर कम उम्र में पूरे परिवार की जिम्मेदारी उठाने के लिए मजबूर होना और जिम्मेदारी व लाचारी में अपने यौवन का स्वाहा करना अत्यंत यथार्थ एवं दर्दनाक है।

'बदले हुए समय की पीड़ा' शीर्षक कहानी में दादी माँ की अपने बच्चों द्वारा बार–बार अवहेलना किए जाने पर लेखिका दादी माँ की टीस व पीड़ा ले व्यक्त होती करती है– "जब आदमी का अपना कोई न रहे, न जानने वाला, न पहचानने वाला तो उसका मर जाना ही अच्छा है।"[vi]

संक्षेप में, मीना अग्रवाल का सम्पूर्ण कथा संग्रह नारी व्यथा, संघर्ष एवं यथार्थ से भरा पड़ा हैं। तथा वह माँ, बहन, बेटी, पत्नी, प्रेमिका आदि रूपों में प्रस्तुत की गई हैं। नारी की परिभाषा को स्पष्ट करती है, "नारी ही एक–एक ईंट चुनकर इस समाज की स्थापना करती है और एक पीढ़ी का हाथ दूसरी पीढ़ी को सौंपकर जीवन की श्रृंखला को बेअंत बना देती है।"6

वस्तुतः इस संग्रह की सभी कथाओं का मुख्य आधार नारी शोषण, एवं संघर्ष है जिनका चित्रण लेखिका ने अत्यंत मार्मिक एवं यथार्थ पूर्ण किया है।

इसी प्रकार 'कुतेवाले पापा' कथा संग्रह में कुल 15 कहानियों है– लाजवन्ती का पौधा, पागल लड़की मुनीरा, संकल्प और पछतावा, समाधान एग्रीमैंट, मशीनी जीवन क्या वह पागल थी, चाँदी का बरक, चर्चा एक घटना की, साहस की अनोखी दास्तान, एक औरत और, विद्रोह की एक चीख, कुतेवाले पापा, समझौता, तथा यहाँ से वहाँ तक कहानी शामिल है। इन कहानियों का आधार भी देश–विदेश की उच्च, मध्यम व निम्न वर्गीय नारीयाँ का संघर्षशील यथार्थ जीवन है। इस संग्रह में भी सामाजिक बुराईयों, शिक्षा, राजनीति, नौकरी, पैतृक व्यवसाय से युक्त संघर्षपूर्ण नारी जीवन यौनशोषण स्वच्छत्ता व पाश्चात्य संस्कृति का कुप्रभाव और रिश्तों में बढ़ती संवेदन हीनता आदि विषयों की प्रधानता हैं। 'पागल लड़की मुनीरा' नामक कन्याभ्रूण हत्या पर आधारित मर्मस्वपर्शी कहानी में मुनीरा के ससुराल वाले लगातार तीन बार जाँच द्वारा पता लगने पर कन्या भ्रूण हत्या करवाते है और बार उसकी बेटी को जिंदा कब्र में दफनाने पर मुनीर को मानसिक आघात लगता है। वह हमेशा कुरान की एक आयत बार–बार दोहराती रहती है–

"और जब जिंदा दफन की गई लड़कियों से पूछा जाएगा कि वे किस गुनाह के बदले कत्ल की गई थी"[vii] इस प्रकार लेखिका ने अन्य कहानियाँ में भी नारी वर्ग की व्यथा का यथार्थ वर्णन करते हुए पुरूष समाज पर करारा व्यंग्य किया है। नारी का अर्थ स्पष्ट करते हुए लेखिका कहती है –

"पूरी हुई दुनियाँ की कहानी हमसे
अंगनाइयाँ आबाद हैं घर की हमसे
हम साथ रहेगी तो उजाला होगा
है रोशनी संसार की आधी हमसे।"[viii]

इस प्रकार लेखिका ने 'क्या अच्छा, क्या बुरा' कहानी संग्रह में 14 कहानियों के माध्यम से नारी विमर्श तथा वर्तमान यथार्थ का सजीव चित्रण किया है। इस संग्रह में कुल 14 कहानियाँ है– फैसला, पुनर्वास, क्या अच्छा, क्या बुरा, कहानी अकहानी की अहंकार, खून का रिश्ता, पिंकी और कॉकरोच, वह पागल भी, अंधविश्वास, शंकुन्तला, एक उत्पीड़न यह भी, पैसों की चुनरी, भूख से भूख तक, डर अकेलेपन का शामिल है। वस्तुतः इन कहानियों में शिक्षा, नौकरी एवं कामकाजी महिलाओं की घर–परिवार की समस्या, दहेज–हत्याएं बिखरते रिश्ते, वैश्यावृत्ति एवं बढ़ता यौन शोषण, घरेलू हिंसा धार्मिक रूढ़ियाँ, कुंठा व अकेलापन, स्वच्छंदता व बढ़ता अंग प्रदर्शन, घुटन व त्रस्त जीवन, अपहरण व बलात्कार आदि गंभीर विषयों की अभिव्यक्ति हुई है। इस संदर्भ में लेखिका लिखती है– "इसमें संकलित सभी कहानियाँ विभिन्न वर्गो के पात्रों को लेकर आई हैं। इनमें आदमी है जीता जागता वास्ततिक आदमी। इसमें आरोपित लोग नहीं हैं।"[ix]

संक्षेप में, डॉ॰ मीना अग्रवाल का सम्पूर्ण कथा साहित्य नारी शोषण, कष्ट व संघर्षो से युक्त जीवन से परिपूर्ण है। जिनकी अभिव्यक्ति यथार्थ व मार्मिक ढंग से हुई है।

निष्कर्ष :

आधुनिक हिंदी साहित्य की कथा लेखिकाओं में मीना अग्रवाल की रचनाएँ दिल को छूती हुई प्रतीत होती है। इस आलेख में मीना जी ने अपनी कहानियाँ में वर्णित सभी नारी–चरित्रों को बहुत ही ईमानदारी से उभारा है। नारी के सभी रूपों का चित्रण उन्होंने यथार्थवादी एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया है। उनके कथा साहित्य की प्रत्येक नारी पात्र अपने स्तर पर अपनी अस्मिता के लिए संघर्षशील है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

---

[i] डॉ॰ गिरिराज शरण अग्रवाल एवं डॉ॰ मीना अग्रवाल–आधी आबादी का सच, पृ॰ 8–9
[ii] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी–साहित्य सहचर, पृ॰ 3
[iii] डॉ॰ मीना अग्रवाल – अंधर धूप, बाहर धूप, पृ॰ 10
[iv] वही, पृ॰ 11
[v] वही, पृ॰ 119
[vi] वही, पृ॰ 56
[vii] वही, पृ॰ 126
[viii] डॉ॰ मीना अग्रवाल – कुत्तेवाले पापा, पृ॰ 10
[ix] डॉ॰ मीना अग्रवाल – सफर में साथ–साथ, पृ॰ 10

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 137-138
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक समाज में विवाह–विच्छेद एक अभिश्राप

अंजली गुप्ता, (शोधार्थी) समाजशास्त्र विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
डॉ. बिहारी लाल द्विवेदी, प्राचार्य,
मेकलसुता महाविद्यालय डिण्डौरी (म.प्र.)

सारांशः– आधुनिक समय में विवाह के परंपरागत स्वरूप के परिवर्तन में सामाजिक विधानों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका है। हिन्दू विवाह में को एक धार्मिक संस्कार माना गया है जिसमे इस संबंध को जन्म जन्मांतर का सम्बन्ध माना गया है किंतु वर्तमान कानून ने विवाह विच्छेद की अनुमति प्रदान कर संस्कारगत स्वरूप को झटका दिया है। विवाह विच्छेद का कोई प्रावधान नहीं था किंतु विवाह विच्छेद हो जाता तो समाज में उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता है।

प्रस्तावना–

आज आधुनिक समाज में बदलते समाजिक परिवेश के 19वीं व 20वीं शताब्दी में विवाह–विच्छेद से जुड़े कानुनों में लगातार विकसित होते जा रहे है जो विवाह व परिवार के प्रति बदलते दृष्टिकोण को दर्शाते नजर आ रहे है। कई देशों में तलाक का अधिकार आम लोगों तक इतना बढ़ा दिया गया और तलाक के आधारों में आज असंगति और परित्याग जैसे कारणों को शामिल किया गया है।

विवाह–विच्छेद के कई कारण हो सकते है,
जैसे कि :–

- व्यभिचार
- क्रूरता
- परित्याग या अलगाव
- धर्मांतरण
- घरेलू हिंसा
- मानसिक प्रताड़ना
- शारीरिक अंतरंगता की कमी
- प्रतिबद्धता की कमी
- बेवफाई
- संघर्ष और बहस अधिकतर
- अनुचित व्यवहार

आधुनिक युग में विवाह–विच्छेद का प्रभाव–

हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 13 (1) (ii) के अंतर्गत परिभाषित किया गया है कि यदि पति–पत्नी में से कोई भी दूसरे पति–पत्नी की सहमति के बिना अपना धर्म परिवर्तित कर दूसरे धर्म को

स्वीकार करता है तो दूसरा पति–पत्नी न्यायालय में आवेदन कर सकता है तथा विवाह विच्छेद की प्रक्रिया अपना सकता है।

वैवाहिक जीवन अथवा वैवाहिक बंधन के अंत को तलाक कहा जाता है। विवाह के कानूनी दायित्वों और कर्तव्यों को निरस्त करने अथवा पुनर्गठित करने की आवश्यकताओं को पूरा करता है अर्थात् यह विभिन्न राज्यों अथवा देशों के विधिक नियमो के अनूसार विवाहित जोड़ों के विवाह बंधन को समाप्त होने की कानूनी प्रक्रिया होती है। प्राचीन सभ्यताओं से लेकर आधुनिक समय तक, तलाक से जुड़े कानूनों और दृष्टिकोणों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है, जो प्रत्येक युग के बदलते सांस्कृतिक और समाजिक मानदण्ड़ों को समाज में दिखाते है। विवाह के विघटन के लिए पति या पत्नी में से किसी एक ऐसे व्यवहार का दोषी पाया जाना आवश्यक था जिसने विवाह को मूल रुप से क्षीण कर दिया गया है।

अध्ययनों से पता चलता है कि तलाकशुदा माता–पिता वाले बच्चों में गैर–तलाकशुदा माता–पिता वाले बच्चों की तुलना में व्यवहार संबंधी मुदद् प्रदर्शित होने की संभावना अधिक होती है।

आधुनिक युग में तलाक का प्रभाव पारिवारिक जीवन, शैक्षणिक उपलब्धि, नौकरी की स्थिरता, नशीले पदार्थो का प्रयोग और अपराध पर असर स्पष्ट दिखाई देता है। हर साल 1 मिलियन से ज्यादा अमेरिकी बच्चे अपने माता–पिता के तलाक से पीड़ित होते है। भारत में तलाक का सबसे प्रमुख कारण घरेलू हिंसा और धोखा देना है। इसके अलावा जो लोग 50 साल की उम्र में तलाक ले रहे है वो लोग एक दूसरे से मुक्ति पाने और अनसुलझे मुदद्ों की वजह से यह कदम उठा रहे है और साथ ही शादी इसका एक कारण हो सकता है। तलाक का प्रभाव विशेषतया बच्चों पर अधिक विनाशकारी होता है।

निष्कर्ष :–

तलाक की दर आज समाज में सोशल मीडिया व्यक्तिवाद व वित्तीय स्वतंत्रता विवाह के नए दवाबों का भी सामना करना पड़ रहा है जबकि विषाक्त रिश्तों को छोड़ना महत्वपूर्ण है। व्यक्ति को शारीरिक या भावनात्मक आघात तलाक का कारण बन जाता है।

तलाक एक परिवार के जीवन का सबसे कठिन अनुभवों में से एक है। इसका प्रभाव परिवार के सदस्यों व बच्चों की मानसिक, भावनात्मक व मनोवैज्ञानिक रुप पर उनके स्वभाव पर पड़ता है। परिवार की भूमिका, रिश्ते, पारिवारिक संरचना में व्यवधान कर दीर्घकालिक मुदद्ों का कारण बन सकता है। हिंदू सांस्कृतिक में विवाह को एक पवित्र बंधन माना जाता है। वर्ष 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम से पहले, विवाह–विच्छेद के लिए कोई प्रावधान नहीं था, क्योंकि उस युग के भारतीय समाज के लिए इसे पवित्रता की संज्ञा दी गयी थी। समाज में कठोर व्यवस्था से महिलायें अदृश्य रुप से पीड़ित थी। विवाह–विच्छेद की धारणा को स्वीकार नहीं किया यह अपेक्षा की गयी कि एक महिला सहनशील रहेगी और समझौता करेगी। वर्ष 1955 में हिंदू विवाह अधिनियम के प्रारम्भ के साथ बदलते समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विवाह–विच्छेद की अवधारणा एवं संबंधित प्रावधान विकसित होने लगे।

संदर्भ सूची :–

1 बसन्तीलाल बाबेल, पुस्तक 'विवाह एवं तलाक विधि'।
2 स्वदेश कुमार, पुस्तक 'तलाक का मुकदमा'।
3 डॉ. त्रिलोक चंद्र शर्मा, पुस्तक 'विवाह संतान और तलाक'।
4 एस. सिन्हा, पुस्तक 'बढ़ते तलाक और उसके दुष्परिणाम'।
5 शालिनी सिंह, पुस्तक 'तलाक द डिवोशन ऑफ वन ईयर'।
6 गुलजार खान, पुस्तक 'विवाह–विच्छेद अधिनियम 1869'।
7 रजत बिंदल, पुस्तक 'हिंदू विवाह एवं तलाक का कानून'।

संम्पर्क नं. 9424723147 drbiharilaldwivedi@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 139-140
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

''हिन्दी उपन्यासों में वृद्धजनों की दशा एवं दिशा''

लूसी कुमारी, शोधार्थी,
जयप्रकाश वि0वि0 छपरा

वृद्धावस्था की बात करने पर अक्सर प्रसिद्ध फ्रांसिसी लेखक अनातोले फ्रांस का वह कथन याद आता है काश! ''बुढ़ापे के बाद जवानी आती है'' अनातोले का वह कथन बड़ा ही सांकेतिक है–जवानी वह शारीरिक अवस्था है जो जोश–ऊर्जा, शौर्य से ओत–प्रोत होती है जिसके सहारा लेकर हर व्यक्ति अपने–अपने ढंग से जीवन यापन तय करते हैं और इस क्रम वह वृद्धावस्था तक पहुँचता है । बुजुर्ग वर्ग के पास जवानी वाली उर्जा शक्ति तो नहीं रह जाती किंतु रह जाती है विविध अनुभवों का भंडार। इन अनुभवों के आलोक में व्यक्ति की जवानी का अनुभव रहित जोश में किए गए अपने कई गलत निर्णयों और कार्यो का अहसास होता है तो वह अनुताप की आँच में तपते हुए यह सोचता है कि अगर उसे बुढ़ापे में जवानी जैसी ताकत स्फूर्ति मिल जाए तो वह पहले से बेहतर श्रेयस्कर कार्य कर सकता है।–यही आशय है अनातोले फ्रांस के इस कथन का मूलतः बुढ़ापा जिसे आमतौर पर निष्क्रियता , शिथिलता की शारीरिक दशा समझकर बहुत काम का चीज नहीं समझा जाता। बचपन से लेकर जवानी तक के जीवन अनुभवों का भंडार होता है–ऐसा प्रकाशमय आलोक है जिसके सहारे से युवा पीढ़ी अपने वर्तमान को संवारते हुए भविष्य का श्रृंगार कर सकती है। यही कारण रही है कि प्राच्य और पाश्चात्य दोनों परंपराओ में वृद्ध या वृद्धावस्था के प्रति सम्मानजनक भाव रहा है। इतिहास और साहित्य दोनों ही इस परंपरा के साक्षी है कि बुजुर्ग वर्ग के अनुभवों–सलाह मशवरे से लाभ उठानेवाली वृद्धों को दिखाया गया मार्ग पर चलनेवाली युवा पीढ़ी ही नव–निर्माण कर पाती है जबकि इसके विपरित मार्ग पर चलनेवाली युवा–शक्ति पतन की ओर ही जाती है। इसके प्रमाण स्वरूप रामायण और महाभारत की कथाओं को देख सकते हैं।

आज आधुनिक होते जा रहे देश और शहर की चकाचौंध ने युवाधन को भटका दिया है। आज वह अपने नैतिक मूल्यों बुजुर्ग वर्ग के प्रति सम्मान आदि को भूलते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप हिन्दी –साहित्य में वृद्धों की दशा और दिशा बदलने के लिए वृद्ध विमर्श का होना आवश्यक है। भारतीय संस्कृति में ''वसुधैव कुटुंबकम'' की भावना धीरे–धीरे समाप्त होती जा रही है। परिणामस्वरूप पारिवारिक संवेदना गायब होती जा रही है। आधुनिकीकरण के कारण उभरा नया उच्च मध्यम वर्ग इस विमर्श के पालन पोषणहार थे। जिन्हें अब हाशिये पर भी धकेला जा रहा है। युवा पीढ़ी या परिवार यह नहीं समझ रहा है कि वृद्धावस्था एक प्राकृतिक घटनाक्रम है जो सबको इसी अवस्था से गुजरना है। वैसे तो वृद्धावस्था जीवन का सत्य है। इससे कोई भी बच नहीं सकता। संयुक्त परिवार अलग होने के कारण बुजुर्ग व्यक्ति पर विशेष ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाये हैं और न ही उनकी समस्याओं को समझ रहे है। आधुनिक समय में आज की युवा पीढ़ी वृद्ध को बोझ समझ बैठी है। समाज में वृद्धों को उचित सम्मान नहीं मिलने के कारण वृद्धों का जीवन निराशा की ओर बढ़ रहा है। आज वृद्ध माता–पिता की सम्पत्ति, जमीन–जायदाद तो अच्छी लगती है किंतु उनका पालन–पोषण करना नहीं चाहते परिणामस्वरूप ही वृद्धाश्रम जैसी संस्था का उद्‌भव हुआ। पुत्र तथा पुत्रवधु वृद्ध माता–पिता पिता के प्रति संवेदना और आदर भाव बिल्कुल नहीं रखते। इतना ही नही उन्हें खुद के घर परिवार से भी निकाल दिया जांता है। वृद्धावस्था विमर्श पारिवारिक संबंध और रिश्तों में आ रही गिरावट के कारण वृद्ध विमर्श को

केन्द्र में रखकर कई साहित्यकारों ने कहानियाँ उपन्यास कविताएं लिखी। हिन्दी–साहित्य में प्रेमचंद, नागार्जुन, भीष्मसाहनी, उषा प्रियवंदा, अमृत राय, चित्रामुदगल, ममता कालिया ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से वृद्धों के जीवन की विभिन्न समस्याओं पर आधारित कहानियां उपन्यास लिखकर युवा पीढ़ी की संकीर्ण सोच को बेनकाब किया है।

''गिलिगडु'' चित्रा मुदगल जी का प्रसिद्ध एवं संवेदनशील उपन्यास है इस उपन्यास में उन्होंने वर्तमान युगीन बदलते मूल्यों के बीच वृद्धों के आंतरिक एवं बाह्य जीवन की स्थितियों को उजागर करने का प्रयास किया है। इस उपन्यास में डॉ0 अर्चना मिश्रा का कथन है–''गिलिगडु'' उपन्यास में चित्रा जी ने वृद्धों की बेचारगी, संवेदनशीलता और जीवन शैली को विस्तार दिया है, यह उपन्यास आकार में छोटा है, परंतु संवेदनशीलता में गहरा उपन्यास है इस उपन्यास में एक बुजुर्ग की एक रेखीय कहानी नहीं जीवन के रंग बहु आयामी रूपों में उभरकर आये हैं'' (1)

पाश्चात्य संस्कृति भारतीय संस्कृति पर किस तरह से हावी हो रही है उसका यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। भारतीय संयुक्त परिवार के प्रेम व आदर्श की बात की जायेगी तो उस पर विश्वास नही करेंगे। जैसे महात्मा गाँधी के बारे में आइन्स्टाइन ने कहा था कि –भविष्य की पीढ़ियों को इस बात पर विश्वास करने में मुश्किल होगी की हाड़–मांस से बना ऐसा कोई व्यक्ति भी कभी इस पर आया था।''(2)

प्रेमचंद जी ने अपने साहित्य में भी वृद्धजनों की समस्या को ज्वलंत समस्या की श्रेणी में रखते हैं । उन्होंने वृद्धजनों की स्थिति से रूबरू कराती है, समाज की उस व्यवस्था से पर्दा उठती है, जिसमें लोग अपनी स्वार्थपरता के लिए वृद्धों का अवहेलना करते हैं। युवावस्था–वृद्धावस्था से अनभिज्ञ होती है।–''वृद्धावस्था बाल्यावस्था की है पुनरागमण होता है। इन अवस्थाओं में जिह्वा की अभिलाषा एवं परिवार की उपेक्षा से त्रस्त है।'' (3)

'समय सरगम' कृष्णा सोबती का बहुत ही चर्चित उपन्यास है। यह केवल उपन्यास नहीं है बल्कि यह एक ऐसी झांकी है जो हर व्यक्ति के जीवन के सांध्य को दर्शाती है। यह जीवन की एक ऐसी अवस्था है जिससे एक न एक दिन हर व्यक्ति को होकर गुजरना पड़ता है। '' वृद्ध जीवन से जुड़ा यह उपन्यास हर उस वृद्ध की कहानी को प्रस्तुत करता है। जीवन के इस मोड़ पर आकर जब उसे प्यार, अपनत्व, लगाव की जरूरत होती है। तब वह अकेला रह जाता है।''(4)

साहित्यिक क्षेत्र में अलग व्यक्तित्व के माध्यम से महत्वपूर्ण स्थान रखनेवाले काशीनाथ सिंह द्वारा रचित ''रेहन पर रग्घू' उपन्यास में परंपरागत मूल्यों और संस्कारों के बंधन में जूझता हुआ वृद्ध को दर्शाया गया है। इस उपन्यास में रघुनाथ नामक व्यक्ति की जीवन को अत्यंत प्रभावकारी रूप से अभिव्यक्त किया है''आज वही ज्ञानदत्त–बिना पैरो का ज्ञानदत्त चौराहे पर भीख मांगता है मरने की ख्वाहिश ने उसे कहीं का नही छोड़ा मगर कमबख्त ज्ञानदत्त उनके दिमाग में आया ही क्यों,? निकले थे बूंदो के लिए हवा के लिए।''(5)

वस्तुतः वृद्धावस्था को सम्मानपूर्वक एवं शांति पूर्वक व्यतीत करने के लिए सिर्फ आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने की आकांक्षा रखनी चाहिए एवं उसमें ही संतुष्ट रहना चाहिए न की अपनी प्रत्येक इच्छा पूर्ति के लिए जिद्दोजहद।

संदर्भ सूची–

1. चित्रा मुदगल के कथा–साहित्य,युग चिंतन पृष्ठ सं0–36
2. 'समय–सरगम, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन संस्करण–2000 पृ0सं0–11
3. 'बूढ़ी काकी' प्रेमचंद , हिन्दी समय
4. ''समय–सरगम, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन संस्करण–2000
5. रेहन पर रग्घू –काशीनाथ सिंह, राजकमल प्रकाशन संस्करण–2000 पृ0सं0–164

मो0 नं0–9102811675 Emai-lucyangle084@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 141-146
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण संरक्षण, मानव सचेतना एवं स्वास्थ्य

डॉ. मनोज दीक्षित, सहायक आचार्य,
विद्यासंबल राज० महा० मालाखेडा अलवर

सारांश - वर्तमान में मानव को अपने जीवन-संघर्ष से कुछ पल उन तत्वों की ओर देने की आवसकता है जिनमे मानवका निर्माण हुआ जय और जीवनका संचालन होता है |मानव एवं पर्यावरण सदैव एक दुसरे से गहन संबंधित घटक है जो कि अपने कार्यो से एक - दुसरे को प्रभावित करते रहते है | यदी मानव को अपना स्वास्थ्य एवं जीवन संरछित करना है तो आज यह अत्यन्त आवश्यक है की उसे अपने अतीत की ओर देखना होगा तथा सुदीर्घजीवता की अवधारणा का अनुसरण करते हुए प्राकृतिक प्रवरण का सहयोगी बनना होगा |

आज के व्यस्त जीवन में मानव को यदी सन्ति प्राप्त होगी तो वह स्वास्थ्य वातावरण, समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों की ओर ध्यान देना होगा | भविष्य में आने वाली पीढ़ी के लिए यह अत्यंत आवश्येक है की आज मानव संसाधन का उपयोग करे तथा संरक्षण की ओर ध्यान दे |

मानव का आज पर्यावरण के प्रती किया गया प्रयास भविष्य में एक सुरक्षित, स्वस्थे, बेहतर कल प्रदान करेगा | अतः मानव को अपनी सोच में परिवर्तन कर पर्यावरण के अनुकूल करने की आव्सयकता है जीसमे 'सुद्ध पर्यावरण, स्वस्थ्य जीवन, दीर्घ आयु' की संकल्पना साकार होगी |

परिचय : पर्यावरण सृष्टि निर्माण का वह तत्व है जिनके जीवन को जन्म दीया है | सूक्ष्म जीव से लेकर जीव एवं मानव जसेय जटिल प्राणी का निम्न पर्यावरण में मिलने वाले तत्वों से मिलकर हुआ है | पर्यावरण ने प्रथ्वी पर सुन्दर एवं दुर्लभ द्रश्य निर्मित किये है साठी ही सभी जीवो के जीवन को संचालित करने एवं आवश्यकता की पूर्ति की संभावनाएं प्रस्तुत की है |

मानव अवन पर्यावरण का गहन अन्तसंबंध है | मानव का निर्माण जिन पंचतत्वों से हुआ है वह पर्यावरण के भिन्न अंग है | तभी कहा जाता है -

धरा, जल, पावक, गगन, समीर
इही पंच तत्व रच अधम शरीरा

मानव वर्ग पर्यावरण के अनुसार अपने तथा अपने कार्य और क्रियाओं का अनुकूलन करता है एवं अपनी आवस्यकतायो की पूर्ति के लिए अपनी शक्ति तथा रूचि का उपयोग कर पर्यावरण में परिवर्तन करता है | जैसे - जैसे पर्यावरण के रहस्यों को जाना तथा विकाश किया तब - तब पर्यावरण में परिवर्तन हुए है |

मानव महत्वाकान्शी प्राणी है जिसकी लालसा कभी समाप्त नहीं होती अर्थात मानव जाती में वृधि होने के साथ - साथ ही आवश्कता बदती गई और पर्यावरण में न आवश्कताओ पूर्ति हेतु निरंतर परिवर्तन होते गए | आज मानव अपनी विकास की चरम सीमा पर है | अतः प्रयावरण की निश्चित सीमा को वह बहुत पहले ही पर कर चूका है | वर्तमान में पर्यावरण में होने वाले और अधिक परिवर्तन मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते है | वर्तमान समय प्रयावरण एवम् मानव के मध्य पुन: मधुर एवं स्वास्थ्य सम्बन्ध बनाने पर जोर देता है | मानव को प्रयावरण की सीमाए एवं अपनी स्वं की सीमाए जाननी होगी और सुस्थिर विकास की और ध्यान देना होगा | प्रयावारानिए तत्वों का संतुलन एवं गुणवत्ता बनाए रखने पर मानव स्वास्थ्य उत्तम होगा और स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है | अतः मानव सोच एवं विचार स्वस्थ प्राप्त होंगे| वर्तमान समय में विश्व स्तर पर पर्यावरण संरक्छ्न हेतु मानव की सोच को बदलने की आवश्कता है | प्र्यवर्निए तत्त्व जब मानव की सोच को बदलने की आवश्कता है | प्रयावार्नीय तत्त्व जब मानव को विकास करने की सभी सम्भवनाये प्रदान कर रहे है तो मानव का यह दायित्व बन जाता है की वह इन संभावनायो का समुचित उपयोग कर संरचित रखने का प्रयास करे | अतः आज मानव सोच एवं विचार पर्यावरण के अनुकूल होने चाहिए |

प्रस्तावना : विगत कुछ वर्षो से मानव एवं पर्यावरण के संबधो पर विशेष जोर दिया जा रहा है | पर्यावरण से संबधित समस्याओ का विश्व स्तर पर अध्यन किया जा रहा है | 1992 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा ब्राज़ील में आयोजित अन्त्रस्त्रिया कोंफ्रेस के पश्चात विकसित एवं विकासशील देशो ने पर्यावरण के विभिन पहलुओ को अत्यधिक महत्व दिया है |

भारत जैसे विकासशील देश में पर्यावरण पर महत्व देना अत्यंत आवश्यक हो जाता है | भारत में बदती जनसख्या अव्श्क्ताए , वन विनाश , जल समस्या , ओध्योगीकरण एवं सिमित उत्पादकता अदि में पर्यावरण को अत्यधिक प्रभावित व् प्रदूषित कर पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी की है |

उपलब्ध सिमित संसाधनों का किस प्रकार उपयोग किया जाये तथा होते वाली प्र्यवार्निये शती को किस प्रकार रोका जाये , यह वर्तमान में चुनोती पूर्ण कार्य है | पर्यावरण एवं मानव एक - दुसरे से गहन संबधित है परन्तु वर्तमान में यह विषय आज सामाजिक महत्व का बन चूका है | पर्यावरण है तो मानव जीवित है |अतः आज मानव को पर्यावरण के प्रति अपना दायित्व निभाना होगा | जो वह अपने माता पिता , संतान एवं अपने परिवार के साथ निभाता है | पर्यावरण को अपनी जिम्मेदारी मानते हुए उसके विकास के सभी प्रयास करना वर्तमान की आवश्कता एवं भविष्य की कुंजी है |

देश में पर्यावरण सचेतना को बढ़ाने के कई प्रयास किये जा रहे है | आवश्कता केवल इतनी है की इन प्रायशो को आगे बढाया जाए इस हेतु मानव को सोच बदलनी होगी और पर्यावरण के प्रति अपना सर्वोतम दायित्व का निर्माण करना होगा तभी मानव अपने स्वास्थ्य को उचित रख पायेगा साथ ही भविष्य में आने वाली पीढ़ी के लिए एवं स्वास्थ्यवर्धक पर्यावरण का निर्माण कर सकेगा |

विषय विवरण : पर्यावरण वह परिवर्ती है , जो मानव को चारो और से घेरे हुए है और मानव के द्वारा किये जाने वाले सभी कार्यो को प्रभावित करती है | पर्यावरण में केवल मानव ही वरन सभी जीव -जंतु पक्षी ,कीड़े - मकोड़े सभी बाहय तथ्य वस्तुए ,स्थ्थिया और दशाये अदि सभी सम्मिलित रहते है |

1.जर्मन विद्वान फिन्तिग के अनुसार - पर्यावरण का अर्थ जीव के परिस्थी कारको का योग (The totality of milieu factors of an organism) बतलाया है अर्थात जीवन की

1.Fitting A : Task and aim of comparative physiology on a geographical basis June 1922.

अतः स्पष्ट है की किसी भी जीव के निर्माण जन्म से लेकर जीवन की समस्त दशाओ , प्रक्रियाओ , आवश्यकताओ , विकास स्तर एवं म्रत्यु तक की प्रस्थिति पर्यावरण कहलाती है |

समस्त जीव जिन प्रभावकारी दशाओ के अन्तरगत जन्म लेते है निवास करते है | और अपनाजीवन यापन करते है उन सभी दशाओ के योग को पर्यावरण को कभी स्वतंत्र अवस्था में नही छोड़ सकता या मानव पर्यावरण से कदापि मुक्त नही हो सकता | पर्यावरण वह प्रक्रिया है जो मानव के जन्म से प्रारंभ होती है और म्रत्यु पर्यंत तक चलती है |

प्राचीन कल से ही मानव पर्यावरण एवं उसके विभिन्न तत्वों की उपासना करता आया है | आदिमानव द्वारा व्र्छो का पूजन , सूर्य , वायु , जल ,म्रैदा ,तथा अन्य प्राक्रतिक तत्वों व् श्रोतो का संभाग होता जा रा है | हिन्दू धरम में इन सभी तत्वों को देवता की उपाधि प्रदान की गई है साथ ही आवश्कता पड़ने पर इनकी प्रार्थना भी दी गयी है | अर्थात मानव प्राचीनकाल से ही पर्यावरण का उपासक रहा है | हिन्दू संस्कृति में

वेदों में वरचो के महत्व को भली भांति समझया गया है |

विगत कुछ वर्षों से मानव ने अपने विकास को सर्वोपरी रखा है और पर्यावरणीय दशाओं में परिवर्तन किया है। मानव ने अने कई कृत्यों से पर्यावरण की गुणवत्ता को हानि पहुंचायी है। पर्यावरण क्षति के कुछ कारण निम्न हैं-

1 बढ़ती जनसंख्या से संसाधनों पर दबाव बढ़ गया है।

2. संसाधनों के अतिदोहन से उनकी सीमित मात्रा पर संकट उत्पन्न हुआ है।

3. भीतिक सुख-सुविधा के साधनों ने पर्यावरणीय सुख को सीमित कर दिया है।

4. तीव्र औद्योगीकरण एवं यातायात साधनों के तीव्र विकाश ने पर्यावरण को दूषित किया है।

5. जनसंचार के विविध साधनों ने पर्यावरण की गुणवत्ता कम की है।

6. रसायनों के अत्यधिक उपयोग ने पर्यावरण में विषैलापन बढ़ाया है।
7. वन विनाश एवं भूमि का दुरुपयोग पर्यावरणीय दशाओं को कमजोर बना रहे हैं।
8.मानव की अधिक से अधिक प्राप्त करने की लालसा।

उक्त सभी मानव द्वारा विचारणीय विन्दु है। ऐसा नहीं है कि मानव को अपना विकारा करने से रोकना चाहिए बल्कि मानव को विकास की नवीन राह चुनने की वर्तमान में आवश्यकता है। एक ऐसा विकास जिससे समस्त चुनौतियों का सामना करते हुए पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सकें।

पोषणीय विकास इस संदर्भ में सर्वोत्तम उपाय है। पोषणीय विकास से तात्पर्य वर्तमान में समस्त आवश्यकतानुसार संसाधनों द्वारा सर्वोत्तम एवं अधिकतम सदुपयोग करना तथा मविष्य हेतु संसाधनों का संरक्षण करना है।

पोषणीय विकास को विभिन्न विद्वानों ने सुस्थिर विकास, समृन्त विकास, सुदीर्घजीवी विकास, निरन्तर विकास आदि कई नामों से परिभाषित किया है। वर्तमान में मानव के विकासके साथ-साथ आवश्यकताएँ मांग बढ़ रही है। अत इसमें न केवल संसाधनों का अधिक दोहन हो रहा है वरन् सीमित संसाधनों एवं पर्यावरणीय दशाओं पर दबाव बढ़ रहा है। अतः आज सुदीर्घजीवता की अवधारणा को अपनाने की अत्यंत आवश्यकता है। इस हेतु निम्न बिंदु महत्वपूर्ण हैं-

1. वर्तमान में बढ़ रही जनसख्या की आवश्यकता की पूर्ति करना है।
2. जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में संसाधनों के उपयोग में वृद्धि करनी है।
3. जनसंख्या वृद्धि अनुसार पर्यावरण की दशाओं को सुनिश्चित करना है।
4. मांग, आवश्यकता एवं पर्यावरणीय तत्वों के मध्य सामंजस्य स्थापित करना है।
5. अत्यधिक दबाव के कारण बढ़ते प्राकृतिक प्रर्यावरणीय खतरों को दूर करना है।
6. मानव स्वास्थ्य और भावी पीढी को सुरक्षित व स्वस्थ रखना है।
7. मानव को आत्म निर्भरता के साथ-साथ पर्यावरणीय गुणवत्ता में भी वृद्धि करनी है।

उक्त सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सुदीर्घजीविता की अवधारणा को अपनाना अत्यन्त आवश्यक है। मानव को परम्परागत तरीकों व संसाधनों के उपयोग को सीमित करना होगा तथा वैकल्पिक संसाधनों को खोजना होगा। यह वैकल्पिक संसाधन इस प्रकार होने चाहिए जिनसे न केवल आवश्यकता की पूर्ति की जा सके वरन् पर्यावरणीय दशाओं को भी इनसे कोई खतरा न हो।

आज उच्च तकनीक एवं नवीन सूक्ष्म तत्व खोजों ने मानव को इस योग्य बनाया है कि वह पुनः उन सभी दशाओं, तत्वों एवं परिवृत का सरक्षण करें जिनसे मानव का निर्माण हुआ है और जीवन का संचालन होता है।

भारत देश में सुदीर्घजीवता की सफलता 19वीं शदी के छठवें दशकसे प्रारंभ हुई। सन् 1965-67 के मध्य हरित कान्ति के विकास ने न केवल भूमि के पूर्ण उपयोग, जल संरक्षण को सुनिश्चित किया वरन् पर्यावरणीय दशाओं पर निर्भरता को भी कम कर दिया। परंतु

मानव की लालसा निरन्तर बढ़ती गई जिसके फलस्वरूप भूमि से अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करने के कारण रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग, रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग बढ़ा फलस्वरूप भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता निरन्तर कम होने लगी और भूमि पर दबाव बढ़ने लगा। इससे भूमि की उर्वरता निरन्तर कम होने लगी आज भूमि बंजर होने की कगार पर पहुंच चुकी है तथा पर्यावरण निरन्तर विशैग होता जा रहा है।

पर्यावरण हेतु सुदीर्घजीवता की अवधारण अपनाने हेतु निम्न उपाय संभव है।

1. भूमि का अधिकतम उपयोग के साथ-साथ जैविक उर्वरकों एवं जैविक कीटनाशकों का उपयोग करना।
2. जल संरक्षण हेतु बूंद-बूंद सिंचाई, फव्वारा सिंचाई एवं व्यर्थ बढ़ते जल को एक स्थान पर रोककर भूमिगत जल स्तर में वृद्धि करना।
3. नवीन उच्च उत्पादन क्षमता वाले बीजों का उपयोग जिनमें कम जल व उर्वरक की आवश्यकता होती है।
4. फसलों का समुचित हेर-फेर अपनाना।
5. वृक्षों की कटाई पर पूर्ण प्रतिबंध के साथ व्यर्थ भूमि पर वृक्षारोपण, सड़कों के किनारे वृक्षारोपण, औद्योगिक क्षेत्रों के चारों ओर वृक्षारोपण, वृक्षारोपण व पालन में जन सहयोग।
6. भूमि के अनुपात में 33 प्रतिशत भाग पर वृक्षारोपण आवश्यक है।
7. प्राचीन जल स्रोतों का संरक्षण।
8. औद्योगिक क्षेत्रों के अवशिष्ट का निराकरण कर एक स्थान पर एकत्रित कर उसका सदुपयोग करना।
9. कल-कारखानों व यातायात साधनों से निकलने वाली विषैली गैसों का संधारण करना।
10. पर्यावरण हेतु खतरनाक तत्वों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया।

11 जनसंख्या पर प्रभावी नियंत्रण।

12. मानव की महत्वाकांक्षा को पर्यावरण के अनुसार बदलने की आवश्यकता है।
13. संसाधनों के चकीकरण पर बल देना।

14 संसाधनों का आवश्यकतानुसार पूर्ण सदुपयोग सुनिश्चित करना।

15. बंजर भूमि पर वृक्षारोपण कर कृषि योग्य बनाने का प्रयास करना।
16. नदियों में प्रवाहित जल को प्रदूषण से बचाना तथा बहाव क्षेत्र को संरक्षित करना।
17. वर्षा जल क्त संग्रहण व संरक्षण करना।

पर्यावरण के प्रति मानव द्वारा सुदीर्घजीवता की अवधारण को अपनाने से पर्यावरणीय दशाएँ सशक्त होगी और मानव स्वास्थ को और अधिक स्वस्थ बनाएगी। इससे प्राकृतिक आपदाएँ सीमित होगी, पर्यावरण स्वस्थ रहेगा, मानव औसत आयु में वृद्धि होगी और भविष्य में आने वाली पीढ़ी का स्वस्थ वातावरण में जन्म होगा।

पर्यावरण स्वस्थता से मानव के आचार-विचारों में सरलता उत्पन्न होगी और मानव किवंसक कार्यों से दूर रहेगा। इससे मानव जीवन की सुदीर्घजीवता की कल्पना साकार होगी।

जिस प्रकार मानव प्राचीनकाल में प्राकृतिक तत्वों के अधिक नजदीक रहता था तथा अपना भरण-पोषण प्राकृतिक नियमों अनुसार संपन्न करता था। उस समय मानव की तुलना आज के मानव से कदापि नहीं हो सकती। आज मानव महत्वाकांक्षा, भोग विलासिता एवं भौतिक सुख सुविधाओं में शांति की तलाश कर रहा है जो उसे कभी प्राप्त नहीं हो सकती। यही कारण है कि वह अशांत होकर अपने जीवन को धीरे-धीरे समाप्त करता जा रहा है। यदि मानव की यही किया-विधि चलती रही तो वह दिन दूर नहीं जब पृथ्वी पर से मानव जाति, अन्य जीव-जन्तुओं की भांति विलुप्त हो जाएगी क्योंकि पर्यावरण संसाधनों एवं प्राकृतिक दशाओं के बिना मानव जीवन संभव नहीं है। यह दशाएँ कितनी विकृत होंगी मानव अपने जीवन के लिए उतने ही खतरें उत्पन्न करेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Fitting A Tasks and Aim of comparative physiology on a geographical basis, June 1922
2. Tansley A. G. practical plant ecology London 1926
3. Herskovits-M.J. Man and his work's New York 1948
4. Brunhes: Jean Human Geography 1934 (English Translation 1952)
5. Vidal delablache: Le principle dela geographic general 1896
6. Kaushi, S.D. Environment and Human progress 1956
7. Kaushik, S.D. संसाधन एवं पर्यावरण रस्तोगी पब्लिकेशन्स मेरव-2012-13
8. Lal, D.S.-Climatology - sharda pustak bhawan - Allahabad - 2013
9. Ayyar, N.P. 1972 Crop regions of M.P.: A case study in graphical review of india.
10. आयर एस.
11. आर. 1983 वेजीटेशन एण्ड स्वाइल्स एण्ड वर्ल्ड पिक्चर लंदन
12. आर्थर यंग (1770) पर्यावरण एवं फसल प्रारूप इंग्लैण्ड
13. Husain M. 1976 Agriculture productivity of india An Exploratory Analysis
14. Hugat, H.J. 1968 The origin of agriculture in Africa: The Sahara
15. शर्मा, के. अरूण 2015 जैविक खेती नई दिशाएँ एग्राबायोस (इण्डिया) जोधपुर
16. Reddy S.R. 2017-Principal of organic farming Kalyani pub., New Delhi
17. Rajan, Basak 2008-A Text Book of Organic Farming Practice - Kalyani pub., Ludhiana

EMAIL ID=drmanojdixit3780@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 147-149
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बदीउज़्ज़माँ के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति : एक अवलोकन

खुशबू सिन्हा, शोधार्थी,
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

1. शोध सार

उपन्यास जीवन की विस्तृत व्यवस्था है। जीवन–जगत के अनगिनत पहलुओं को उपन्यास अपने में समेटती है। वास्तव में, उपन्यास का कथानक अपने आप में ऐतिहासिक दास्तां बयाँ करता है। बदीउज़्ज़माँ एक ऐसे ही उपन्यासकार हैं, जो ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का सहारा लेकर हिंदू–मुस्लिम एकता की कहानी कहते हैं। बदीउज़्ज़माँ का पूरा नाम सैय्यद मोहम्मद ख़्वाजा बदीउज़्ज़माँ था और बिहार के गया जिले के रहने वाले थे। ये बिहार की पृष्ठभूमि से आने के कारण 'हिन्दू–मुस्लिम' संस्कृति को बेहतर तरीके से समझ पाए, और उसे अपने उपन्यास में पिरोया। बदीउज़्ज़माँ के चर्चित उपन्यासों में 'एक चूहे की मौत', 'छाको की वापसी', 'अपुरुष', 'सभा पर्व' और 'छठा तंत्र' सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। बदीउज़्ज़माँ का 'सभा पर्व' उपन्यास तो इस्लाम धर्मावलंबियों और हिंदुओं का जीता–जागता ऐतिहासिक दस्तावेज़ है।

बीज शब्द : हिंदू–मुस्लिम, संस्कृति, भारतीय, धर्म, विभाजन, पाकिस्तान।

उपन्यास के फ्लैप से उद्धृत यह उदाहरण अति महत्त्वपूर्ण है–

"धर्म बदले, सिद्धान्त बदले, सत्ता के लिए जद्दोजहद के तरीके बदले लेकिन सत्ता का बुनियादी स्वरूप नहीं बदला। बनी हाशिम–बनी उमय्या, शीया–सुन्नी, हिन्दू–मुस्लिम, बौद्ध धर्म–ब्राह्मणवाद संघर्ष के मुखौटे बदलते रहते हैं। इंसानी प्रवृत्ति नहीं बदलती। सैकड़ों साल के सफर के दौरान ये उपन्यास समाज के विभिन्न वर्गों का एक जायजा लेता है।"[1]

भारतीय जनजीवन के सांस्कृतिक विकास के अतीत से वर्तमान तक की व्याख्या बदीउज़्ज़माँ तर्क और संदर्भ के साथ करते हैं। वे लोक जीवन में रचे–बसे प्राण तत्व को आत्मसात् करते हैं। बदीउज़्ज़माँ के उपन्यासों का नैरेटिव धर्म को आस्था की ओर न ले जाकर 'कार्य–कारण सम्बंध' की ओर ले जाता है। बदीउज़्ज़माँ धर्म के उस आंतरिक पहलू तक पहुँचते हैं, जहाँ से धर्म जन–जन में प्रवेश करता है। वास्तव में, बदीउज़्ज़माँ इसके विशेषज्ञ हैं।

'सभा पर्व' उपन्यास की प्रस्तावना में 'भारतीय संस्कृति' की रोचक व्याख्या करते हुए कहते हैं– "इस देश में जाने कितनी जातियाँ आईं। ये सभी आक्रमणकारियों के रूप में ही आईं। आर्य आए, यूनानी आए, हूण आए, तुर्क आए, अफ़गान आए, मुग़ल आए। लेकिन सब इसी देश के होकर रह गए। सब इस तरह घुल–मिल गए कि इनकी अलग कोई पहचान न रह सकी। इन सबने ही मिलकर एक समन्वित सामाजिक संस्कृति का निर्माण किया जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं।"[2] हिंदू का यह स्वीकार करना कि भारत की मिट्टी और आबो–हवा ने सभी को आश्रय दिया है, यह बड़ी बात है। यदि वह स्वीकार करने वाला मुस्लिम हो तो और भी बड़ी बात है। बदीउज़्ज़माँ ऐसा कहते ही नहीं हैं बल्कि लिखते हैं, ताकि दस्तावेज़ के रूप में संकलित हो जाए। 'सभा पर्व' उपन्यास का कथावचक 'मैं' शैली में बात करता है, जो बदीउज़्ज़माँ स्वयं थे। बदीउज़्ज़माँ अपने संस्मरण से उपन्यास के कथानक को गढ़ते हैं। कथावाचक अपने ही परिवेश से कथा को जन्म देकर भारतीय संस्कृति की ऐसी तस्वीर खींचते हैं कि वह अविस्मरणीय बन जाती है। 'सभा पर्व' का संपूर्ण कथानक जीवंत है क्योंकि नैरेटिव का कोई भी अंश किसी के खिलाफ नहीं है। लोकमंगल की कामना से प्रेरित हो लिखा गया है, उपन्यास 'हिन्दू–मुस्लिम' एकता का जीता–जागता दस्तावेज है। पूरे उपन्यास में कई कथाएँ आपस में गुथम–गुथा की हुई हैं। एक ओर जनावाम की हलचल है तो दूसरी ओर सरमद–दाराशिकोह जैसे

सूफी–संतों के कई दृष्टांत उपलब्ध हैं। फरीद मियाँ, रशीद चचा, बालेसर चचा और जयपाल आदि के बोल–चाल, लड़ाई–झगड़ा आदि आप में अतिरिक्त रूप से घुलमिल गए हैं। इस संदर्भ में एक उदाहरण देखा जा सकता है– "बालेसर चचा के घर पर आकर मुझे लगता जैसे मैं किसी और दुनियां में आ गया हूँ। घर के कण–कण से खुशहाली और समृद्धि फूटती थी। ....जब तक वह गया में रहे महीने में एक बार जरूर ही उनकी हमारे यहाँ दावत होती थी। उनके लिए खासतौर से पराठे, महबूबी कोरमा और कबाब तैयार किए जाते। बालेसर चचा खूब चटखारे से लेकर खाते और साथ ही अब्बा से मजाक करते जाते– "अरे रहमान तेरी बीबी तो सचमुच बहुत लजीज खाना बनाती है। इसे तो मेरी बीबी होना चाहिए था।" यह सब कही ऊँची आवाज में कहते ताकि अम्मा भी उनकी बात सुन सकें। अम्मा कुछ झेंपती हुई कहती देखो भडुवे को गाली दे रहा है हमको। इसे खाना भी खिलाओं और गाली भी सुनो।"[3] भारतीय साझा संस्कृति का इससे बेहतर उदाहरण कहाँ मिलेगा। यह उपन्यासकार का भोगा हुआ यथार्थ है।

बदीउज़्ज़माँ का एक दूसरा उपन्यास है– 'वापसी', जिसका प्रचलित नाम है– 'छाको की वापसी'। यह उपन्यास मुस्लिम समाज की संरचना, गठन, जातियाँ, स्मृतियाँ, आस्था और विश्वास के कुल योग का बेजोड़ मिश्रण है। वास्तव में छाको एक धुरी है, जिस पर घूम रही है एक भरी–पूरी दुनियां। एक समूची कौम की जेहनियत और जिंदगी। बीच में जो विभाजन की रेखा दिखाई देती है, वह हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच से होती हुई दोनों देशों के शासकों और जनता वर्ग के बीच सुस्पष्ट पहचान कराती है। पूरा का पूरा उपन्यास मनुष्य के अस्तित्व से जुड़ा है। 'छाको की वापसी' का उद्घोष देश प्रेम को नये तरीके से व्यक्त करता है। सरहदों और सीमाओं में बँधी नागरिकता का एक प्रति विमर्श रचते हुए यह उपन्यास जिंदगी और जमीन के कहीं गहरे, लगभग शाश्वत रिश्ते की ओर पुरजोर इशारा करता है। कुल मिलाकर, यही वह रिश्ता है जो आखिकार मानव–सभ्यता के विकास का बीज बनता है। 'छाको की वापसी' उपन्यास में बिहार में बसने वाले मुस्लिम समुदाय के दर्द, पीड़ा एवं संत्रास का बेहतरीन अंकन किया गया है। गाँधी भाई एवं हबीब भाई जैसे इस उपन्यास के पात्र देश की दो विपरीत धाराओं भारतीय राष्ट्रवाद और इस्लामी राष्ट्रवाद में आस्था रखते हैं। उपन्यास का वह अंश उद्धृत करने योग्य है– "जाने वालों में तकरीबन सबके सब पढ़े–लिखे नौकरी पेशा लोग थे या वे लोग थे जिनके पास काफी रुपया–पैसा था। हमारे मुहल्ले के हाजी अब्दुल करीम पाकिस्तान बनने के तुरंत बाद ही ढाका चले गए थे और सुनते हैं वहाँ उनका लाखों का कारोबार है।"[4] भारत विभाजन, फिर पाकिस्तान से बंगला देश का विभाजन विश्व के पटल पर बड़ी घटना थी, जिसका प्रभाव पूरे एशिया महाद्वीप पर आज तक देखा जा सकता है। भारत का सबल पक्ष यह रहा है कि यह देश "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना को अपने में समाहित करता है। इसी कारण से अपने देश को हम विश्व के मानचित्र पर 'धर्मनिरपेक्षता का घर' के रूप में देखते हैं। बदीउज़्ज़माँ जैसे उपन्यासकार समाज में या देश में फैले धार्मिक अंधकार को बेहिचक, बेखौफ दूर करते हैं। वे इंसानियत के हक में हैं, इसी कारण से मुसलमानों की क्रूरता या उन्माद पर भी कटाक्ष करते हैं। महात्मा गाँधी की परिकल्पना थी कि भारत धर्मनिरपेक्ष बने, यह परिकल्पना संकल्प बनते–बनते रह गई और गाँधी के सपनों का भारत कहीं गुम हो गई। 'धर्म' सत्ता पाने का रास्ता बन गया। यह कहानी आजादी के साथ ही तेजी से चल रही हैं। सर्वधर्म सम्भाव की भावना समाप्त होती दिखती है। ऊपर से हम सभी एक हैं लेकिन अंदर से बँटे–बँटे। इसी कारण से बदीउज़्ज़माँ अपने उपन्यास 'छाको की वापसी' में लिखते हैं–

"यह कितनी अजीब बात है और किस कदर बेतुकी भी कि आदमी का लिबास और पहनावा ही उसकी जिंदगी का फैसला कर दे। आपको जिंदा छोड़ना है या आपको मौत के घाट उतार देना है, इसका फैसला आपके पहनावे को देखकर किया जाए। दंगा सिर्फ गैर–इंसानी काम ही नहीं। इसके कुछ बेहद और बेतुके और मजहकाखेज (हास्यास्पद) भी हैं। यह मैंने पहली बार महसूस किया।"[5] बदीउज़्ज़माँ अपने उपन्यासों के कथानक में विशुद्ध रूप से धर्मनिरपेक्ष भारत की तस्वीर खींचते हैं। इनके उपन्यासों के लगभग सभी मुस्लिम पात्र भारतीय होने के गौरव से अभिभूत हैं।

बदीउज़्ज़माँ साहब का एक अन्य उपन्यास 'एक चूहे की मौत' है। यह उपन्यास निरन्तर गिरते हुए इंसानी मूल्यों के प्रति एक व्यापक चिन्तन है। यह उपन्यास एक फंतासी के माध्यम से एक ऐसी समाज–व्यवस्था का चित्रण करता है जो पूरी तरह मानव–विरोधी है और जिसमें मानवीय गरिमा तथा मानव अस्तित्व दोनों ही मूल्यहीन हो चुके हैं। उपन्यास के कथानक में भले ही फंतासी हो परंतु स्थिति चित्रण वास्तविक है। 'छठा तंत्र' बदीउज़्ज़माँ का चर्चित उपन्यास है। इस उपन्यास के बारे में बदीउज़्ज़माँ स्वयं कहते हैं–

"ईरान के मध्युगीन फारसी कवि ओबैद जाकानी की एक अत्यंत लघु काव्य कथा है– 'मूशोगु–खा' जिसमें चूहे एक जालिम बिल्ली से युद्ध करते हैं और उसे गिरफ्तार कर लेते हैं। लेकिन जब वह चूहों के सरदार के सामने लायी जाती है तो वह झपट्टा मारकर चूहों के सरदार को दबोच लेती है और उसे खा जाती है। चूहे भयभीत होकर भाग खड़े होते हैं। इस कथा के कुछ प्रसंगों और पंचतंत्र की एक कथा के प्रसंगों में आश्चर्यजनक समानता है।"[6]

निष्कर्षतः हिन्दी उपन्यास में बदीउज़्ज़माँ के उपन्यास भारतीय संस्कृति भारतीय संस्कृति और मानव मूल्य को स्थापित करने वाले मानक उपन्यास हैं। लोक और संस्कृति इनके उपन्यास के प्राण तत्व हैं। इन्होंने भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने का भरपूर प्रयास किया है।

संदर्भ सूची :

1. बदीउज़्ज़माँ, *सभा पर्व*, शब्दकार, दिल्ली 1994, पृ०सं०–फ्लैप से
2. *वही*, प्रस्तावना से
3. *वही*, पृ०सं०–47
4. बदीउज़्ज़माँ, *छाको की वापसी*, हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, शाहदरा, दिल्ली, 1980, पृ०सं०–13
5. *वही*, पृ०सं०–77
6. बदीउज़्ज़माँ, *छठातंत्र शब्दकार*, दिल्ली, 1977, पृ०सं०–04

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 150-153
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कबीर दास के निर्गुण भक्ति काव्य में रहस्यवाद के अंश

कविता यादव, नेट हिंदी साहित्य,
ग्राम मौसमपुर पोस्ट गोठड़ा तहसील तिजारा जिला खैरथल तिजारा

शोध सारांश

कबीर दास के दर्शन निर्गुण भक्ति के प्रबल उपासक थे । उन्होंने रहस्यवाद के साथ भावनात्मक, आध्यात्मिक और लौकिक जीवन के परम सत्य को व्यवहारिक जीवन से जोड़कर रहस्यवाद के साथ निर्गुण ब्रहम के स्वरूप को अपनी भक्ति में अदृश्य शक्ति को स्थान दिया है। जो हमारी संपूर्ण प्राकृतिक शक्ति का आधार है जो व्यक्ति निर्गुण भक्ति के रहस्य को जान जाता है । वह परम आनंद को भी अनुभूति को प्राप्त करता है इस अनुभूति को निरंकार ब्रहमा जगत में व्यक्त करने का प्रयास करता है । किंतु इसमें बहुत कठिनाई भी होती है लौकिक भाषा जगत में वस्तुतः के आनंद को प्रति के माध्यम से व्यक्त करना होता है जो आमजन के लिए रहस्य बन जाता है तथा इस गुड रहस्य ब्रहमा जगत को समझने के लिए परमपिता परमात्मा का ध्यान लगाना होगा जिसकी नजर में सभी जीव एक है और वह निरंकार भी है ।

संकेत अक्षर- रहस्यवाद, निर्गुण,चंद, सूर, नाद, बिंदु

रहस्यवाद की प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में रहस्यवाद का उद्धव सर्वप्रथम मध्यकाल में कुछ अंश मिलते हैं जो भी संत निर्गुण काव्य धारा के प्रबल समर्थक थे वह रहस्यवाद के बिल्कुल निकट था । जिसमें कबीर का नाम विशेष रूप से जाना जाता है कबीर यहां प्रेम मार्ग काव्य धारा में रहस्यवाद के अंश मिलते हैं कबीर जी निर्गुण ब्रहम के ब्रहमा को जानकर परम सत्ता से जुड़ना चाहते थे और उसमें लीन होना भी उनके प्रमुख लक्ष्य था कबीर जी भक्ति में योग का महत्व भी देते थे इसलिए कबीर दास जी रहस्यवाद के अंतर्मुखी वह साधनात्मक रहस्यवाद की अनुभूति को बहुत ही अच्छी तरह से जानते थे और यह सभी मानव जाति को एक मानते हैं । पूजा पाठ में विश्वास नहीं करते थे यह तो सिर्फ निरंकार सत्य को जानने के लिए गुरु का महत्व को जरूर मानते थे जो हम उसे रहस्य का मार्ग दिखाने में हमारी सहायता करें।

कबीर दास के रहस्यवाद में प्रेम के अंश

कबीर दास के रहस्यवाद निरंकार में अलौकिक सत्ता के प्रति अनुराग और उसे अलौकिक सत्ता के प्रति दृढ़ आकर्षण प्रतीत होता है। जिसमें वह निरंकार ब्रह्मा के प्रति विरह-वेदना आनंद का भाव से विभोर हो जाता है।

कबीर दास के भक्ति काल में रहस्यवाद

कबीर दास जी भारतीय ब्रह्म वाद के भक्ति के साथ सूफियों के रहस्यवाद, भावात्मक हटयोगिता के कर्म फल के साथ साधनात्मक रहस्यवाद का उद्घोष मिलता है। वह वैष्णव के अहिंसावादी व वाणी में दिखाई देने वाली नम्रता जैसे सांकेतिक रहस्यवाद की गरिमा से मन में गूड़ रहस्य को जानने की इच्छा जागृत होती है। **सांकेतिक शब्द जैसे चांद नाद और बिंदु सूर आदि अमृत, औधा, कुआ को लेकर अद्भभुत रुपक बाधे है जो सामान्य जनता की बुद्धि पर पूरा आतंक जमाते हैं। जैसे-**

" सूर समाना चंद में दहु किया घर एक।
मन का चिंता तब भया कछु पुरबिला लेख |
आकासे मुखी औधा कुआ पाताले पनिहारी ।
ताका पाणी को हंसा पीवै बिरला, आदि बिचारि ।

- कबीर की चुटीली और व्यंग - चमत्कारपूर्ण बातें निकलती है इनकी उक्तियो में विरोध और असम्भव का चमत्कार लोगो को बहुत आकर्षित करता है, जैसे

"बकरी पाती खात है ताकी काढी खाल।
जो नर बकरी खात है तिनका कौन हवाल ।"

रहस्यवाद भी निर्गुण ब्रह्म पर ही आश्रित है। निर्गुण भक्ति के आलोक में रहस्यवाद का अध्ययन करने पर उसका स्वरुप सहज ही स्पष्ट हो जाता है। जब निर्गुण भक्ति में माधुर्य भाव का समावेश होता है, तब रहस्यवाद का उदय होता है। काव्य के धरातल पर माधुर्य भाव की अभिव्यक्ति करने के लिए नायक और नायिका के रूप में साधक और साध्य की परिकल्पना अनिवार्य हो जाती है। रहस्यवाद में ब्रहम और आत्मा के सम्बन्धी को प्रतीको के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। ये प्रतीक इसी लोक के नर व नारी के रूपो में होते हैं। **कबीर ने रहस्यानुभूति को एक सामान्य 'दुलहिन ' के माध्यम से व्यक्त किया है। "दुलहिन गावहु मंगलाचार ।"**

कबीर ने अपने परमात्मा को अपने आप में ही देखा है और हियोग की साधना में ब्रह्माण्ड और परमात्मा को अपने शरीर के भीतर ही पाया है? सब माही, दुसरा नही। "साधो सब रुप अपने मन विचार के देखो, कोई - सूफी साधना पद्धति में भी गुरु का वही महत्व है, जो साधना की अन्य पद्धतियो में है। साधन का मूल रूप भी वैसा ही है । सांसारिक प्रपच से ऊपर उठकर अलौकिक सत्ता की प्राप्ति के लिए साधना

करना । इस साधना के विघ्न भी संतो एव भक्तो के चिर परिचित शत्रु-काम क्रोध **आदि** है; जिन पर विजय पाये बिना साधक सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। रहस्य का उपासक ह्रदय में सामंजस्यमूलक परमतत्व की अनुभूति करता है और वह अनुभूति परदे के भीतर रखते हुए दीपक के समान अपने प्रशांत आभास से उसके व्यवहार को स्प्रिंग्धता देती है। - पद्मावत में जायसी ने हीरामन तोते के रुप में गुरु का संकेत किया। रत्नसेन द्वारा राज्य, पत्नी आदि का त्याग संसार में विरक्ति का सूचक है। और पद्मावती के रुप वर्णन में व्यापक और विराट परम शक्ति का **संकेत** मिलता है। जायसी ने पद्मावत को प्रतीको के माध्यम से बाधा है।

यथा- "तन चितवर चितउर मन राजा कीन्हा,
हिय सिंघल रानी बुद्धि पद्ममनी चिन्हा।
पंथ दिखावा, गुरु सुआ जेई पावा,
बिनु गुरु जगत को निर्गुण पावा।
यहा पद्मावती बुद्धि,और रत्नसेन मन का, तोता गुरु का प्रतीक है

निष्कर्ष

निर्गुण भक्ति तथा रहस्यवाद के प्रेम की सीमा वही है जो ज्ञान मार्ग की पराकाष्ठा से सुशोभित है। निर्गुण ब्रह्म को ही अपना आराध्य के स्वरूप में स्वीकार करने का अवसर के साथ परिणाम भी देखा जाता है। साधना की कठोर नीति के पालन से मनुष्य सीमित क्षेत्र के भीतर विकास नहीं कर सकता है। इसलिए सगुण में निर्गुण भक्ति के रहस्यवाद का आलंबन के रूप में ग्रहण करना चाहिए। फिर निर्गुण और आकर्षक कबीर दास का अत्यंत व्यापक था । जिस प्रकार अधिकांश व्यक्ति ज्ञान के मार्ग से अलग होकर नहीं चल सकते । इस प्रकार निर्गुण भक्ति के रहस्यवाद की भावना को भी अलग नहीं किया जा सकता है कबीर दास जी पर शंकराचार्य के ज्ञान मार्ग अदेतवाद की पूरा प्रभाव था। जो स्पष्ट दिखाई देता है जो जीव ब्रह्म के पूर्ण एकता में विश्वास रखते थे

हेरत हेरत हेरिया रहा कबीर हीमाय समानी समुद्र में सोत हेरी जाए

संदर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास- पंचशील प्रकाशन जयपुर आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृष्ठ संख्या- 5657 76
2. हिंदी साहित्य के इतिहास- डॉक्टर हरदयाल व डॉक्टर नागेंद्र प्रकाशन हरसा प्रेस एवं प्रिंटर्स मानसरोवर नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 112, 113, 538, 539 ,540
3. हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास- बाबू गुलाब राय प्रकाशन लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा, पृष्ठ संख्या- 228, 229, 230

4. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास- विश्वनाथ त्रिपाठी प्रकाशन ओरिएंट ब्लैक स्वां प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 28, 29, 30
5. तिवारी रामचंद्र "कबीर मीमांसा" प्रकाशन लोक भारती संस्करण 1996 पृष्ठ संख्या- 45
6. वर्मा राजकुमार "संत कबीर पद" 54 पृष्ठ संख्या 57
7. द्विवेदी हजारी प्रसाद "कबीर प्रस्तावना" पृष्ठ संख्या 11
8. अनंत दास "कबीर परिचय" पृष्ठ संख्या 25

मो.- 8432691616 Email.id.- kavitayadav14688@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 154-159
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Myriad Shades of The Urban Consciousness in Ezekiel's Select Poems

Apoorva, Research Scholar, Department of English,
M.J.P Rohilkhand University Bareilly (Uttar Pradesh), India

ABSTRACT

The following paper is a critical take on the portrayal of city life in Ezekiel's select poems. City is a palimpsest. In his poems it is a prolonged metaphor of life itself. City is an epicenter of the modernist existence. The problems, opportunities, possibilities, advantages and disadvantages of a city are too many to count. Urban space becomes intriguing as it is a site of ever occurring flux. It is a place where everything is way too subjective. City becomes the melting point of many subjectivities. The city acts as a catalytic interface and Ezekiel's poetry.

Ezekiel in the below examined poems looks at the city from various angles. Sometimes the city looks as the place of hopelessness, sometimes it is the place of moral decadence. Somewhere the poet sees it as direct contrast to the innocent countryside and sometimes it becomes a shelter to the poor voiceless consciousness. Therefore, it can be said that the urban in Ezekiel is a meeting point of various intriguing contours. The paper attempts to examine 'Notes', 'The Truth about Dhanya', 'The Double Horror', 'Urban', 'A Morning Walk', 'A Warning' and 'At the Hotel'.

Keywords : Urbanity, urban experience, citified consciousness, assimilation, inclusiveness, urban space

> I wonder through each chartered Street,
> Near where the chartered Thames does flow,
> And mark in every face, I meet
> Marks of weakness, marks of woe. (William Blake)

The following paper is a critical take on the portrayal of city life in Ezekiel's select poems. City is a palimpsest. In his poems, it is a prolonged metaphor of life itself. City is an epicenter of the modernist existence. The problems, opportunities, possibilities, advantages and disadvantages of a city are too many to count. The lines in the epigraph of this paper are of Blake's poem, London. The poet is wandering on the streets of London and every face he comes across has undergone negative transformation. Frailties are registered all over the faces and each face tells a story of misery and suffering. The lines of the epigraph cast a very bleak view of the city. The lines speak of complete pessimism. They are a silent screaming picture of the gloom ridden in London. The use of the expression 'every face' carries the weight of all pervasive affliction in melancholy.

Urban space becomes intriguing as it is a site of ever occurring flux. It is a place where everything is way too subjective. Webber rightly observes, in city, "each sees something different from what the other sees." (Webber, P. 79). It is all about the stimuli and response as they differ. The city responds to various stimuli and sometimes the city itself is the stimuli to its inhabitants. It can be easily seen that the urban space in the Ezekiel's world is never passive and never neutral. The urban center responses and reacts beyond conventional sense. Mostly city is seen as a special setting in a text but Ezekiel's poetry treats it in a much more nuanced way. It does not simply act as a background and if it does act so it communicates a lot-even the unsaid. The inhabitants of the city are from all possible walks of life. City becomes the melting point of many subjectivities. To substantiate this view, KM Pandey in his book, *City as Kaleidoscope*, observes, "the city is one of the most powerful symbols of a complex society." (Pandey, P. 14)

Ezekiel's select poems under studying this paper, speak of complicated urban sentience. He is a poet who seems quite interested in the perusal of city dwellers. Taranath and Belliappa in this context notice, "Nissim Ezekiel's poetry offers a fascinating field of study to anyone interested in the complexities of contemporary urban existence in India. (1966, flap).

The 'urbanized' finds expression in his poems. He is interested in the flight and predicament of city inhabitants. In his poem 'Notes', there are three micro narratives entailed. In the first part, 'They', the couple is so inhuman that they show no sensitivity and involvement towards the child and the beggar. They are lost in their own little world and

"Passed another beggar
And her new born child" (Collected Poems, P. 172)

Ezekiel's city has no place for the beggar and an infant. The city makes one so cold and indifferent that it does not remain inclusive. Another part she captures sleeplessness nights, insomnia and even the fear of coming back to home via the same old dreary dismal way.

'Fear of ride home
By the same cheerless bus route' (Collected Poems, P. 172)

The choice of words 'fear', 'same cheerless' is pretty suggestive. Fear and cheerless have negative connotations and same hints at the monotony of the city life.

The third part in the poem suggest the play of hope and pity. The person 'He' looks for talents and inspiration all across the city. The city is not very kind with possibilities.

'Mid March, 1974
I search for my talents
Scattered with my kisses
All over the barren city' (Collected Poems, P. 173)

Does the barren city promise any hope? Why is he searching in the barren city? Why is the city barren? What has made it barren and is it in response making its inhabitants also barren? Ezekiel perhaps indirectly, is raising seminal questions on what does barrenness of the city lead to? The infertility of the city as a space consumes the spirit of its dwellers.

Three parts 'They', 'She' and 'He' also bring up another very important question. Why are all three sub parts third person pronouns? Are they he and she all being observed by a city stroller is the objectivity intact in the flaneur's observation? Is there a possibility of the object of observation being an observer? Who is being observed by whom in Ezekiel's city?

Ezekiel sees city as a space that offers media possibilities. One is also seen to be left to one's own mercy. Nobody comes to the rescue. One is one's own hero. Through the representation of decadent subjects and subjectivities that occupy the landscape of the city, the poet also foregrounds the oppressed. His poetry on city, culls out ordinary and the marginalized as well. In his poem. 'The Truth about Dhanya.' the poet lends voice to the unacknowledged of the society. The poem represents a man drowned in poverty, but he chooses dignity over the pitiable existence. He does not settle for a life of dependency and instead chooses to sacrifice himself and puts his own self to use. This kind of self-sacrifice finds a deserving place in the poet's poetry. He observes the poverty stricken man and poignantly puts the man's plight in the following words:

'His old skin.
Is like the ground.
On which he sleeps.
So also his rags. (Collected Poems, P. 169)

The poet considers the voiceless poor man and acknowledges his labour that saves him from a life of shame and absolute dependency. Although he is physically deformed, but he gives his services to ten households in an urban territory called 'The Retreat'. The urban place has nothing extraordinary to offer him other than a few pennies. Ezekiel portrays his dire straits and says,

'he cannot
Stand upright,
Or walk without pain.
Does all jobs for 10 families?
Of the retreat, collect?
A few coins every day. (Collected Poems, P. 169)

'The Truth about Dhanya' actually captures the side truth about his presence, which is

'nobody minds his presence
As he stumble around the place' (Collected Poems, P. 169)

He seems fortunate because he isn't out in the streets begging. The city does not treat him well, rather he has to employ himself for himself in order to survive. There is a complex nexus between the city and the people that occupy the complicated urban space. Sometimes the city is a giver and sometimes it extracts all that the person has got to give.

Speaking of a city that has its moral order intact, Pandey contrasts it with heterogenetic city and defines it as "open the stereotype of the 'wicked' city, which is known for its trade thieves, ethics, concubines, etc." (Pandey, P. 6)

'The Double Horror' captures iniquitous face of the evilness itself. The poet declares in the very first line of the poem and then further says that he is not quite less than human. The city is shown in a covered manner and it is characterized by an internal irony as men demanded peace with 'grim war like faces'. The excessive, unchecked growth pulls out life from the dwellers and makes the inhabitants wicked. The poet also feels the need to contaminate the world as the world of the city has infected him. That is what the poem is named after. The pain of being spoiled and the desire to pollute the soul of the rest of the world as a benefiting reply to the urban space is deeply rooted in the poem. The world is quite oblivious of the poet infected himself and its intentions to harm the world. The following lines bring out this sense very clearly.

'only being what I am,
Hurts and hurts the world, although it doesn't know.
Between the world and me, there is a frightful
Equipoise, as infected I, corrupt the world. (Collected Poems, P. 8)

The dehumanization in the city is evident in the poem. The poet reflects on how city and the environment produces is the culprit behind poets, vengeance and degradation. Nair taps on the portrayal and registers, " almost everything that corrupts and beguiles the gallivanting culture of the Metropolis is mentioned." (Nair)

Ezekiel's poetry, the city's both the stimuli as well as the response. It seems to be all overpowering in all consuming entity and sometimes it is the receiver of the individual's behaviour. 'The Double Horror' in a way actually speaks of the mass culture of the urban space.

It shows the negative influence of the city. The inhabitants are purely at the mercy of the city. Ezekiel reflects on the character and shades of the city in his another remarkable poem, 'Urban'. This poem deals with the heart attack and the desolation of the urbanized who finds himself in an ugly urban trap. The predicament of the trapped man who is miles away from the pure pristine And unadulterated rural beauty. His heart aches for the nature's bounty. He feels all dried up on the inside. The untouched beauty is far beyond his reach and now only his mind has the memories and impressions of the virgin countryside. Poet's profound love for the beauty of the village site is voiced in the following lines as:

At dawn, he never sees the skies.
Which silently are born again.
No, feels the shadows of the night.
Recline their fingers on his eyes.
He will neither sun or rain.
His landscape has no depth or height (Collected Poems, P. 117)

The above lines show that the beauty of the countryside is unknown to him. The dawn and dusk do not transform his being. The nights fail to touch his interior. He is not even open to the light and the showers of rain. Rather deep inside him, burns the city. The poem reflects upon his unwelcome detachment from nature and it also is a commentary on what he could have been in nature's company and what he is under this heap of urban repaying sites. His mind craves for silence, but the commotion around him steals away the joy of being in the vicinity of beach, trees and sand. The countryside is presented as a gift that does not refrain from giving the priceless happiness and sense of calm. The burning city drops it all, unfortunately.

The city like a passion burns.
He dreams of morning walks alone.
And floating on a wave of sand.
But still his mind, it's traffic turns.
Away from beach and tree and stone.
To kindered clamour, close at hand. (Collected Poems, P. 117)

The poem tries to portray the lack of contentment and the angst that serves as the core of a city man. Goldsmith's 'The Deserted Village' also expresses love for rural life along the same tangent as urban. The poem is a sharp critique of pure pleasures of rural existence filled with innocence. The opening lines of Goldsmith's poem are:

Sweet Auburn, loveliest village of the plane,
Where health and plenty cheered the laboring Swain' (P. 137)

The countryside and countrymen are drenched in health, plenty and happiness. Goldsmith brings home the nostalgia of the time spent in the countryside. 'Urban' echoes the sense of loss and nostalgia that gets reflected in Goldsmith's poem in the following lines

Dear lovely Bowers, of innocence and easy,
Seats of my youth, when every sport could please.
How often have I loitered over the green,
Where humbled happiness endeared each scene,
How often have I paused on every charm?
The sheltered Cot , the cultivated farm. (P. 137)

Ezekiel meditates upon the city with depth, accuracy and precision. Mohanty, in the same context observes the prime importance of city in his works and says "open the city occupies pivotal position in the critical mind of Ezekiel." (Mohanty, P. 81)

This resentment and dissatisfaction with the city can be seen in is equals to another poem 'A Morning Walk'. The city in the poem and 'Urban' is a site of 'lack' and 'absence' of certain feelings like the gratification and completeness. Like 'Urban' 'A Morning Walk' also registers and an urbanized presence that is complicated, baffling and lost. The poem is a testimonial of the detachment and alienation that the life of a city brings with itself. It speaks of the misery and richness that urban existence entails. Ezekiel exposes that the city can also be a merciless oppressor.

The sights and spectacles of the city presented in the poem are in stark contrast to the untouched rural beauty presented in 'Urban'. As stated earlier, the city emerged as a place of deprivation. The sense of lack is evident in the following lines:

Barbaric city, Sick with slums,
Deprived of seasons, blessed with rain,
It's Hawkers , beggars, iron lunged,
Processions led by frantic drums,
A million purgatorial lanes. (Collected Poems, P. 119)

The city is a maze. The words 'purgatory lanes' suggest the quality of life that must be a city. The city man is buried under the heap of disturbing elements and the nature's bounty mentioned in the poem, the far-fetched and the unachievable. The poet longs for a countryside with all its peace and charm, but in him

'the city, where famous cheap,
And he belongs, an active fool.' (Collected Poems, P. 120)

The universe of the city and the countryside are entirely different. The last couple of lines of the poem cast a very bleak picture where the man belongs to the city and can only hope for a rural life. The city takes the man in its detrimental grass. He may dream of a world of nature and wilderness that emanates harmony, but the city and its bizarre presence keeps waking up in him at regular intervals and the urbanized man has no option, but to return to where he truly belongs to, the evil and the hopeless urban metropolis.

The trope of 'heterogenetic' city runs in two more poems under study, namely 'A Warning' and 'At The Hotel'. 'A Warning' carries the intent to warn the addressee. The opening line mentions Bombay's waterfront where the addressee is casually sitting all by herself. The city Bombay is portrayed in a dark shade where there is the possibility of mishap happening any time. The poet does not want her to be pushed into the water or to go through any such unprepared attack. He cautions and issues a warning which sends chills down the spine of the reader because one does not anticipate this even in a nightmare. The small poem with the following lines brings out both sides of Bombay. It being a land of dark uncertainties and also a place where there are anonymous well wishes too. If the urban Metropolis here in the poem is a site of horror, souls, then it is also a place where the observer threatens you to save you from the unexpected.

On the Bombay waterfront,
You sat alone and made
A decision not to turn,
Not to fear the man behind,
Any man passing by.
Who may, with just a touch,
Push you off into the sea. (Collected Poems, P. 141)

The city has the last ounces of the feeding humanity still left as the speaker says

Better hold to the sea wall.
I don't want to hear you scream (Collected Poems, P. 141)

The citified consciousness can be deeply examined in Ezekiel's 'At the Hotel'. This poem gives a crystal clear entry point into understanding the nature of the city. How it treats, the man and how the urbanized man tries to assimilate into the alien, lustful city culture. The question arises is it the city that makes the man corrupted or is it the man who makes the environment of the city conducive for his survival. Is city is such a place where transparency is not given sufficient value? That is why the poet acknowledges “our motives were concealed’ (P. 112). The speaker accepts that:

> The noise, the smoke, the smell of flesh we realized.
> Secretly and wanted more,
> We drank our coffee swiftly.
> When the Cuban dancer left the floor (Collected Poems, P. 112)

These lines clearly show that the speaker was not there for the coffee. The hotel is an important aspect of the city. It is the place people from all walks of life come and meet. The motives are different and vary from individual to individual, but the subjectivity do collide. The city acts as a catalytic interface and Ezekiel’s poetry.

Ezekiel in the above examined poems looks at the city from various angles. Sometimes the city is the place of hopelessness, sometimes it is the place of moral decadence. Somewhere the poet sees it as direct contrast to the innocent countryside and sometimes it becomes a shelter to the poor voiceless consciousness. Therefore, it can be said that the urban in Ezekiel is a meeting point of various intriguing contours.

Works Cited

1. Ezekiel, Nissim. *Collected Poem*. Oxford University Press, 2005
2. Mohanty, Niranjan. “Indianization of English : Poetry of Nissim Ezekiel” *Indianzation of English Language and Literature.* ed. R.S. Pathak, 1999, P. 81
3. Nair, K.R. Ramachandran, Nissim Ezekiel’s Bombay Poems, Acc. on 20 January 2025. https://www.wisdomlib.org/history/compilation/triveni-journal/ d/ doc71758.html
4. Pandey, Krishna Mohan. *City as Kaleidoscope : Indian English Poetry in Plural Contexts.* Adhyan Publishers and Distributors. Delhi, 2008, P. 14.
5. Raghunathan, Harriet, editor *Johnson, Gray, Goldsmith : Poets of the Mid Eighteenth Century*. Worldview Publications, Delhi, 2013, P. 137.
6. Sengupta, Debjani and Shernaz Cama, editors. *Blake, Wordsworth and Coleridge*. Worldview Critical Editions, Delhi, 2013, P. 75.
7. Taranath, R. & Belliappa M. *The Poetry of Nissim Ezekiel*. Calcutta : Writers Workshop, 1966, the flap.
8. Webber, Melvis M. “The Urban Place and the Nonplace Urban Realm” *Explorations in Urban Structured* ed. Melvin M. Webbers et al. Philadelphia, 1964, P. 79.

apoorvajagta.16dec@gmail.com Mob.: 8979586458

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 160-165
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कबीर की भक्ति व उसका प्रभाव

मनमोहन सिंह नेचवा, सहायक आचार्य हिन्दी,
राजकीय महाविद्यालय गोडू बीकानेर

सांराश- 'कबीर' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'महान'। गुरु रामानंद की कृपा से उन्होंनें अपने संसार को सृजनात्मक क्रिया की ओर उन्मुख किया।वे काशी में रहते हुए हिन्दु सन्तों व सूफियों से सम्पर्क में आये वे नाथ पंथियों से भी काफी प्रभावित थे। चूंकि कबीर अनपढ़ थे एवं उन्होंने न मौखिक संदेश दिए, जिन्हें बहुत बाद में लिखित रुप में प्रस्तुत किया। उन्होंनें समाज में व्याप्त कुरीतियों का डटकर विरोध किया ।अन्य विश्वासो,दकियानुसी अमानवीय मान्यताओं व गली-सडी रुढ़ियों की कटु आलोचना की।इस प्रकार कबीर ने मध्यकाल मे प्रगतिशीील व क्रांतिकारी विचारधारा को स्थापित किया।

समकालीन समाज व धर्म के क्षेत्र में उनकी तीन बातों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा था- वर्ण व्यवस्था पर कुठाराघात, साम्प्रदायिक तत्वों का बहिष्कार और भक्ति की सादगी एवं व्यापकता का प्रचलन।

सामान्य परिचय- किंवदन्ती है कि ये एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से एक महात्मा(रामानन्द) के आशीर्वाद के फलस्वरुप उत्पन्न हुए थे ।लोक राजवंश इनकी माता ने नवजात शिशु का परित्याग कर दिया था ;और इसके बादनीरु नाम के जुलाहे ने दयावश इनको पाल लिया।बाद में यही बालक कबीर कहलाया ।इनकी शादी 'लोई' नाम की एक स्त्री से हुई थी और उनके 'कमाल' और 'कमाली' नाम के दो बच्चे भी थे।ये अपने को जुलाहा मानते थे और अक्खड़पन के कारण जुलाहा होने का गर्व भी रखते थे।

'तु ब्राह्मण, मैं काशी का जुलाहा,बुझहु मोर गिराना।'

इनको अपने घर का काम करना पड़ता था, किन्तु उनमें रुचि न थी ये आरंभ से ही भावुक और भक्ति थे।

कबीर पर प्रभाव-कबीर ने अपने समय के प्रसिद्ध आचार्य रामानन्द से बड़ी युक्ति के दीक्षा पायी थी। "काशी में हम प्रकट भरे ,रामानन्द चेताये।"

मुसलमान लोग इनको शेख तकी का शिष्य बतलाते है,कबीर पर रामानन्द के अतिरिक्त शंकरचार्य तथा नाथ पंथियों से हठयोग के सिद्धान्त ग्रहण किये, शंकराचार्य से मायावाद ,और अद्वैतवाद के विचार को अपनाया ,सूफी फकीरों से प्रेम की साधना ली और

मुसलमानी शरीयत के मानने वालों से मूर्ति और तीर्थ का खंडन सीखा।नाथपंथियों में भी समता का भाव था,किन्तु ये मुसलमान धर्म से प्रभावित हुए।

ये महात्मा बड़ी स्वतन्त्र प्रकृति के थे।इसलिए इन्होंनें हिन्दु और मुसलमान ,दोनों सम्प्रदायों की खूब हंसी उडायी है- "इन दोउन राह न पाई।" ये अनपढ़ होते हुए भी बहुश्रुत थे ।इनके वचनों में हठयोग तथा वेदान्त की अच्छी झलक मिलती है।इन्होंनें कहीं-कहीं प्रभावोत्पादक के लिए बहुत से विरोधात्मक भाव भी लिखे हैं।जैसे -"नैया में नदियां डूबी जाय।" रुढ़िवाद के विरोध में ही कबीर ने काशी छोड ़कर मगहर में शरीर त्याग था-"जो काशी तन तन तजै कबीरा ,रामै कौन निहोरा।" धर्मदास इनके प्रधान शिष्यों में से थे ।ये जाति के वैश्य थे और कबीर के बाद वे ही गद्दी पर बैठे।

कबीर के सिद्धान्त- इनके ईश्वर संबंधी विवार बहुत ऊंचे हैं। इन पर शांकरवाद का पूरा प्रभाव था; ये जीव -ब्रह्मा की पुर्ण एकता में विश्वास रखते थे।' हेरत-हेरत हथेलियां कबीर हिराय, बुंद समानी समुद्र में सोकत हेरी जाय।' इनकी वाणी में रहस्यवाद की मात्रा अधिक रुप में पायी जाती है।हिन्दु प्रथा के अनुसार इन्होंनें जीव को दुलहिन माना है, और परमात्मा को प्रियतम बतलाया है।जीव का विरह वर्णन बड़ी सरसता के साथ किया है।दुलहिन सदा दुल्हे से मिलने के लिए उत्सुक रहती है।इन्होंनें अपने को 'राम की बहुरिया' कहा है।इनके सिद्धान्त निर्गुणवाद के है ,फिर भी लोगों को समझने के लिए और शुष्कता में सरसता लाने के निमित्त इन्होंनें थोड़ा श्रृंगार का भी पुट दे दिया है, किन्तु उनकी 'झीनी-झीनी चदरिया' में उनका निर्गुणवाद छिपाये नहीं छिपता।'सेज' अवश्य रहती है किन्तु वह होती है शुन्य की ,इसलिए वह प्राय: सूनी ही रहती है। उपासना में इन्होंनें राम की महत्ता स्वीकार की है ,किन्तु ये दाशरथि राम के उपासक न थे-

"दशरथ सूत तिहुं लोक बखाना,
राम नाम का मरम है आना।"

ये तो निराकार रुप के उपासक थे, और एक ही रुप को सारे संसार को देखते थे -

साधो एक रुप सब मांगी ,
अपने मन विचार के देखो ,कोई दुसरा नाहीं।

कबीर ने अपने परमात्मा को अपने आप में ही देखा है; और हठयोग की साधना में ब्रह्माण्ड और परमात्मा को शरीर के भीतर ही पाया है।

अपने धार्मिक सिद्धान्तों के अनुरुप कबीर ने नीति संबंधी दोहे भी अच्छे कहे है। इनमें केवल ज्ञान पिपासा ही न थी, वरन् धर्म -प्रचार की भी इच्छा थी ।इस इच्छा को ये अपनी कविता में दबा नहीं सके। उन्होंनें समता भाव का प्रचार करके शूद्रो की स्थिति को सुधारा था इस संबंध में ये अपने समय से आगे थे।

कबीर की भाषा- कबीर की वाणी' बीजक ' नामक ग्रंथ में संग्रहित हैं।इसके तीन भाग है -'रमैनी' 'सबद' और' 'साखी' इनकी भाषा में खड़ी बोली ,अवधी ,पूर्वी (बिहारी) आदि कई

बोलियों का सम्मिश्रण है। क्रिया पदों के रुप अधिकतर ब्रजभाषा और खड़ी बोली के है।कायक चिन्हों में 'से' 'कै''सन''कर' अवधि के है 'को'ब्रज का है 'थै' राजस्थानी का।इन्होंनें शब्दों को तोड़ा मरोड़ा भी बहुत है।यत्र- तंत्र ब्रजभााषा का समावेश है ;और पंजाबी शब्दों की भी कमी नहीं है।

ईश्वरीय संबंध की रहस्यमयता में थोड़े प्रकाश की झलक पाने के लिए इन्होंनें रुपको औंर अन्योक्तियों से काम लिया है। इनको छ्न्द शास्त्र के नियमों का कम ज्ञान था। इनके दोहे पिंगल की कसौटी पर पूरे नहीं उतरते। इनकी कविता का चमत्कार काव्य के ऊपरी नियमों से नहीं, वरन् इनके हृदय की सच्चाई और तीव्र अनुभूति से है।

शुक्ल के अनुसार- कबीर की भाषा सधुक्कड़ी (अर्थात् राजस्थानी-पंजाबी मिश्रित खड़ी बोली) थी।

डॉ.श्यामसुंदर दास की दृष्टि से-कबीर की भाषा पंचमेल खिचड़ी है।

डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठेठ दृष्टि के प्रयोग के कारण कबीर को 'भाषा का डिक्टेटर' कहा है।

बच्चन सिंह की दृष्टि में कबीर भक्तिकाल के प्रथम क्रांतिकारी पुरस्कर्ता है।

विशेषताएं:-

1. गुरु का महत्व ,सत्संगति की आवश्यकता ,आचरण पक्ष की प्रधानता ,नाम-सुमिरण ,हिंदु-मुस्लिम एकता इत्यादि संत काव्य की प्रमुख विशेषताएं हैं ।जैसे-

'गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागो पांय।
भक्ति भजन हरि नांव है, दुजा दुक्का अपार।'

2. 'प्रेम की महता' संत कवियों ने प्रतिपादित की है। प्रेम के समक्ष इन्होंनें सारे संसार के ज्ञान को तुच्छ बताया है।

' पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ ,पंडित भया न कोय।
ढ़ाई अक्षर प्रेम का ,पढ़ें सो पंडित होय।

3. कबीर में ज्ञानमार्ग की जहॉ तक बातें हैं वे सब हिन्दु शास्त्रों की है जिनका संचय उन्होंने न रामानन्द जी के उपदेशों से किया। माया, जीव, ब्रह्मा, तत्वमसि,आठ मैथुन (अष्टमैथुन) त्रिकुटी ,छ: रिपु इत्यादि ;शब्दों का परिचय इन्हें अध्ययन द्वारा नहीं सत्संग द्वारा ही हुआ। ब्रह्मविद्या के संबंध में कहते हैं -

' तत्वमसी इनके उपदेश,ई उपनिषद् कहै सुंदेसा।
जागबलिक और जनक सबादा, दत्तात्रेय वहै रस स्वादा।।'

4. बाह्मडंबरो ,रुढ़ियों, जात-पांत ,मूर्तिपूजा, बहुदेववाद इत्यादि का विरोध और नव्य समाज का निर्माण संत काव्य की प्रमुख विशेषता है यथा-

' पत्थर पूजे हरे मिले तो मैं पूंजू प्रहार।
जाति पॉति पूछे नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।।

5. संत काव्य 'भावनात्मक' एवं 'अनुभूतिप्रवण' जन काव्य है।संत कवियों ने 'कागद की लेखी' न कहकर 'आंखिन की देखी' कहा है।

कबीर साहित्य का प्रभाव-

-सिद्धो की वाणी उलटबांसियां कबीर से प्रभावित होती हुई नानक ,दादू, मलूकदास में संतवाणी का रुप धारण करती है।

-कबीर ने दोहा चौपाई शैली का प्रयोग किया।यह छंद पद्धति इतनी लोकप्रिय हुई कि जायसी और तुलसी ने अपने महाकाव्यों की रचना दोहा, चौपाई शैली में की है।

-उलटबांसियों, प्रतीको और रुपको में कबीर के साहित्य ने रहस्यवाद के संकेत प्रस्तुत किये है जो संत साहित्य से होते हुवे रविन्द्र नाथ टैगोर और महादेवी वर्मा के काव्य में फैले फुले है।

-कबीर ने अपनी झाड-फटकार के द्वारा हिन्दुओं और मुसलमानों का कट्टरपन दूर करने का जो प्रयत्न किया वह अधिकतर चिढ़ाने वाला सिद्ध हुआ ,हृदय को स्पर्श करने वाला नहीं ।मनुष्य -मनुष्य के बीच जो रागात्मक संबंध है वह उसके द्वारा व्यक्त न हुआ।कुतुबन, जायसी, आदि इन प्रेम कहानी के कवियों के प्रेम का शुद्ध मार्ग दिखाते हुए उन सामान्य जीवन दशाओं को सामने रखा जिनका मनुष्य मात्र के हृदय पर एक साथ प्रभाव दिखाई पड़ता है।हिन्दु -हृदय और मुसलमान -हृदय आपने-सामने करके अजनबीपन मिटाने वालों में इन्हीं का नाम लेना पड़ेगा। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता बनी थी। यह जायसी द्वारा पूरी हुई।

-प्रतीक का प्रभाव छायावाद पर भी है छायावाद बड़ी सहृदयता के साथ प्रभाव साम्य पर ही विशेष लक्ष्य रखकर चला है।कहीं कहीं तो बाहरी सादृश्य या साधम्य अत्यन्त अल्प या न रहने पर भी आभ्यंतर प्रभाव -साम्य लेकर ही अप्रस्तुतों का सन्निवेश कर दिया जाता है। ऐसे अप्रस्तुत अधिकतर उपलक्षण के रुप में या प्रतीतवत् होते हैं। जैसे- सुख, आनंद, प्रफुल्लता ,यौवनकाल इत्यादि के स्थान पर उनके घोतक उषा, प्रभात के स्थान पर मधुकाल; प्रिया के स्थान पर मधुप ; श्वेत या शुभ्र के स्थान पर कुंद, रजत; माधुर्य के स्थान पर अंधकार, अंधेंरी रात; संध्या की छाया, पतझड़ ; मानसिक आकुलता या क्षोभ के स्थान पर झंझा, तूफान; भाव तरंग के लिये झंकार; भाव प्रवाह के लिए संगीत या मुरली का स्वर इत्यादि।

एकेश्वरवादी व धर्म सुधारक -:

कबीर की बानी एक विशिष्टता यह है। जैसे-'शब्द' और 'शुन्य' व अभिव्यंजनाएं योगी परम्परा से ली गयी है।कबीर ने ईश्वर के एकत्व पर बल दिया जिसे उन्होंने न राम, हरि, गोविन्द, अल्लाह, सांई वसाहिब आदि कई नामों से पुकारा।

अबुल फजल ने 'दबिस्तान ए   मुजाहिब' में कबीर को मुवाहिद' (एकेश्वरवादी) कहां है।

मैकोलिक केअनुसार -'ये एक निडर अन्वेषी थे, भारत के हिन्दु मुस्लिम समुदायों की एकता के महान अग्रदूत थे, मानवता की आस्था के समर्थक थे।'

इस संबंध में कबीर की एक रचना के अंश है-

-"हे भाई यह बताओ, किस तरह हो सकता है कि संसार के एक नहीं दो स्वामी हो? किसने तुम्हें भ्रमित किया है।"

-" ईश्वर को अनेक नामों से पुकारा जाता है जैसे अल्लाह ,राम, रहीम, केशव, हरि व हजरत।

- विभिन्नताएं तो केवल शब्दों में है जिनका आविष्कार हम स्वयं करते हैं।

-कबीर कहते हैं कि दोनों ही भुलावे में है इनमें से कोई राम को प्राप्त नहीं कर सकता।

- यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि -" कबीर के राम दशरथ के पुत्र राजा राम नहीं है अपितु घट-घट में निवास करने वाली अलौकिक शक्ति है।"

वेस्टकॉट ने कबीर को ' भारतीय लूथर ' की संज्ञा दी है।

डॉक्टर कारपेंटर के अनुसार -"कबीर ने विचार की सम्पूर्ण पृष्टभूमि हिन्दु है।"

जॉन स्टेटन हॉली और मार्क जर्गेसमेयर ने विवेचित किया है कि कबीर की कृतियां भारत के दो महान धर्मो की स्वीकार्यता के रुख को प्रकट करती है।

दत्त मजूमदार के अनुसार -' कबीर के लिए हिंदु और तुर्क एक ही मिट्टी के बर्तन थे, अल्लाह और राम केवल विभिन्न नाम थे।'

आर्थिक चिन्तन- :

कबीर ने बहुत पहले ही घोषणा की थी कि समाज व राष्ट्र में अधिकतर विवाद अर्थव्यवस्था की असमानता से उपजते हैं।धन को उन्होंने जन समाज का अनिवार्य तत्व माना किन्तु वे उतने ही धन को सर्वोपरी समझते थे जो दैविक आवश्यकताओं की भली प्रकार पूर्ति कर सके।धन संचय की निन्दा तथा लोकहितार्थ धनोपार्जन को श्रेयस्कर माना है-

" हे माधव मुझसे भूखे पेट भक्ति नहीं होगी , नहीं तो अपनी माला सम्भालो , तुम तो कुछ दोगे नहीं तोलो मैं मैं तो मांग लेता हूं।"

"सांई इतना दिजीए जामै कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा न रहूं, साधु ने भूखा जाय।।"

-उन्होंनें आर्थिक शोषण आधारित व्यवस्था की निन्दा की तथा अपनी कथनी व करनी दोनों द्वारा युग-युग से पीड़ित समाज के निम्न वर्गों को आत्मसम्मान दिया।

निर्गुण भक्ति धारा में कबीर प्रथम संत थे जो सन्त होकर भी अन्त तक गृहस्थ रहे तथा संसार परित्याग को महत्वपूर्ण नहीं माना। उन्होंने न 'शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा' को मानव की सफलताओं का आधार बताया।

निष्कर्ष:-

"किसी सन्त से उसकी जाति पूछना व्यर्थ है।हजामत ने ईश्वर को ढूंढ़ा है ।धोबी,और बढ़ई ने -रैदास तक ईश्वर के खोजी थे।ऋषि श्वपच जाति के चमार थे। हिन्दु और मुसलमानों में समान रुप से उस अंत को प्राप्त कर लिया है,जहां भेदभाव का चिन्ह नहीं है।"

-"उपवास करने ,बार-बार प्रार्थनाएं करने तथा किसी मजहब को जाने से कोई स्वर्ग नहीं जाता।"

मक्का की मस्जिद का भीतरी पर्दा मनुष्य के हृदय में है, यदि सत्य का ज्ञान है।अपने ज्ञान को अपना काबा बनाओं, अपने शरीर को उसकी मस्जिद , विवेक को इसका प्रमुख शिक्षक।

-"क्रोध, संशय एवं विद्वेष का बलिदान करो। धीरज को अपनी पांच बार की नमाज बनाओं।हिन्दुओं और मुसलमानों का एक ही ईश्वर है।"

संदर्भ सूची

1. तराइन से पानीपत सल्लतनकालीन भारत -पप्पूसिंह प्रजापत ,रॉयल पब्लिकेशन जोधपुर। पृ.सं.-423, 424, 425
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल , पंचशील प्रकाशन जयपुर।पृ.सं.- 481
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास -डॉ. नगेन्द्र व डॉ.हरदयाल, हरसा व प्रेस एवं प्रिन्टर्स , मानसरोवर, नई दिल्ली ।पृ.स.-56,74
4. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास -बाबू गुलाब राय (लक्ष्मीनारायण अग्रवाल ,आगरा) पृ.सं.- 27, 28
5. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास- विश्वनाथ त्रिपाठी (ऑरियन्ट ब्लेक स्थान प्रा.लि.- श्री दिल्ली) पृ.सं.- 31
6. हिन्दी भाषा -डॉ. विवेक शंकर राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर पृ.सं.- 127, 129

मो.नं.व वाट्स एप् नं. - 9509907742 email id-manmohannechawa85@gmil.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 166-169
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

FOREIGN AID AS FOREIGN POLICY DEVICE

Dr. Renu Bala, Assistant prof.(Political Science)
Majha College for Women, Tarn Taran,Punjab.

ABSTRACT

"Foreign aid is a very important instrument of foreign policy. It is a transfer of resources from the state treasury of a prosperous nation to one or more developing nations. It can be either in the form of direct funding or commodities and goods subsidized by the donor country. It can take the form of outright grants on long-term, low interested loans. Furthermore, Aid is the transfer of cash, credit, goods or technical advises from one nation to another nation"

KEYWORDS: Donor,Aid**,**Recipient,economic,foreign,diplomacy.

INTRODUCTION

Foreign Aid has long been an accepted technique of foreign policy. European states often provided loans to backward peoples as a means of gaining a colonial foothold in the 18th and 19th centuries. Subsidies of equipment and money were regularly a part of military alliances. The United States made large loans to some 20 countries after world war I. It was not until after World War II that foreign aid was used extensively and systematically. The Unit States led the way. Although Washington has provided more than twice as much aid as everyone else combined (Wendzal, 1977 : 143).

Although, aid diplomacy as a tool of foreign policy has emerged as a very important phenomenon since the second World War. Foreign aid has been practiced extensively by super powers and lesser powers in a various forms depending on the material resource base of a state and its level of economic development, As such diplomacy has invariably been used by donor states for putting pressure on recipient states, for diverse kind of purposes donor countries want to influence domestic and foreign policies of aid recipients (Vohra, 1980 : 1).

The dominant view among scholars is that, foreign aid is not a source of ensuring economic development, rather it is a tool of exploitation. Developing nations have taken the view at the United Nations Conference on Trade and Development (UNCTAD) that foreign aid is not a charity but an obligation of the advanced nations that are favoured by the global division of wealth. Although, UNCTAD has fixed a standard of 1 percent of national income as the target for giving as foreign aid by the developed countries (Rosen and Jones, 1977 : 138).

Further, aid from the donars countries will not be sufficient to meet the capital needs of the less develop countries. Some economists believe that the less developed countries could usefully absorb five or ten times as much outside capital as will be available. Therefore the present prospect is a general decline in the significance of foreign aid, compared to population and growth needs (Jones; 1985 : 192-193).

In this sense world in divided into two layers :

1. Donor countries

The state or organization that gives aid is called a donor. These countries are rich and industrialized, which provide aid to recipient for their economic development.

2. Recipient countries

The state or organization receiving aid is recipient. These states are poor countries which depend on donor countries for their development (Goldstein, 2005 : 554).

TYPES OF FOREIGN AID

1. Capital aid

Capital aid includes two types of aid such as grants and loans, these type of aid given for different purposes like development of infrastructure, maintenance aid including intermediate goods and raw material, the utilization of already build up capacity and general purpose aid (Upreti, 1988 : 5).

A. Grants

Grants are money which is free of cost or interest. It is also not be repaid, therefore, grants are funds given free of cost to recipients states, usually for some stated purpose.

B. Loans

Loans are funds, which are to be repaid with interest, therefore given to help in economic development which must be repaid in the future out of the surplus generated by development process (Goldstein, 2005: 555).

2. Technical aid

It is the least costly of all type of aid programs. Technical aid is designed to disseminate knowledge and skills rather than goods or funds. In this type of aid personnel with special skills from industrialized countries go abroad to advise on a wide variety of projects. (Holsti, 1972: 262).

3. Multilateral aid

It is also a form of aid, which is given through international agencies and given the almost limitless needs of the poor nations. These international agencies collect funds from their member countries and they distribute it to the needy countries. International Monitory Fund and International Bank for Reconstruction and Development are major multilateral agencies (Baldwin, 1972 : 372-373).

4. Bilateral aid

Bilateral aid is that form of aid, which flows from the government of one country to the government of another. In such aid donor countries determine nature and scope of aid. It is mostly politically motivated. Bilateral aid may be less effective in accelerating the economic development of the recipient countries. It is not favoured by the recipient countries for such reasons (Upreti, 1988: 6).

5. Tied aid

The aid which is given for a specific project is known as 'tied aid'. It is generally not favoured by recipient countries because it is not given in accordance with the needs and preferences of them and also causes delay in the execution of aid projects.

6. Untied aid

It is not related to any specific project. Such aid is given to raise capital for the plans and the annual development budget of the recipient countries. It provides freedom to the recipient countries to purchase machinery, equipment and other material from the cheapest market and they are also free to utilize according to their needs and priorities. Untied aid benefits recipients countries in meeting their foreign exchange requirements because such aid can also be utilized for the maintenance of imports (Ibid., 8).

Furthermore, Hans Morgenthau gives six types of foreign aid :

1. Humanitarian Foreign aid

It is considered to be non-political, which Governments have traditionally extended to nations which are victims of natural disasters, such as floods, famines and epidemics falls in that category (Morgenthan, 1974 : 260).

2. Subsistence Foreign aid

Subsistence foreign aid is to make up for the deficit in the budget of recipient nation. This type of aid is akin to the humanitarian type in that is seeks to prevent the breakdown of order and disintegration of organized society (Ibid., 260).

3. Military Foreign aid

Military foreign aid is that aid by which nations buttress their alliances. Rome used to receive tribute from its allies for the military protections it provided. The classic period of military subsidies were 17th and 18th century by which nations, and especially Great Britain, endeavored to increase the military strength of their allies. (Ibid., 261).

4. Bribery Foreign aid

Bribes preferred by one government to another for political advantage. It was an integral part of the armory of diplomacy. Much of what goes by the name of foreign aid, today is in the nature of bribes. The transfer of money and services from one government to another is in a way a price paid for political services rendered or to be rendered (Ibid., 260).

5. Prestige Foreign aid

Prestige aid has so much in common with modern bribes. It is concealed by the ostensible purpose of economic development or military aid. The prestige aid have many advantage for donor country. It may receive a specific political advantage in return for the aid, very much like the advantage the aid received for a bribe. (Ibid., 263).

6.Foreign aid for economic development

It has been primarily the subject for economic rather than political analysis. The foreign aid for economic development has proceeded from a series of uncertain assumptions. These assumptions involve correlations between the giving of foreign aid and the economic development of recipient society such as between economic development and social stability, between social stability and emergence and strengthening of democratic institutions and between the existence of these institutions a peaceful foreign policy (Ibid., 263).

The economic aid as an explanation for the US alliance with Pakistan is well known. It received more US aid because of its alliance. The US aid to Pakistan was by way of defence support which in 1955-the year after the SEATO- amounted to $65.31 million out of a total aid of $ 71.36 million, its defencebudgealso increase (Ray, 2004: 89).

ROLE OF FOREIGN AID

Donor countries used aid programes to change the domestic and foreign policies of the recipients. They use aid in such a crude and open fashion to interfere in the internal policies of the recipients. All governments have found it necessary on occasion to act this way. Foreign aid in the form of financial subsidies of commodity impartprogrammes, can be used to buy time. Sometimes a new govt. takes office, to find that it is faced with extreme inflation, a depleted treasury or an untenable balance of payments situation. A financial subsidy from a donor country can relieve the government of a crisis situation and give it time to formulate programs to control the economy donor countries also used aid to influence the foreign policy of the recipients countries. For example the united states decided to cut off all economic and military aid to Indonesia in 1963, after the Indonesian government mobilized resources to achieve its goal of crushing Malaysia (Holsti, 1972: 265-266).

The economic aid programmes are generally politically motivated. These are rarely actuated by humanitarian considerations. Donor countries give grants nd loans to the recipient countries, so that they may remain faithful allies but the eal purpose is to influence the recipient countries. Aid has proved highly neffective in making friends and securing allies. It creates more problems, produces ingratitude and unpopularity. Foreign aid curbed the process of development and growth instead of accelerating it. Therefore, the recipient states are no longer after aid. Now, their new slogan is trade concession or preferential treatment toward their commodities (Chandra, 1979: 123-124).

It is considered that foreign aid is an important aspect of developing economics out the donors expects to achieve specific goals. These goals vary from situation to situation but it is assumed that the ultimate goals are political because the donor countries use aid in order to encourage such development as is favourable to the donor. The developing countries, which are aid receiving countries have always been concerned about the strings attached to the aid programme and they wanted aid without strings. Therefore, it is not a charity because organized governments could not act as philanthropist. It is an instrument of policy, which is designed to influence policies of the recipient countries. (Maheshwari, 1969 164).

CONCLUSION

Foreign aid has become one of the most significant methods of economic tools used in international politics. Developing countries are dependent on developed countries for their development. Therefore, they get foreign aid from developed countries. It becomes a tool of exploitation in the hands of rich countries, through which they try to acquire more and more profit. After examining several types of aid, we conclude that none of them offers much hope to those who oppose any and all intervention in the recipient's affairs. Each of them can serve and has served as mechanism for intervention. Although there may be types of foreign aid that cannot be used by the donor to intervene, they are not among those examined here.

REFERENCES

1. Baldwin, David A. (1972), "Foreign Aid Intervention and Influence", in Romano Romani (ed.) The International Political System: Introduction and Readings, (New Delhi: John Willy and Sons).
2. Chandra, Parkash (1979), International Politics, (New Delhi: Vikas PublishingHouse).
3. Goldstein, Joshua S. (2005), "International Relations, (New Delhi: Pearson).
4. Holsti, K.J. (1972), International Politics: A Framework For Analysis, (New Jersey: Prentice hall, Inc).
5. Huntington Samuel P. (1973), "Foreign Aid For What and Whom" in Yale. H. Ferguson and Walter (ed.) F. Weiker Continuing Issues In International Politics, (California: Good year publishing Company).
6. Jones, Walter S. (1985), The logic of International Relations, (Boston: Little, Brown and company).
7. Maheshwari B.L. (1969) "Foreign Aid in South Asia: Impact on Development" in S.P. Verma and K.P. Mishra (ed.), Foreign Policy in South Asia, (Bombay : Orient Longmans Ltd).
8. Morgenthau, Hans. J. (1974), "A Political Theory of Foreign Aid" in D.S.
9. Mclellan et al (ed.). The Theory And Practice of International Relations, (New Jersey: Prentice Hall Inc, Englewood Cliffs).
10. Morgenthau Hans.J.(1972), "The Policy of Foreign Aid" in Roy C. Macridis (ed.), Foreign Policy in World Politics (New Jersy; Prentice Hall, Inc., Englewood cliffs.
11. Ray, Aswini K. (2004), Western Realism and International Relations, (Delhi : Foundations book Pvt. Ltd).
12. Rosen, Steven J. and Jones, Walter S. (1977), The Logic of InternationalRelations, (Cambridge: Winthrop publishers, Inc).
13. Spero, Joan Edelman (1981), The Politics of International Economic Relations, (London: George Allen and Unwin).
14. Upreti, B.C. (1988), Dynamics of Foreign Aid: A Case Study of Indian Aid to Nepal, (Jaipur, Print Well Publishers).
15. Vohra, Dewan C. (1980), India's Aid Diplomacy in the Third World, (New Delhi:
16. Vikas Publishing House Pvt.Ltd).
17. Wendzel, Robert L. (1977), International Relations: A Policy Maker Focus, (New Delhi: John Wiley).

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 170-175
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्रेमचंद के कथा साहित्य में दलित-जीवन-यथार्थ

कैलाश पंडित, सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग, के के एम कॉलेज जमुई, बिहार, 811307

प्रस्तावना

वैसे तो साहित्य में ‘बहुजन’ वर्ग का जिक्र बौद्ध काल से माना जाता है। दलित वर्ग का दार्शनिक और वैचारिक उद्घोषक गौतम बुद्ध ही रहे हैं। सर्वप्रथम बुद्ध ने ही “बहुजन हिताय बहुजन सुखाय” का नारा दिया था। उन्होंने भारतीय वर्ण व्यवस्था को खुली चुनौती दी और उसे अवैज्ञानिक एवं अमानवीय करार दिया। इसके बाद सिद्ध एवं नाथ विभिन्न सामाजिक कुरीतियों एवं सामाजिक असमानताओ पर खुलकर अपनी लेखनी चलाई। मध्यकाल में जब व्यापक रूप से जातिगत संकीर्णता एवं भेदभाव अपने चरम पर था, तब निम्न जातियों से अवतरित विभिन्न संतों एवं सूफियों ने जातिगत कट्टरता, रूढ़ीगत मान्यताओं के निर्मूलन के लिए आवाज उठाई। कबीर ,नामदेव ,रविदास, नानक और मलूक दास जैसे संतों ने दलितों की पीड़ा को अपने रचनाओं में अत्यंत मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया। रैदास लिखते है..

रैदास ब्राह्मन मत पूजिए, जऊ होवे गुन हीन।
पुजिही चरन चांडाल के, जऊ होवै गुन प्रवीन।।

आधुनिक काल की चेतना ने हिन्दी दलित साहित्य को असमानता के विरुद्ध एक आंदोलन के रूप में सदृढ़ किया। यह साहित्य मार्क्सवादी एवं प्रगतिवादी साहित्यिक आंदोलन से पूर्ण सरोकार रखते हुए, आज तक प्रतिफलित है। प्रेमचंद अपनी रचनाओं में छायावादी लीक से हटकर दलित अस्मितागत-चेतना जागृति का बीजारोपण किया है। प्रेमचंद ने ही अपनी रचनाओं में दलितों को नायकत्व प्रदान किया। तभी तत्कालीन आलोचक, उनके रुख पर नाराज होकर, उन्हें नफरत का प्रचारक तक कह दिया। यही से दलित साहित्य के विषय में सहानुभूतिपरक एवं स्वानुभूतिपरक रचना का मतभेद शुरू हुआ।nदलित लेखक रचना के अस्सी- नव्वे के दशक में सहानुभूति परक दलित साहित्य को नकारते हैं। पर दलित साहित्य को प्रारंभिक सशक्त वैचारिक आधार प्रदान करने में गैर दलित साहित्यकारों का प्रमुख योगदान रहा है।

प्रेमचंद का रचनाकाल छायावाद, अमूर्त स्वप्निल यथार्थवादी युग था, जो प्रेमचंद को अपने पाश में नहीं जकड़ पाया। वह अपना रचना संसार अलग बनाते हैं, जहां जनमानस की संवेदना विद्‌यमान होती है। प्रेमचंद आदर्शोन्मुख यथार्थवादी लेखक हैं, जिन्होंने किसान मजदूर दलित को साहित्य का अंग बनाया। प्रेमचंद अपनी रचनाओं में विभिन्न मतों एवं विचारों को समाहित किया है, पर गांधी जी द्‌वारा चलाए गए सुधारवादी कार्यक्रमों की वकालत लगातार करते दिखते है। दलित लेखक एवं चिंतक वाल्मीकि जी इसी संदर्भ में लिखते है- "प्रेमचन्द अपने प्रारंभिक दौर में आर्य समाज से प्रभावित दिखाई पड़ते है, फिर गांधीवादी और अंतिम दिनों में प्रगतिशील, लेकिन अपने दलित-विषयक लेखन में वर्ण व्यवस्था से उपजी शोषण-दमन विभीषिका की जगह आर्थिक अंतर्वस्तु को ही ज्यादा महत्व देते रहे है।"[1] दलित-जीवन-यथार्थ के संदर्भ में प्रेमचंद के लगभग सोलह कहानियों में दलित की पीड़ा का दर्शन होता है। इन्होंने महात्मा गांधी के आदर्शवाद से लेकर डॉ अंबेडकर के सामाजिक दर्शन को भी कहानी का आधार बनाया है। प्रोफेसर मैनेजर पाण्डेय का कथन है.."1930 के बाद अम्बेडकर के मंदिर प्रवेश संबंधी आंदोलन का प्रेमचंद पर गहरा असर पड़ा जिसके परिणामस्वरूप उनकी दलित जीवन संबंधी कहानियों में नई चेतना और तेजस्विता आई।"[2]

कहानियों में दलित जीवन यथार्थ

प्रेमचंद की पहली और आखिरी कहानी दलित जीवन एवं चरित्र से संबंधित है । प्रेमचंद के छात्र जीवन में लिखी संस्मरणात्मक कहानी ‘मेरी पहली कहानी’ में अपने मामा का चित्रण किया है, जिसका प्रेम संबंध एक दलित स्त्री से है। प्रेमचंद ने विनोद पूर्ण शब्दों में दलितों द्‌वारा अपने मामा की पिटाई का जिक्र किया।

'घासवाली' में दलित स्त्री पात्र ‘मुलिया’ उस सामंती व्यवस्था के पुरोधा चैन सिंह का पुरजोर विरोध करती है, जो मुलिया का इज्जत लूटना चाहता है। कहानी में वर्ग भेद एवं सभ्यता के आवरण में छिपी विलासी प्रवृत्ति पर प्रहार किया गया है। यहां प्रेमचन्द दलित नारी पात्र में अदम्य साहस भरकर, दलित-चेतना जागृति का सफल प्रयास किया है।

‘विध्वंस’ कहानी हमारे आसपास हो रहे सामाजिक और आर्थिक दमन के खिलाफ़ संघर्ष की कहानी है। इस कहानी में दलित भुगनी गोढ़ीन द्‌वारा जमा किए गए पत्ते में जमींदारों द्‌वारा आग लगाए जाने पर, भुगनी भी जल कर मर जाती है। किन्तु वह संघर्ष करना नहीं छोड़ती। इस कहानी में दलित की पीड़ा, वेदना, जीवनानुभव एवं संघर्षशीलता को देखा जा सकता है।

'सिर्फ एक आवाज' कहानी में दलित-अस्मिता आंशिक रूप से दृष्टिगोचर होती है। कहानी में समाज के पुरोधा ठाकुर दर्शन सिंह मानते हैं कि दलितों से रोटी-बेटी का रिश्ता भले न हो पर, मानवता का व्यवहार होना ही चाहिए। जबकि अम्बेडकर जी मानते थे कि बिना बेटी-रोटी के संबंध का जाति निर्मूलन संभव नहीं है। वे अछूतोद्‌धार एवं अस्पृश्यता निवारण के पक्ष में अपनी बात

रखते है। प्रेमचंद दर्शन सिंह से कहलवाते है.." इसलिए मेरे भाइयों और दोस्तों आइए इस मौके पर शाम के वक्त पवित्र गंगा नदी के किनारे काशी के पवित्र स्थान में हम मजबूत दिल से प्रतिज्ञा करे कि आज से हम अछूतों के साथ भाई चारे का सलूक करे।"[3]

'सौभाग्य के कोड़े' कहानी में प्रेमचन्द दलितों द्वारा धर्म परिवर्तन रूपी समस्या की ओर इशारा किया है। सवर्ण रायसाहब अनाथ दलित नथुना को ईसाई मिशनरी के चंगुल से सिर्फ हिन्दू बनाए रखने के लिए ही छुड़ाते है, ताकि उस पर सभी वर्जनाएं लादी जा सके। प्रेमचन्द लिखते है .."राय साहब ने उसे एक ईसाई के पंजे से छुड़ाया था। इन्हें इसकी परवाह न हुई कि मिशन में उसकी शिक्षा होगी, आराम से रहेगा। उन्हें यह मंजूर था कि वह हिंदू रहे। अपने घर के जूठे भोजन को वह मिशन के भोजन से कहीं पवित्र समझते थे। उनके कमरों की सफाई, मिशन की पाठशाला की पढ़ाई से कहीं बढ़कर थी। हिंदू रहे चाहे जिस दशा में रहे।"[4] घर से निकाले जाने के बाद नथुना संगीत का आचार्य बनकर राय साहब की बेटी से विवाह करता है। इस कहानी में दलितों की संघर्षशीलता और कर्मण्यता को प्रस्तुत किया है।

'मंत्र' कहानी दलित मुद्दों के साथ तात्कालिक समय में हिन्दू के दलितों द्वारा धर्म परिवर्तन की समस्या को उजागर करती है। यहां हिंदू संस्थाओं द्वारा दलितों को हिन्दू बनाए रखने में किए जा रहे प्रयास उद्धृत है। मद्रास में दलितों के धर्मांतरण रूपी समस्या को लेकर जब पंडित लीलाधर सांप्रदायिक हमलों में मरणासन्न हो जाते है, तब दलित बूढ़ा चौधरी ही उनकी सेवा करता है। यहां लीलाधर और दलित बूढ़ा चौधरी में सामंजस्य दिखाकर, दलितों की पीड़ा को कम करने का प्रयास है। प्रेमचन्द लिखते है.." पण्डित जी ने शूद्रों और भीलों का आदर करना सीख लिया था। उन्हें छाती से लगाते, अब पंडित जी को घृणा नहीं होती थी। अपने घर अंधेरा पाकर ही ये इस्लामी दीपक की ओर झुके थे।"[5]

'शूद्रा' कहानी भी दलित की पीड़ा एवं संवेदना को आंशिक रूप से समाहित करता है। मंगरू शूद्र नहीं होने के बावजूद शूद्र गौरी की सुंदरता पर मुग्ध होकर विवाह कर लेता है। मंगरू का बहनोई सिर्फ शूद्र गौरी से विवाह के कारण उसके साथ खाने से इनकार कर देता है। उसका बहनोई कहता है.." तुम खा लो , मै फिर खा लूंगा। मंगरू- बात क्या है? तुम खाने क्यों नहीं उठते? बहनोई- जब तक पंचायत न होगी, मै तुम्हारे साथ कैसे खा सकता हूं? तुम्हारे लिए बिरादरी भी नहीं छोड़ दूंगा।"[6]

'मंदिर' कहानी पर डॉ अम्बेडकर के द्वारा चलाए गए दलितों के मंदिर प्रवेश आंदोलन का असर साफ़ दिखता है। नायिका दलित सुखिया अपने बीमार पुत्र हेतु मनौती रखती है। हिंदू धर्म में दलितों पर जबरदस्ती लगाए गए प्रतिबंधों से, वह मंदिर प्रवेश नहीं कर पाती है। पंडितों के विरोध पर सुखिया अपने मरणासन्न पुत्र को गोद में लिए विलाप करती है.."तो क्या भगवान चमारों को नहीं सिरजा है? चमारों का भगवान कोई और है? इस बच्चे की मनौती है, सरकार।

इस पर वही भक्त महोदय जो अब स्तुति समाप्त कर चुके थे, डपटकर कर बोले, मार के भगा दो चुड़ैल को। भ्रष्ट करने आई है, फेंक दो थाली वाली। संसार में तो आप ही आग लगी हुई है। चमार भी ठाकुर जी की पूजा करने लगेंगे तो पृथ्वी रहेगी कि रसातल को चली जाएगी।"[7]

'सद्गति' अभिजात वर्ग का दलित वर्ग के प्रति अमानवीय सोच की कहानी है। सामाजिक वर्ण व्यवस्था एवं अस्पृश्यता के कारण दलित पात्र दुखी की बलि चढ़ जाती है। कहानी हिंदूवादी समाज में दलित-जीवन-यथार्थ तो दिखाता है, पर दलित चेतना नहीं जगा पाती है। दलित पात्र दुखी बिना प्रतिरोध के अपनी जान दे देता है। पंडित के लिए दुखी की बेटी का सगुण विचारने का तुच्छ-सा कार्य की कीमत उसकी जान है। प्रेमचंद अंत में लिखते है.."उधर दुखी की लाश को खेतों में गीदड़ और गिद्ध, कुत्ते और कौए नोच रहे थे। यही जीवन-पर्यन्त की भक्ति, सेवा और निष्ठा का पुरस्कार था। "[8]

'ठाकुर का कुंआ' और 'दूध का दाम' कहानी को ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने भी दलित चेतना एवं विमर्श की कहानी माना है। पानी जो सभी जीवो के लिए प्रकृति-प्रदत्त चीज है, जिसके लिए आज भी दलितों को जलील होना पड़ता है। दलित पात्रा गंगी अपने बीमार पति हेतु पानी लेने, विवशता एवं लाचारीवश ठाकुर के कुएं तक चली जाती है। यहां पति जोखू का संवाद देखिए.."हाथ पांव तुड़वाईगी और कुछ नहीं होगा। बैठ चुपके से। ब्राह्मण देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहू जी एक के पांच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है? हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई द्वार झांकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है।" [9]

'दूध का दाम' कहानी में प्रेमचन्द दलित पात्र मंगल के माध्यम से दलितों में चेतना जागृत करने में सफलता पाई है। कहानी में भुंगी और गुदड़, भंगी जाति का है एवं महेशनाथ ऊंची कही जाने वाली जाति से है। आवश्यकता पड़ने पर महेशनाथ भूँगी का दूध अपने पुत्र को पिलावता है, पर भुंगी का पुत्र मंगल को जूठन भी नसीब नहीं होता है। इस तरह दलितों की सेवा का जूठी थाली से अधिक कोई मूल्य नहीं है। मंगल अपने अधिकार की बात करता है। सुरेश से कहता है.."मैं कब कहता हूं कि मैं भंगी नहीं हूं, लेकिन तुम्हे मेरी मां ने ही दूध पिलाकर पाला है। जब तक मुझे भी सवारी करने को नहीं मिलेगा, मै घोड़ा न बनूंगा।"[10] कहानी का अंतिम वाक्य ध्यातव्य है.."लोग कहते है, दूध का दाम कोई चुका नहीं सकता और मुझे दूध का यह दाम मिल रहा है।"

'कफन' कहानी में महाजनी व्यवस्था ने घीसू और माधव की स्थिति दयनीय कर दी है। यह कहानी दलित शोषित वर्गों के अमानवीकरण प्रक्रिया का संवेदनशील उदाहरण है। प्रेमचंद की 'कफन' अंतिम कहानी है, जो दलित जीवन ही नहीं, भारतीय समाज के संपूर्ण परिवेश को पाठकों के समक्ष रखती है। यहां दलित पात्र घीसू और माधव को अकर्मण्य, कामचोर, निठल्ला बताया गया है, जो महाजनी एवं सामंती व्यवस्था का फल था। इसीलिए 'कफ़न' को ओमप्रकाश वाल्मीकि जी दलित सरोकार की कहानी नहीं मानते है। यह दलित-जीवन-यथार्थ से तो संबंधित है, पर दलित

चेतना जागृति में सहायक नहीं है। वाल्मीकि जी लिखते है.."हिंदी समालोचक चाहे जितने तर्कों, मापदंडों, वैचारिक आवरणों में लपेटकर श्रेष्ठ या उत्कृष्ट कलात्मक कहानी सिद्ध करते रहे, दलित के लिए यह कहानी हिंदूवादी, वर्णवादी सोच की कहानी है, जिसमें दलित की आंतरिक व्यथा का कहीं कोई संकेत तक नहीं है, केवल उनकी अकर्मण्यता (?) को ही दिखाया गया है, जो एक पक्षीय सोच और मानसिकता की नकारात्मक कहानी है।"[11]

उपन्यासों में दलित-जीवन-यथार्थ

उपन्यास में '**रंगभूमि**' का विशेष उल्लेख है। जब उस समय अभिजन नायक की प्रतिष्ठा थी, तब प्रेमचंद ने रंगभूमि का नायक एक दलित सूरदास को बनाया। सूरदास गांव का सबसे ज्यादा परोपकारी, उदार एवं सच्चरित्र व्यक्ति रहता है। यह उपन्यास दलित चरित्र की दिव्यता को उजागर करता है। **'कर्मभूमि'** का नायक अमरकांत सवर्ण कही जाने वाली जाति का होते हुए भी, दलितों के लिए सामाजिक समानता हेतु संघर्ष करता है। वह किसान आंदोलन, दलितों के मंदिर प्रवेश आंदोलन, आदि के माध्यम से समग्र समाज की परिधि को सम्मिलित कर लेता है। **'गोदान'** उपन्यास में भी दलित समस्या का निर्दशन होता है। पंडित मातादीन की सिलिया चमारन से प्रेम कहानी, उसके चरित्र का बखान करता है। मातादीन के पकड़े जाने पर चमार उसके मुंह में विरोधस्वरूप हड्डी डालकर, समाज की खाई पाटने का प्रयास करता है। सीलिया का बाप हरखू मातादीन को अपनी जाति का बनाना चाहता है। उसका कहना है कि तुम चमार बनो नहीं तो हमे ब्राह्मण बनाओ। तुम यदि हमारी इज्ज़त लेते हो तो, अपना धर्म हमे दे दो। सवर्णों द्वारा कर्मकांड रूपी शोधक से मातादीन का शुद्धिकरण किया जाता है।

प्रख्यात दलित साहित्यकार एवं चिंतक ओमप्रकाश वाल्मीकि गोदान में प्रेमचन्द को यथास्थितिवादी एवं गांधीवादी आदर्शो से प्रेरित पाते है। वाल्मीकि जी लिखते है.."होरी की चिंता उत्पीड़न से मुक्त होने के बजाय 'गोदान' करके अगला जीवन सुधारना है। होरी में वर्ग चेतना नहीं धार्मिक चेतना है और यही प्रेमचन्द की विकास-यात्रा का विरोधाभास भी है कि वे इस कालजयी कृति का शीर्षक 'गोदान' रखते है। जिसका सीधा संबंध भारतीय जीवन में रचे-बसे धार्मिक और कर्मकांडी संदर्भों से जुड़ता है।"[12] सन 1936 में लिखे गए इस उपन्यास में अंबेडकर के विचारों का प्रभाव भी परिलक्षित होता है।

उपसंहार

प्रेमचंद सर्वप्रथम अपने कथा साहित्य में दलित अस्मिता, समस्या, पीड़ा को मार्मिक कथा के माध्यम से भारतीय समाज के समक्ष लाने का सफल प्रयास करते हैं। उन्होने अपने अनेकोंकहानियों का कथावस्तु, दलितों की संवेदना एवं अस्मिता को बनाया है। प्रेमचंद अपनी रचनाओं में दलितों को नायकत्व प्रदान कर, सही अर्थ में हिन्दी दलित साहित्य का बीजारोपण

किये थे। निसंकोच प्रेमचंद वर्तमान में सभी दलित साहित्यकारों के लिए आजीवन प्रेरणा स्रोत रहेगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. वाल्मीकि ओमप्रकाश, दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ, राधाकृष्ण प्रकाशन, दूसरा संस्करण, 2024, पृष्ठ 132
2. स. कालिया रवींद्र, प्रेमचन्द : दलित एवं स्त्री विषयक विचार, ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृष्ठ 14
3. प्रेमचन्द, सिर्फ एक आवाज, हिंदी कहानी.हिंदी-कविता. कॉम
4. प्रेमचन्द, सौभाग्य के कोड़े, हिंदी कहानी.हिंदी-कविता. कॉम
5. प्रेमचन्द, मंत्र, हिंदी कहानी.हिंदी-कविता. कॉम
6. प्रेमचन्द, शूद्रा, हिंदी कहानी.हिंदी-कविता. कॉम
7. प्रेमचन्द, मंदिर, हिंदी कहानी.हिंदी-कविता. कॉम
8. प्रेमचन्द की सर्वश्रेष्ठ कहानियां, साधना प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 324
9. डॉ आशीष वशिष्ठ, प्रेमचन्द: दलित जीवन संबंधी कहानियां, ई बुक, पृष्ठ 50
10. वही, पृष्ठ 136
11. वही, पृष्ठ 137
12. वही, पृष्ठ 125- 126

मो. 9110939476

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 176-179
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मानव जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों की प्रासंगिकता

नेहा कुमारी, शोधच्छात्रा,
संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू।

भारतीय संस्कृति की मूल भावना आध्यात्मिक है। सर्वोत्तम आनन्द जो हमारे मन, आत्मा, और शरीर को अखण्ड आनन्द प्रदान करता है वह आध्यात्मिक आनन्द ही है, मानव जीवन की सार्थकता और कृतकृत्यता आध्यात्मिक सुख शान्ति में ही है।

आध्यात्मिक शब्द अध्यात्म + ठञ् प्रत्यय से निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है– परमात्मा से सम्बन्ध रखने वाला, आत्मा सम्बन्धी पवित्र एवं मन से सम्बन्ध रखने वाला। अध्यात्म के विषय में भगवद्गीता में कहा है– ''**स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते**''।[i] अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा अध्यात्म नाम से जाना जाता है। अध्यात्म होने का अर्थ भौतिकता से परे जीवन का अनुभव करना है। ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति करने का मार्ग अध्यात्म है। अध्यात्म ही मनुष्य को स्वयं के साथ जुड़ने और इसका सूक्ष्म विवेचन करने में समर्थ बनाता है।

आत्मविश्वास ही वास्तविक अध्यात्मिक उन्नति है। यह एकांगी उन्नति नहीं बल्कि सर्वांगीण है। यही पूर्ण धर्म है, इससे ही हमारी बुद्धि की शक्ति बढ़ती है और धीरे–धीरे हमें आत्मस्फूर्ति प्राप्त होती है, आध्यात्मिकता से ही मनुष्य का संकल्प प्रबल होता है तथा उसे अपने कार्य में सफलता प्राप्त होती है। मनुष्य जीवन के आध्यात्मिक जीवन के दो मुख्य उपाय हैं– तप और त्याग। तप अभ्यास का परिणाम है और त्याग वैराग्य का । नैतिकता तप सिखाती है और सत्यता त्याग सिखाती है। नैतिकता धार्मिक जीवन का आवश्यक अंग है। नैतिक शुद्धता और सदाचारयुक्त हृदय में ही आध्यात्मिकता का प्रादुर्भाव होता है एवं परिणामों का दिव्य अनुभव हमें प्राप्त होता है।

वेद न ही केवल यज्ञादि अनुष्ठानों के माध्यम से इष्टप्राप्ति और अनिष्ट परिहार का मार्ग प्रशस्त कर पारलौकिक सत्ता की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होते हैं अपितु जन सामान्य के विकास एवं मानव में मानवीय गुणों को अभिवृद्धार्थ और ज्ञान पक्ष की अनिवार्यता सिद्ध करते हुए अनासक्ति कर्म योग का भी उपदेश देते हैं। चतुष्टय नाम से प्रसिद्ध अपौरूषेय ग्रन्थ ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद मानव जीवन में दुःखों की निवृति करते हुए अभ्युदय के मार्ग को प्रशस्त करते हैं।

मनुष्य जीवन का प्रयोजन दुःख निवृति एवं परमानन्द प्राप्ति करना है अध्यात्मिक ज्ञान ही मनुष्य को दुविधा और संकट की स्थिति में सही दिशा दिखाता है। 'केनोपनिषद्' में कहा है कि यदि इस जन्म में मनुष्य परब्रह्म परमात्मा का ज्ञान प्राप्त कर लेता है तो वह शाश्वत सत्य होता है यदि इस जन्म में वह परब्रह्म परमात्मा का ज्ञान प्राप्त नहीं करता है तो उसका विनाश हो जाता है। धैर्यशाली लोग प्रत्येक जीव में (आत्मभाव से) परब्रह्म परमात्मा का अनुसन्धान कर इस मृत्युलोक से देह त्याग कर अमर हो जाते हैं।[ii] यजुर्वेद में कहा है कि हमारा मन निरन्तर परब्रह्म परमात्मा की आराधना में लगा रहे ओर हम भगवत्प्राप्तिजनित अनुभूति के लिए पूर्णशक्ति से प्रयत्नशील रहें।[iii]

वेदों में यही आध्यात्मिक संदेश दिया गया है कि मनुष्य को केवल भगवान का ही आश्रय लेकर उनमें ही तन्मय रहना चाहिए जैसा कि ऋग्वेद में भी कहा है कि सबका हित चाहने वाले उपासक लोगो! तुम परमैश्वर्य सम्पन्न, सब कामनाओं को पूर्ण करने वाले, सर्वरक्षक और सबके कल्याण कारक एकमात्र परमात्मा की ही उपासना करो, किसी जड़ पदार्थ तथा किसी पुरूष विशेष की उपासना परमात्मा के स्थान में मत करो मनुष्य को उसका ही साक्षात्कार करने का प्रयत्न करना चाहिए तथा जिन आर्ष ग्रन्थों में परमात्मा के गुणों का वर्णन किया गया है अथवा जिन ग्रन्थों में उसके साक्षात्कार

करने का विधान है, उन ग्रन्थों का नित्य स्वाध्याय करते हुए मनन करना चाहिए। परमात्मा के अतिरिक्त अन्य किसी की भी उपासना करते हुए आत्मश्रेय का नाश नहीं करना चाहिए।[iv] यजुर्वेद में भी इस प्रकार का वर्णन प्राप्त होता है मानव शरीर अनेक पुण्य एवं प्रतापों के फलस्वरूप प्राप्त होता है। मनुष्य शरीर अन्य सभी शरीरों से परमश्रेष्ठ एवं दुर्लभ है, इस प्रकार के दुर्लभ शरीर को भी प्राप्त करके जो मनुष्य अपने कर्म जाल को ईश्वर की आराधना के लिए समर्पित नहीं करते और विषयवासनादि को ही जीवन का परम ध्येय मानते हुए प्रतिक्षण विषयों में आसक्त तथ उनके उपभोग में ही लगे रहते हैं। इस प्रकार के प्राणी निस्सन्देह अपनी आत्मा की हत्या करने वाले होते हैं। वे मर कर भी उन्ही भयंकर असुरों के लोकों को बार–बार प्राप्त होते हैं।[v] क्योंकि जो मनुष्य परमात्मा से अन्य की उपासना करने वाले होते हैं, वे आत्महिंसक ऐहिक और पारलौकिक सुख से सदा वचिंत रहते हैं।

वैदिक संस्कृति की मूलभित्ति त्याग और तपस्या पर आधृत है। वह नर को नारायण बनाती है जिस प्रकार अथर्ववेद में कहा गया है–

अयुतोऽहमयुतो मे आत्मायुतं मे चक्षुरयुतं मे श्रोत्रमयुतो।
मे प्राणोऽयुतो मेऽपानोऽयुतो मे व्यानोऽयुतोऽहं सर्वः।।[vi]

अर्थात् मैं परिपूर्ण हूँ, मैं अखण्ड हूँ, मेरी आत्मा अखण्ड है, चक्षु शक्ति अखण्ड है, श्री शक्ति अखण्ड है। मेरे प्राण विश्वात्मा के प्राण से संयुक्त हैं, मेरं श्वास अच्छ्वास भी विश्व पुरूष के श्वास–प्रश्वास से सम्बद्ध हैं। मेरी आत्मा विश्वात्मा से विभक्त नहीं है। मेरी सम्पूर्ण सत्ता उससे अविभिन्न एवं अखण्ड है। मनुष्य को अपने आत्मविश्वास के लिए भगवान की कृपा को साध्य एवं साधन मानकर उसे ही पथ प्रदर्शक आत्मबलदायक एवं प्रेरणादायी स्रोत मानना चाहिए क्योंकि परमात्मा के साथ जुड़कर ही वह सकारात्मक और आध्यात्मिक मानसिकता को बढ़ावा देकर, जीवन की चुनौतियों और संघर्षों के बीच शान्ति, सद्भाव एवं संतुष्टि पा सकता है। वेदों में कहा गया है कि ईश्वर से भिन्न अन्य कोई सुख नहीं इसलिए मनुष्य को अन्यत्र कही नही भटकना चाहिए। परमात्मा ही सब सुखों के मूल स्रोत हैं और उसी सुख से मानव का चित्त तुष्ट हो सकता है।[vii]

मनुष्य के भीतर भक्ति का ज्ञान उत्पन्न होते ही उसमें मुक्ति की वासना समाप्त हो जाती है। ऐसा जीवन ही वेदिक संस्कृति का आदर्श है।

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः उशतीरिव मातरः।।[viii]

अर्थात् प्रभो! जो आपका आनन्दमय भक्तिरस है, हमें वही प्रदान करें। जैसे शुभकामनामयी माता अपनी सन्तान को संतुष्ट एवं पुष्ट करती है, वैसे ही आप मुझ पर कृपा करें

ज्ञान एवं कर्म का अन्तिम परिणामरूप भक्ति और उस भक्ति के अन्तिम परिणामरूप उन विराट विश्वरूप पुरूषोत्तम की शरणागति को प्राप्त करना है जैसा कि ऋग्वेद में कहा गया है कि हे परम तेजोमय परमेश्वर! मनुष्य दीनता दुर्बलता के कारण अपने संकल्प से, प्रज्ञा से, कर्त्तव्य से विमुख हो जाता है, इसलिए आप हम पर कृपा करिए और हमें सुख प्रदान करें।[ix]

मनुष्य को ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें सन्मार्ग पर लायें एवं हमारे अन्तःकरण को उज्जवल कर आत्मश्रेय के सर्वोच्च शिखर को प्राप्त करने की हमें सफलता प्रदान करें। सामवेद में कहा गया है–

''भद्रं मनः कृणुष्व''[x]

अर्थात् हे प्रभु! हमारे मन को कल्याण मार्ग में प्रेरित करें । इसी प्रकार ऋग्वेद में कहा है–

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव।।[xi]

अर्थात् हे सारे जग के उत्पादक प्रेरक देव! तू हमारे सारे दुराचरणों को दूर करके सभी कल्याणकारी गुण हम में भर दे। मनुष्य के मन को मोह, क्रोध, मत्सर, काम, मद और लोभ की दुवृत्तियां सदैव घेरे रहती हैं। इन छः प्रकार के मानसिक शत्रुओं का निवारण तभी हो सकता है जब मनुष्य के भीतर आध्यात्मिक ज्ञान हो और वह ज्ञान उसे वेदों से प्राप्त होता है। ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्य मृत्यु को पार करके मोक्षपद प्राप्त करता है, जो मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है।

वेद भगवान के सविंधान हैं, इनमें ऐसे अनेक मन्त्र हैं, जिनसे शिक्षा प्राप्त कर मनुष्य अध्यात्म के सर्वोच्च शिखर पर पहुंच सकता है। जैसे **ऋतस्य पथा प्रेत**।[xii] अर्थात् सत्य के मार्ग पर चलो। **ओ३म् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतूँ स्मर।।** अर्थात् यज्ञादि कर्मों का स्मरण रखो। अपने सामर्थ्य एवं दूसरे के उपकार को स्मरण रखो। वेदों में इस लोक को सुखमय तथा परलोक को कल्याणमय बनाने के लिए

मनुष्य जीवन के लिए आचार विचारों के पालन का विधान तो किया ही है, अपितु उसके साथ ही आध्यात्मिक साधनों में जो बाधक अनेक निन्दित कर्म है, उनसे भी दूर रहने का निर्देश दिया गया है। जैसे ऋग्वेद में कहा गया है कि **अक्षैर्मा दीव्यः** अर्थात् जुआ मत खेलो।[xiii] इसी तरह यजुर्वेद में भी कहा कि – **मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।**[xiv] अर्थात् पराये धन का लालच मत करो। **मा हिंसीः पुरूषात् पशूश्च।** अर्थात् मनुष्य और पशुओं को मन, कर्म एवं वाणी से कष्ट न दो।

अतः कहा जा सकता है कि आज संसार में निर्दयता की भावना प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। क्रूरता तथा अशान्ति का चारों ओर साम्राज्य है। हाहाकार की हृदयविदारिणी ध्वनियां चारों ओर सुनायी दे रही हैं। जिसका मूल कारण है– आध्यात्मिकता का आभाव। आज यदि मनुष्य जीवन में शान्ति तथा आनन्द का साम्राज्य स्थापित करना है, तो मनुष्य को आध्यात्मिक साधना का आश्रय लेना पड़ेगा। आध्यात्मिक उन्नति के लिए मनुष्य को श्रद्धापूर्वक ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें सन्मार्ग प्रदान करें।

शास्त्रों में भी कहा गया है कि विद्या वही है जो मनुष्य जीवन को मुक्त करे अर्थात् शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो मनुष्य को उसके दुर्गुणों, दुर्विचारों आदि से मुक्त करे, एवं मनुष्य के आन्तरिक बाह्य दोषों का पूर्ण प्रक्षालन करके एक ऐसे आदर्श मानव का निर्माण करे जिसके आचार विचार व्यवहार पूर्णतया शुद्ध पवित्र हों क्योंकि जिसका आचरण ठीक है वही वास्तव में आदर्श व्यक्ति है। इस प्रकार प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा गुरूकुल जो शिक्षा दी जाती थी उसका उद्देश्य ही विद्यार्थीयों का चरित्र निर्माण करना था परन्तु आज की शिक्षा इस उद्देश्य से पूरी तरह भटक गई है, एक अच्छे मानव जीवन का निर्माण शिक्षा की प्राथमिकता होनी चाहिए परन्तु अब वह नहीं है अब तो केवल करियर निर्माण की अन्धी दौड़ लगी हुई है जिसके कारण मानवीय मूल्य लुप्त हो गये हैं।

आज संसार में अच्छे मनुष्य की सर्वाधिक आवश्यकता है क्योंकि एक अच्छा व्यक्ति ही सुख, शान्ति, सद्भावना वाले समाज, राष्ट्र एवं विश्व के उदय में सहायक हो सकता है। इसके लिए मनुष्य जीवन में आध्यात्मिक का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि आज शिक्षित व्यक्तियों को विविध तकनीकी विधाओं का श्रेष्ठतम ज्ञान तो है पर वह जीवन में शान्ति एवं सुकून से वंचित है जिसके कारण उनमें निराशा, हताशा, अवसाद, विषाद एवं अशान्ति की स्थिति उत्पन्न होती रहती हैं। आध्यात्मिकता के प्रभाव से ही मानव अपने जीवन की चुनौतियों और संघर्षों के बीच भी शान्ति और सन्तुष्टि स्थापित कर सकता है। आध्यात्मिक संयम का उद्देश्य मन को उसकी मलिनता से शुद्ध करना है जिसके कारण अज्ञान की निवृत्ति हो जाती है और अन्तः करण निर्मल हो जाता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अध्यात्म या आत्मतत्व का ज्ञान हो जाने पर कुछ भी शेष नहीं रहता। इस शाश्वत तत्व का ज्ञान होने पर मनुष्य सर्वथा शोक संताप से मुक्त हो जाता है। दुःख समाप्त नहीं होते, लेकिन दुःख का अहसास समाप्त हो जाता है। दृश्य तो नहीं बदलते लेकिन दृश्यों को देखने की दृष्टि बदल जाती है। अध्यात्म की गहरी समझ और अनुभूति हो जाने पर मनुष्य सम्पूर्ण सृष्टि में स्वयं को और स्वयं को सम्पूर्ण सृष्टि में देखने लगता है। उसे जड़ चेतन तथा हर जीव में एक ही चेतना के दर्शन होते हैं और द्वैत भाव समाप्त हो जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

i. भगवद्गीता 8/3

ii. इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः। केनोपनिषद 2/5

iii. युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे। स्वर्गाय शक्तया।। यजुर्वेद 11/2

iv. मा चिदन्यद् वि शंसत सखायो मा रिषण्यत्।
इन्द्रमित स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरूक्था शंसत्।। ऋग्वेद 8/1/1

v. असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।। यजुर्वेद 40/3

vi. अथर्ववेद 19/51/1

vii. न ह्यन्यं वळाकरं मर्डितारं शतक्रतो। त्वं न इन्द्र मृळय।। ऋग्वेद 8/80/1

viii. अथर्ववेद 1/5/2, ऋग्वेद 10/9/2

ix. क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे। मृळा सुक्षत्र मृळय।।
ऋग्वेद 7/89/3

x. सामवेद, मन्त्र संख्या 1560
xi. ऋग्वेद 5/82/4
xii. यजुर्वेद 7/45
xiii. ऋग्वेद 10/34/13
xiv. यजुर्वेद 40/1

E-mail ID: nehakumari6977@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 180-186
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अटल भूजल योजना के अन्तर्गत नीम का थाना पंचायत समिति का एक अध्ययन

राजेश जाट, सहायक आचार्य भूगोल,
राजकीय महाविद्यालय मोमासर, श्रीडूंगरगढ़, बीकानेर।

शोध सार :-

जल सम्पूर्ण जीव जगत एवं पादप समुदाय के विकास एवं जीवन के लिए मूलभूत संसाधन है। जीव मंडल की सभी पर्यावरणीय क्रियाएं जल द्वारा ही संचालित होती है। दुनिया में मानव बसाव जल स्त्रोतों के निकट ही होता है। जल की कमी से जीव जगत की गतिविधियां बाधित होती है। मानव ने पिछले कुछ सालों में विकास की गतिविधियों के लिए जल का अत्यधिक दोहन किया है। जिससे षुद्ध जल की मात्रा प्रकृति में कम होती जा रही है। यद्यपि जल की मात्रा तो यथावत रहती है लेकिन स्वरूप बदल जाता है। बढ़ती जनसंख्या के कारण जल की मांग बढ़ती जा रही है और षुद्ध जल की मात्रा घटती जा रही है। अतः षोध सार की मूल विषय वस्तु जल संकट से निजात पाकर पोषणीय उपयोग करना है।

राजस्थान देश का सबसे बड़ा राज्य है एवं देश के भू भाग का लगभग 10 हिस्सा है। देष की लगभग 5.67 जनसंख्या यहां निवास करती है। राजस्थान प्रदेश देश के उत्तर–पष्चिमी भाग में स्थित है, एवं लगभग 3.42 लाख वर्ग किमी. क्षेत्र में फैला हुआ है। देश की 13.88 खेती योग्य भूमि एवं 11 पशुधन भी इस प्रदेष में है। देश के मुकाबले प्रदेश में केवल 1.16 सतही जल एवं 1.70 भू–जल संसाधन ही उपलब्ध है। अरावली पर्वतमाला प्रदेश को दो भागों में विभाजित करती है, जिससे यही की जलवायु अत्यंत विषम है। प्रदेश के उतर–पश्चिमी हिस्से में अत्यधिक गर्मी एवं दक्षिण–पूर्वी हिस्से मे ंनम वातावरण रहता है। अरावली क्षेत्र के पश्चिमी भाग में सबसे कम बरसात होती है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 300 मि0 मि0 तक है। जबकि पूर्वी भाग में सबसे अधिक वर्षा होती है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 900 मि0मि0 है। अकाल इस प्रदेश के पश्चिमी भू भाग के पर्यावरण का एक मूल हिस्सा बन चुका है।

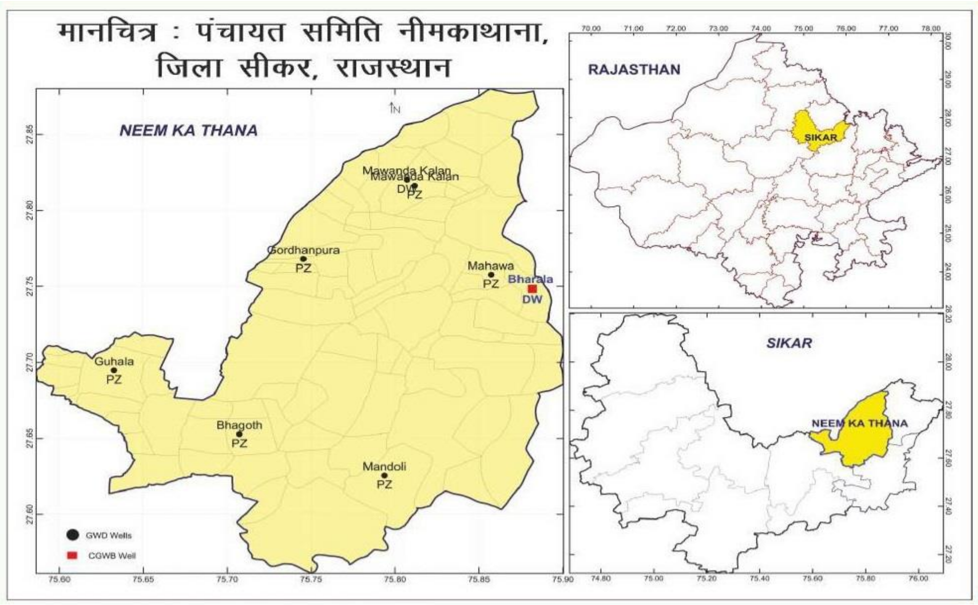
मानचित्र : पंचायत समिति नीमकाथाना,
जिला सीकर, राजस्थान
NEEM KA THANA
Mawanda Kalan DW PZ
Gordhanpura PZ
Mahawa PZ
Bharala DW
Guhala PZ
Bhagoth PZ
Mandoli PZ
GWD Wells
CGWB Well
RAJASTHAN
SIKAR
SIKAR
NEEM KA THANA

अध्ययन क्षेत्र का परिचयः–

नीम का थाना , राजस्थान राज्य के सीकर जिले में स्थित है। जो सीकर शहर मुख्यालय से 80 किमी. दूर पूर्व दिशा में स्थित है। नीम का थाना से कोटपूतली 50 किमी. , श्रीमाधोपुर 40 किमी. ,खेतडी 35 किमी. ,उदयपुरवाटी 40 किमी. , नारनोल 60 किमी. दूर कुछ प्रमुख शहर एवं कस्बे हैं। नीम का थाना के उत्तर में हरियाणा राज्य का महेन्द्रगढ़ जिला, उत्तर–पश्चिम में झुन्झुनु , पूर्व में कोटपूतली–बहरोड़, दक्षिण में जयपुर जिले स्थित हैं।

स्थलाकृति :-

नीम का थाना के भौगोलिक निर्देशांक 27.740 डिग्री अक्षांश , 75.787 डिग्री देशांतर और 1,503 फीट उंचाई है। नीम का थाना के 2 मील के भीतर की स्थलाकृति में उंचाई में केवल मामूली भिन्नताएं हैं, जिसमें अधिकतम उंचाई परिवर्तन 141 फीट और समुद्रतल से औसत उंचाई 1,482 फीट है।

अध्ययन के उद्येश्य

1. अध्ययन क्षेत्र में अटल भू–जल योजना का स्वरूप प्रस्तुत करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में अटल भू–जल योजना का प्रारूप प्रदर्षित करना।
3. अटल भू–जल योजना के प्रबंधन की रूपरेखा प्रस्तुत करना।

अटल भूजल योजना का संक्षिप्त विवरण

- अटल भूजल योजना भारत सरकार एवं विश्व बैंक के सहयोग से 50–50 प्रतिशत देश के 07 राज्यों क्रमशः हरियाणा, गुजरात , महाराष्ट्र , कर्नाटक, राजस्थान , उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश राज्यों में भूजल के गिरते स्तर को रोकने , भूजल के बेहतर प्रबंधन हेतु 01 अप्रैल,2020 से लागू की गई है, जिसमें राजस्थान राज्य को भी शामिल किया गया है।
- यह योजना पांच वर्षों 2020–21 से वर्ष 2024–25 तक के लिए है।
- राज्य में यह योजना कृषि, उद्यानिक, जल संसाधन , जन स्वास्थ्य अभियांत्रिक, पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास विभाग, जल ग्रहण विकास एवं मृदा संरक्षण विभाग , उर्जा, वानिक विभाग के सम्मिलित प्रयासों द्वारा क्रियान्वित होगी।
- इस योजना के अन्तर्गत राज्य के विभिन्न विभागों यथा कृषि, उद्यानिकी, जल संसाधन, जन स्वास्थ्य अभियांत्रिक , पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास विभाग, जल ग्रहण विकास एवं मृदा संरक्षण विभाग, उर्जा, वानिकी विभाग द्वारा केन्द्रीय एवं राज्य की विभिन्न योजनाओं के आपसी समन्वय के माध्यम से सामुदायिक सहभागिता से भू–जल क्षेत्रों में कुशलतम जल प्रबंधन को बढ़ावा देने , गिरते भूजल स्तर की दर में रोकथाम करने के एवं समुदाय के जल के प्रति व्यवहार परिवर्तन के प्रमुख उद्वेश्य से संचालित की जानी है।
- यह योजना परिणाम के लिए कार्यक्रम पर आधारित है। प्रत्येक वर्ष की अवधि उपरान्त भू–जल स्तर में आने वाले सुधार के अनुक्रम में संबंधित विभागों को उनके द्वारा प्रभावित वार्षिक कार्य योजनाओं के तृतीय पक्षीय सत्यापन के आधार पर प्रोत्साहन राशि दी जाएगी।
- भू–जल स्तर में सुधार एवं भू–जल प्रबंधन में सहयोगी विभागों के विद्यमान कार्यक्रमों तथा प्रभावी नीतियों के अनुसार ही किया जावेगा। इस हेतु निम्न तीन मुख्य घटक हैं–
  - (अ) गिरते भू–जल स्तर को रोकना।
  - (ब) जन सहभागिता द्वारा भू–जल प्रबंधन को मजबूत करना।
  - (स) समुदाय के व्यवहार में परिवर्तन ।
- योजना के अधीन राजस्थान में राज्य स्तर निविदाओं /क्रय प्रक्रियाओं के प्रचलित नियम एवं प्रावधान लागू होंगे।

जन भागीदारी से जल प्रबंधन से पहल

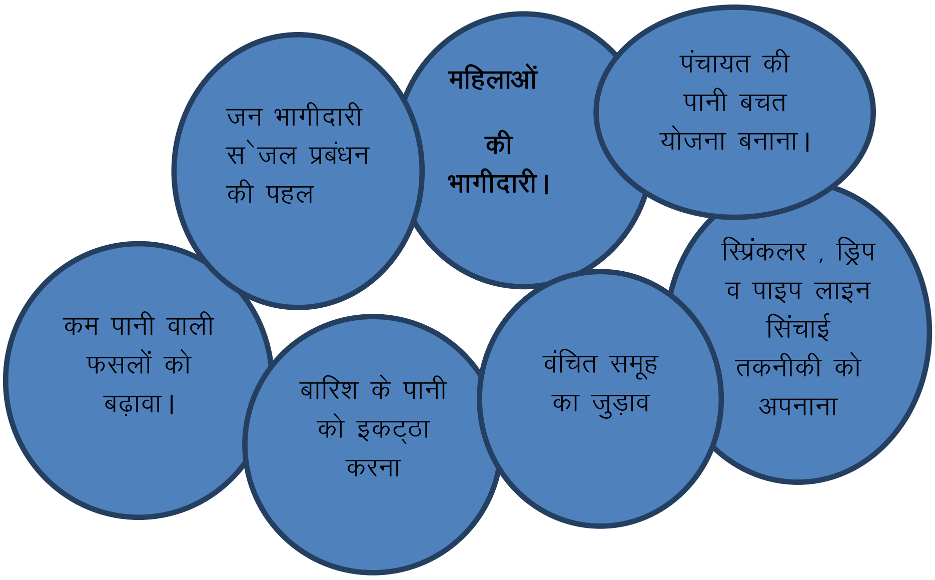
जन भागीदारी स`जल प्रबंधन की पहल
महिलाओं की भागीदारी।
पंचायत की पानी बचत योजना बनाना।
स्प्रिंकलर , ड्रिप व पाइप लाइन सिंचाई तकनीकी को अपनाना
कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा।
बारिश के पानी को इकट्ठा करना
वंचित समूह का जुड़ाव

- जन भागीदारी से हर पंचायत की पानी बचत योजना बनाना।
- महिलाओं की भागीदारी।
- वंचित समूह का जुड़ाव ।
- कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा।
- स्प्रिंकलर , ड्रिप व पाइप लाइन सिंचाई तकनीकी को अपनाना।
- बारिश के पानी को इकट्ठा कर

नीमकाथाना पंचायत समिति की भू–जल स्थिति

- सीकर जिले में नीम का थाना पंचायत समिति में दो प्रकार की भूजलीय चट्टानें बालकाश्म और क्वार्टजाइट पाई जाती है।
- भूजल विभाग द्वारा किए गए भूजल आंकलन 31–03–2020 के अनुसार नीम का थाना पंचायत समिति में भूजल निकासी दर 203.47 प्रतिशत पाई गई है। जिसके कारण नीम का थाना पंचायत समिति को ''अतिदोहित'' श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है।
- भूजल सर्वेक्षण 2020 के अनुसार मानसून पूर्व न्यूनतम जल स्तर 17.78 मी0 ग्राम मावण्डा कला , अधिकतम भूजल स्तर 57.58 मी0 ग्राम मण्ढोली एवं पंचायत समिति का औसत भूजल स्तर 37.77 मी0 पाया गया। जबकि मानसून पश्चात सर्वेक्षण में न्यूनतम जल स्तर 14.88 मी0 ग्राम मावण्डा कला ,अधिकतम भूजल स्तर 56.62 मी0 ग्राम मंढोली एवं पंचायत समिति का औसत भूजल स्तर 35.75 मी0 पाया गया।

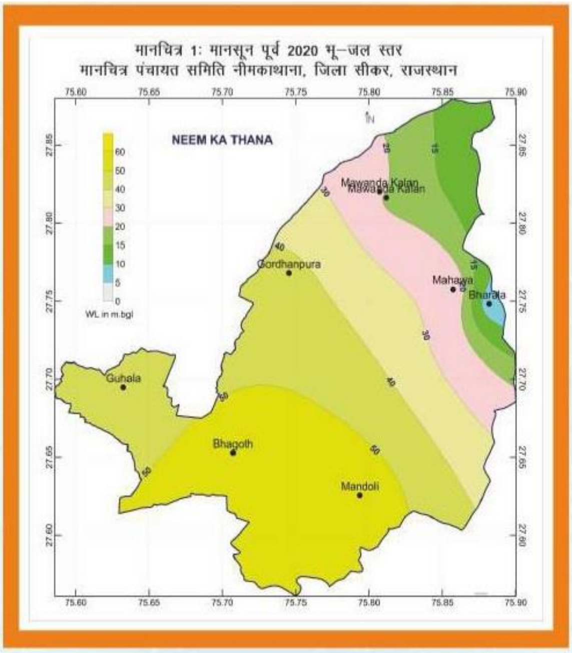
मानचित्र 1: मानसून पूर्व 2020 भू–जल स्तर
मानचित्र पंचायत समिति नीमकाथाना, जिला सीकर, राजस्थान
NEEM KA THANA
WL in m bgl
Mawanda Kalan
Gordhanpura
Mahawa
Bharala
Guhala
Bhagoth
Mandoli

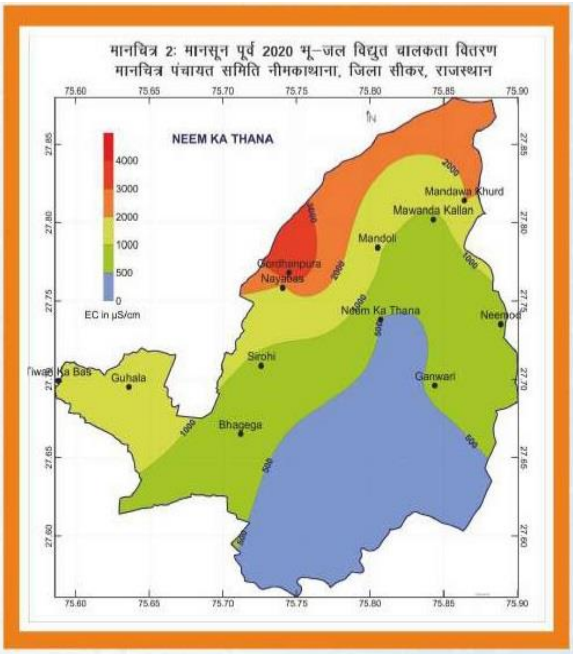
मानचित्र 2: मानसून पूर्व 2020 भू–जल विद्युत चालकता वितरण
मानचित्र पंचायत समिति नीमकाथाना, जिला सीकर, राजस्थान
NEEM KA THANA
EC in µS/cm
Mandawa Khurd
Mawanda Kallan
Mandoli
Gordhanpura
Nayabas
Neem Ka Thana
Neemod
Sirohi
Tiwari Ka Bas
Guhala
Ganwari
Bhagega

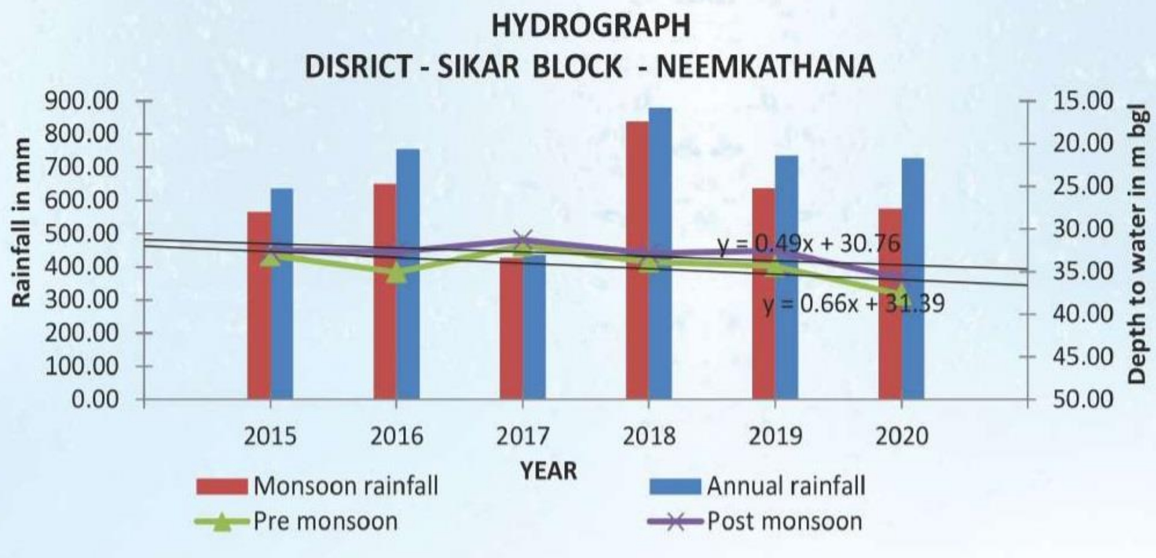

मानसून वर्षा तथा मानसून पूर्व एवं मानसून पश्चात भू – जल स्तर का ग्राम

भूजल विभाग द्वारा किए जाने वाले कार्य

अटल भूजल योजना
कार्य का नाम :- पीजोमीटर निर्माण कार्य
गहराई :-135 मीटर भूजल स्तर:-67 मी
पीजोमीटर ID :-ATAL/0122/JAI/JAL
निर्माण वर्ष :-२०२१-२२
31
कार्यकारी संस्था :- भूजल विभाग, राजस्थान सरकार

- अटल भूजल योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान किए जाने वाले जल संरक्षण कार्यों के माध्यम से भू–जल संसाधनों में होने वाले परिवर्तनों के आंकलन के लिए भू–जल विभाग द्वारा विभिन्न ग्राम पंचायतों में जहां विभाग द्वारा पहले से भू–जल स्तर मापन केन्द्र नहीं है उन स्थानों पर नए पीजोमीटर का निर्माण कराया जावे। नीम का थाना पंचायत समिति में कुल 27 स्थानों पर नवीन पीजोमीटर की स्थापना की जावेगी।
- विभाग द्वारा पूर्व में स्थापित पीजोमीटर एवं नवीन निर्मितपीजोमीटर पर वास्तविक समय पर भू–जल स्तर मापनहेतु टेलीमीट्रिक डिजिटल वाटर लेवल रिकॉर्डर कीस्थापना की जावेगी। इसके अन्तर्गत विभाग द्वारा 32 ग्राम पंचायतों में पीजोमीटर्स पर टी.डी. डब्ल्यू. एल. आर. की स्थापना कराया जाना प्रस्तावित है।
- नीम का थाना पंचायत समिति की सभी 33 ग्राम पंचायत में वर्षा जल मापन की सुविधा उपलब्ध कराकर समुदाय को वर्षा जल की उपलब्धता के बारे में जानकारी दिए जाने का प्रावधान है।
- प्रत्येक ग्राम पंचायत में कम से कम 10 किसानों को जलउपयोग के प्रति जागरूक करने के उद्धेश्य से भूजल दोहनकी इकाईयों यथा कुआं , नलकूप पर वाटर मीटर की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है।
- समुदाय को क्षेत्र की स्थानीय भूजल गुणवता समझने /जाननेके लिए कुओं /नलकूपों के जल की गुणवता का प्रशिक्षणखेत पर ही करवाया जाना प्रस्तावित है। इसके लिए योजना के अधीन सभी 33 ग्राम पंचायतों में रासायनिक गुणवता जांच किट का वितरण किया जावेगा।
- समुदाय को भूजल संसाधन एवं भूजल स्तरों की जानकारी देने के लिए सभी ग्राम पंचायतों में वाटर लेवल साउण्डर भी उपलब्ध कराये जाने का प्रावधान है। जिससे समुदाय अपने क्षेत्र के वर्षा पूर्व एवं वर्षा पश्चात भूजल स्तर में होने वाले परिवर्तनों का आंकलन स्वयं कर सके।
- समुदाय को जल के प्रति संवेदनशील, उपलब्ध जल का कुशलतम उपयोग , परिवर्तित फसल चक्र, माइक्रो इरिग्रेशन, को बढ़ावा एवं क्षेत्र की परिस्थिति के अनुसार जल संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए डीआईपी के माध्यम से समुदाय को जागरूक किए जाने का प्रावधान है।
- अटल भूजल योजनाओं के अन्तर्गत सीकर जिले की नीम का थाना पंचायत समिति की सभी 33 ग्राम पंचायतों में जल सुरक्षा योजना बनाया जाना प्रस्तावित है।

RECHARGE PIT-2

ग्रामीण जलाशयों में रिचार्ज शाफ्ट द्वारा भूजल पुनर्भरण
योजना के घटक

निवेश घटक	प्रोत्साहन घटक
इस घटक के अन्तर्गत संस्थागत सुदृढ़ीकरण , क्षमता संवर्द्धन हेतु राशि 164.68 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है। इस घटक के अन्तर्गत पीजोमीटर निर्माण , लेबोरेट्री निर्माण , डाटा सेंटर निर्माण , प्रशिक्षण, प्रचार–प्रसार एवं कार्यालय व्यय इत्यादि कार्य सम्पादन किया जावेगा।	इस घटक के अन्तर्गत राज्य में पूर्व चल रही केन्द्रीय / राज्यों की योजनाओं के अभिसरण हेतु प्रोत्साहन राशि 1024.97 करोड़ रूपये का प्रावधान रखा गया है। इस घटक के अन्तर्गत दो कार्यों 1. जल मांग आधारित पूर्ति :– कृषि के लिए कुशलतम जल प्रबंधन हेतु फव्वारा , बूंद–बूंद सिंचाई, पाइप लाइन , विद्युत सप्लाई के लिए फीडर सेपरेशन इत्यादि कार्य प्रस्तावित है। 2. जल आपूर्ति प्रबंधनः– कृत्रिम भू–जल पुर्नभरण संरचनाओं का निर्माण जैसे– चैक डेम , परकोलेशन टैंक , ट्रेन्च रिचार्ज, शॉफ्ट रिचार्ज कूप, फॉर्म पॉण्ड,वर्षा जल संरक्षण इत्यादि कार्य करवाया जाना प्रस्तावित है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1 कार्यालय परियोजना निदेशक, राज्य कार्यक्रम प्रबंधन इकाई, अटल भ–ूजल विभाग ,जयपुर।
2. अटल भूजल योजना, राज्य कार्यक्रम प्रबंधन इकाई , 72–बी, झालाना संस्थानिक क्षेत्र , भूजल विभाग जयपुर।
3. जिला कार्यक्रम प्रबंधन इकाई, भू–जल विभाग, नीम का थाना।
4. जिला कार्यक्रम प्रबंधन इकाई, भू–जल विभाग, सीकर।
5. भारती, राधाकांत 1998 भारत की नदियां नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया नई दिल्ली।
6. गुर्जर , आर. के. एवं जाट, बी. सी. , (2001), जल प्रबंधन विभाग पॉइटर पब्लिशर्स, जयपुर।
7. गुर्जर , आर. के. एवं जाट, बी. सी. , (2010) पर्यावरण भूगोल , पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
8. गुर्जर , आर. के. एवं जाट, बी. सी. , (2003) संसाधन एवं पर्यावरण, पंचशील प्रकाशन जयपुर।
9. गुर्जर , आर. के. एवं जाट, बी. सी. , (2001) प्राकृतिक आपदाएं, सुरभि पब्लिकेशन , जयपुर ।
10. जाट , बी. सी. (2009) जल ग्रहण प्रबंधन, पोइंटर पब्लिशर्स , जयपुर।
11. जाट, बी. सी. (2015) , भौतिक भूगोल , मलिक एंड कंपनी, जयपुर।
12. सूरजभान , (1982) , मृदा और जल संरक्षण , भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली।

मोबाइल नं. – 9414725480
ई–मेल आईडी– rajeshjat750@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 187-190
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

देश विभाजन का भारतीय मुस्लिम मनःस्थिति पर प्रभाव (विशेष सन्दर्भ : छाको की वापसी उपन्यास)

तृप्ति त्रिपाठी, शोधार्थी हिंदी विभाग,
डॉ. दयाल प्यारी सिन्हा, असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग,
दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टिट्यूट, दयालबाग़ आगरा

साहित्य, समाज और मानव को एक-दूसरे से अलग करना असंभव है। समाज मानव से बनता है और मानव तथा समाज का वास्तविक चित्रण साहित्य में दिखाई देता है। देश विभाजन भारतीय साहित्य इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना है जिसने साहित्य और मानव दोनों को गहरे रूप में प्रभावित किया। विभाजन का प्रभाव शारीरिक से अधिक मानसिक था और भारतीय जन की मन:स्थिति को इसने बहुत अधिक प्रभावित किया। देश विभाजन की घटना और भारतीय जनता पर पड़े इसके प्रभाव को संवेदनशील साहित्यकारों ने महसूस किया और अपने रचनाक्रम में इसे मुख्य विषय बनाया। साहित्य में विभाजन को लेकर अनेक काव्य, कहानी तथा उपन्यास लिखें गए। इसी क्रम को बदीउज़्ज़माँ द्वारा 'छाको की वापसी' उपन्यास लिखा गया। विस्थापन और उसकी पीड़ा से प्रभावित छाको की मनः स्थिति को रचनाकार ने शिद्दत के साथ उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। उपन्यास में एक स्थान पर वर्णित है कि, **"देश का बँटवारा हो गया लाखों आदमी इधर से उधर चले गए और उधर से इधर चले आए जो लोग इस उथल-पुथल से दूर रहे उनके दिल और दिमाग पर भी इसका गहरा असर पड़ा उनके सोचने समझने के ढंग बदल गए।"**[1]

उपन्यास का आरम्भ खाजो बाबू के ख़त पढ़ने से शुरू होता है जो अपने आस-पड़ोस सभी लोगों के ख़त पढ़ा करते थे। खाजो बाबू अपने लोगों में सबसे अधिक पढ़े-लिखे थे। अतः पुराने सभी लोग जो पढ़ना-लिखना नहीं जानते थे उनके पास ख़त लिखवाने और पढ़ने आते है. ख़त पढ़ने कि इसी प्रक्रिया में एक दिन उन्हें पाकिस्तान से ख़त मिलता है जो छाको ने भेजा था, ख़त को देखकर पहले तो उन्हें आश्चर्य होता है परन्तु बाद में उसे पढ़कर उन्हें असलियत का पता चलता है। छाको को इलाही मास्टर ने नौकरी के बहाने से पाकिस्तान लेते गए अगर उसे पता

होता तो वह वहाँ न जाता ख़त में वह लिखता है - **“इलाही मास्टर जिनकी दुकान में हम काम करते हैं कहिन की इलाही टेलरिंग हाउस पाकिस्तान में खोलेंगे सब कारीगरों से बोले कि हमारे साथ चलना होगा हम बड़ी मुश्किल में फँसे से इतना वक्त भी नहीं दिया कि आप लोगों से मिलकर कुछ सलाह कर सके। चार-पांच दिन के अंदर अंदर हम सबको लेकर ढाका पहुंच गए... इलाही मास्टर को दुकान नहीं मिला है खोज रहे हैं खुदा करे जल्दी मिल जाए खाली बैठे-बैठे जी घबरा रहा है।"[2]** छाको बेचारा अपने शागिर्द इलाही के साथ पूर्वी पाकिस्तान पहुँच जाता है। वहाँ नयी जगह पर पहुँच कर वह अपने लोगों को याद करता है। छाको भारत से पूर्वी पाकिस्तान भले ही चला गया हो परंतु वह वहाँ के माहौल को पूरी तरह से आत्मसात नहीं कर पा रहा था वह जब भी खत लिखता तो उसमें मोहर्रम की अपनी पुरानी यादों का जिक्र अवश्य करता और वह यह भी बताता कि वह अपनी मर्जी से यहाँ नहीं आया अपितु परिस्थितियों एवं बेहतर रोजगार की तलाश में अनजाने में यहाँ आ पहुंचा| छाको के दिल और दिमाग में आज भी अपने घर परिवार की यादें थी जो उससे कभी अलग नहीं हो पाई थी- **"उस वक्त भी वह बच्चा ही था जब इलाही मास्टर के कहने पर वह वतन को छोड़कर पाकिस्तान चला गया था और अपने जिस्म को उन हवाओं से अलग कर लिया था जिनके बीच वह पाला बढ़ा था लेकिन उसकी रूह उन हवाओं को ढूंढ रही थी उसे दूध पीते बच्चे की तरह जो माँ के दूध के लिए बिलख-बिलख के रो रहा हो और उसकी माँ उसके पास ना हो"[3]** विभाजन के दौरान मुसलमान के लिए पाकिस्तान नाम के नए राष्ट्र का निर्माण हो गया परंतु उसे समय किसी के मस्तिष्क में यह बात आई ही नहीं कि उन्हें अपना घर-बार छोड़ कर पाकिस्तान जाकर बसना होगा। भारत में रहने वाले मुसलमान में ऐसे कई मुसलमान थे जो अपनी पैदाइशी दादा-परदादा की जमीन को छोड़कर कहीं और जाकर नये सिरे से बसना उचित नहीं समझते थे लेकिन उनके कुछ रिश्तेदारों ने उन्नति और उज्वल भविष्य की उम्मीद में पाकिस्तान जाना पसंद किया| उपन्यास के पात्र हबीब भाई जो छाको के छोटे अब्बा के बेटे और उनके भाई थे उन्होंने भारत में न रहकर पाकिस्तान जाना उचित समझा और वह पूर्वी पाकिस्तान जाकर वहाँ ढाका में बस जाते हैं| हबीब भाई ने खाजो की माँ को समझाने की बहुत कोशिश की परंतु वह पाकिस्तान जाने के लिए तनिक भी तैयार नहीं हुई-**“हबीब भाई ने अम्मा को समझाने की बहुत कोशिश की थी- बड़ी अम्मा मैं सच कहता हूँ आप बहुत पछताएंगी आप कैसे रह सकती हैं यहाँ? वह भी जबकि हम लोग भी नहीं होंगे यहाँ। कुछ तो अक्ल से काम लीजिए।" लेकिन अम्मा थीं कि टस से मस नहीं हो रही थी उनका एक ही जवाब था "ना बाबू हम तो ना जा सके हैं कहीं इस घर को छोड़कर इस घर से तो हमारा जनाजा ही निकालिए हम तो कहीं हैं तुम लोग भी मत जाओ। काहे का डर! क्या यहाँ का खुदा दूसरा है और वहाँ का दूसरा?"[4]** अपनी मिट्टी को नहीं छोड़ने और अपनों से दूर होने के दर्द से भारतीय मुसलमान एक अजीब तन्हाई से गुजर रहा है। व्यक्ति का उसकी मिट्टी जमीन तथा विरासत से भावनात्मक लगाव होता है जो

दूसरे देश में जाकर भी उसके भीतर एक कोने बसा रहता है शायद इसी लगाव के कारण खाजो के छोटे अब्बा मरते वक्त अपनी ख्वाहिश अभिव्यक्त करते हैं कि उन्हें गया में भैया के पास दफन होना है यहाँ पर पराये लोगों के बीच नहीं।

विभाजन के पश्चात भारत की अखंडता पर प्रश्न चिन्ह लग गया। बँटवारा केवल जमीनी स्तर पर ही नहीं वैचारिक और मानसिक स्तर पर भी हुआ जिसने जन-जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया। जिस मोहल्ले-पड़ोस में हिंदू-मुसलमान कभी साथ रहा करते थे जिन्होंने यह कभी सोचा ही नहीं था कि उन्हें उसे स्थान पर कभी खतरा होगा वही आज सुरक्षा बोध के कारण भयभीत डरा सहमा सा रहता है। देश में कहीं कोई सांप्रदायिक घटना घटी नहीं इसका प्रभाव हर ओर दिखाई देने लगता है। इस माहौल का चित्रण करते हुए रचनाकार लिखते हैं कि- **“जब शहर में तनाव रहता है तो हिंदू मोहल्ले से गुजरते हुए एक अजीब दहशत का एहसास होता है जैसी कोई एकाएक पीछे से आकर छूरा घोंप देगा।"**[5] विभाजन बाद देश के माहौल में हुई तब्दीली ने लोगों की सोचने समझने के ढंग को ही बदल दिया पाकिस्तान बनने के बाद भारत में रहने वाले हर मुसलमान को घृणा नफरत और हर की दृष्टि से देखा गया पाकिस्तान बनने के बाद भी मुसलमान भारत में आखिर क्यों रह रहा है? भारत में जितने भी मुसलमान है वह इस देश के नहीं है। इस प्रकार के अनेक सवालों और शक के घेरे से उन्हें जूझना पड़ा छाको के अब्बा एक बार शहर के दंगे में फँस गए थे। उन्हें एक पंसारी ने अपनी दुकान में अंदर खींचकर अपने घर में पनाह दी लेकिन स्थिति परिस्थितजन्य कारण, आसपास के वातावरण तथा माहौल को देखते हुए वह वहाँ सुरक्षित होकर भी स्वयं को असुरक्षित महसूस कर रहे थे| रात में लेटे वक्त बार-बार उन्हें पंसारी को लेकर शक होता था कि कहीं वह उन्हें मार ना डालें- **“रात में लेटे-लेटे अक्सर दिल दहल उठता था पंसारी हाथ में छूरा लिए मेरी तरफ आ रहा है मेरे मुँह से छीके निकलते-निकलते रह जाती अब सोचता हूँ कि मेरा ख्याल और शक कितने बेबुनियाद थे जिसने मुझ पर इतना बड़ा एहसान किया जिसने मुझे दूसरी जिंदगी दी उसके बारे में कैसे-कैसे बुरे ख्याल दिल में आ रहे थे।"**[6] उपन्यास में दंगों के फलस्वरूप वातावरण में व्याप्त भय का बहुत सूक्ष्म चित्रण किया गया है| रचनाकार लिखते हैं- **“हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में जो दंगें हो रहे थे उनका असर हमारे शहर पर भी पड़ रहा था| एक तनाव की स्थिति बनी हुई थी| कुछ पता नहीं कब क्या हो जाए| रात में अक्सर ही वहम होने लगता था कि आस-पास कहीं दंगा हो रहा है और अब हमारे मोहल्ले पर भी धावा बोला जाने वाला है|”**[7] वास्तव में विभाजन भारतीय इतिहास की दर्दनाक घटनाओं में से एक है जिसने व्यक्ति को मानसिक रूप से बहुत अधिक प्रभावित किया| सरकार ने बार-बार भारतीय मुसलमानों से यह प्रश्न किया कि उन्हें भारत में रहना है या पाकिस्तान जाना है| एक तरफ अपनों से अलग होने पीड़ा तथा एक तरफ नवनिर्मित पाकिस्तान में भविष्य के उज्जवल स्वप्न ने उन्हें द्वंद्वात्मक स्थिति में डाल दिया|

सन्दर्भ सूची

1. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 28
2. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 14
3. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 151
4. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 22
5. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 27
6. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 75
7. बदीउज्ज़माँ, उपन्यास छाको की वापसी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1975, पृष्ठ 23

संपर्क - 9140153203

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 191-193
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

रामफल चहल की एकांकियों में अभिनेयता

सुमन, पीएच.डी. शोधार्थी हिन्दी,
डॉ. माया मलिक, शोध निर्देशिका,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक–124001 (हरियाणा)

सारांश

एकांकी आधुनिक हिंदी साहित्य की एक स्वतंत्र विधा तथा सशक्त अंग है। एकांकी एक अंक में समाप्त होने वाला नाटक होता है जिसमें किसी एक ही घटना, परिस्थिति या समस्या का चित्रण होता है। यह सीमित समय में ही पाठक व दर्शकों के हृदय में जिज्ञासा उत्पन्न कर मनोरंजन करता है। एकांकियों में पात्रों की संख्या कम होती है, सामान्यतया यह पन्द्रह मिनट से एक घंटे के अंदर ही समाप्त हो जाती है। इसमें अनेक दृश्य होते हैं। इस तरह हम कह सकते हैं कि एकांकी छोटी परिधि में पाठकों को तृप्त करने वाला सशक्त माध्यम है।

प्रस्तावना

साधारण शब्दों में एकांकी का अर्थ होता है एक अंक वाला नाटक। एकांकी में जीवन की किसी एक घटना या एक पात्र का चित्रण होता है। इसका कथानक सुगठित संतुलित व आकर्षक होता है। डॉ. नगेन्द्र ने एकांकी की परिभाषा देते हुए लिखा है कि ''एकांकी एक अंक में समाप्त होने वाला नाटक है और यद्यपि इस अंग के विस्तार के लिए कोई विशेष नियम नहीं है फिर भी छोटी कहानी की तरह उसकी एक सीमा तो है ही परिधि का यह संकोच कथा संकोच की ओर इंगित करता है और एकांकी में हमें जीवन का क्रमबद्ध विवेचन न मिलकर उसके एक पहलू, एक महत्त्वपूर्ण घटना अथवा उद्दीप्त क्षण का एक चित्र मिलेगा। इसलिए एकता एवं एकाग्रता अनिवार्य है।''[1] हिन्दी के जाने माने एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा ने एकांकी को परिभाषित करते हुए लिखा है ''एकांकी नाटक में अन्य प्रकार के नाटकों से विभिन्नता होती है। उसमें एक ही घटना होती है और वह घटना नाटकीय कौशल से ही कौतूहल का संचय करती हुई चरम सीमा तक पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता। एक वाक्य एक एक शब्द प्राण की तरह आवश्यक रहते हैं। पात्र चार या पाँच ही होते है जिनका संबंध नाटक की घटना से रहता है। वहाँ केवल मनोरंजन के लिए आवश्यक पात्र की गुंजाइश नहीं प्रत्येक व्यक्ति की रूपरेखा पत्थर पर खिचीं हुई रेखा की भांति स्पष्ट और गहरी होती है।''[2]

हरियाणवी साहित्य में रामफल चहल का नाम एक सशक्त रचनाकार के रूप में लिया जाता है, जिन्होंने अपनी एकांकी रचनाओं के माध्यम से हरियाणवी समाज की विशिष्टताओं, समस्याओं और सांस्कृतिक धरोहर को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी एकांकियों में 'अभिनेयता' एक महत्त्वपूर्ण विशेषता रही है जो उनके नाटकीय कौशल और पात्रों की यथार्थता को प्रकट करती है। इनकी एकांकियों में विषय, चरित्र, संवाद, मानवीयता और मंचीय प्रस्तुति का ऐसा सामंजस्य मिलता है जो उन्हें नाट्य मंच पर सजीव और प्रभावी बनाता है। रामफल चहल की एकांकियों में अभिनेयता के मुख्य तत्वों को इस प्रकार समझा जा सकता है :

1. जीवंत चरित्र चित्रण

रामफल चहल के पात्र जीवन्त से जुड़े हुए और यथार्थवादी होते हैं। उनके चरित्रों में गहराई और सजीवता होती है, जो उन्हें मंच पर अभिनीत करने में सहज बनाती है। रामफल चहल की महत्त्वपूर्ण एकांकी 'बिघ्न की जड़' में पात्रों का सजीव चरित्र–चित्रण किया गया है। खजानी कहती है कि ''देख बाहण दड़का बाकी तो चाहे किमैं कहते रहो गाम आले, पर थारी तो एक दिन लोगों में बात

चाल री बतावै था म्हारा पणमेशरी का बाबू। सारे न्यूए बोले भाई इन्हें तो ब्याह मैं भी लोभ ना कर्‌या था अर ना तम लोभी आदमी बताये लोगां नै। ऊं ले कोए जलता बलता बेशक किमे कह दो। बाकी गलती थारी बहू की ए बतावैं सैं।"[3] 'कड़ियाँ की कड़ी' एकांकी में रामकौर अपनी माँ से बात करते हुए कहती है कि "ईब के या बात घर की रहरी सै सारे गाम नै बेरा सै पर तूं न्यूं तो बता तनै ये दोनूं सम्भालती क्यूं नहीं।"[4]

इस प्रकार हम देखते हैं कि रामफल चहल की एकांकियों के पात्रों का अपना स्वतंत्र एवं निजी व्यक्तित्व है। इनके पात्रों के चरित्र चित्रण में सहजता एवं स्वाभाविकता का गुण विद्यमान है।

2. सजीव संवाद शैली

रामफल चहल की एकांकियों में संवाद न केवल समाज के विभिन्न वर्गों की भाषा और बोली को प्रतिबिंबित करते हैं बल्कि वे पात्रों के व्यक्तिगत और सामाजिक परिवेश को भी सजीव बनाते हैं। हरियाणवी बोली की मिठास, कटाक्ष और लोक प्रवृत्तियों को उनकी संवाद शैली में देखा जा सकता है, जो अभिनेताओं को सहज अभिनय का अवसर प्रदान करता है। 'साझा–सीर' में मानसिंह एवं उनकी पत्नी धनकौर के संवाद इस प्रकार हैं – "धनकौर के बात किमै तावला ए उल्टा आग्या। तनै धर्मा मिल्या एक कोन्या अके तूं गया ए नहीं। मानसिंह – सारे काम होगे, ल्या चिलम् म्है आग धरल्या फेर खेत मैं पाणी का बी ओसरा सै आज।"[5] इनकी 'माँ की पोटली' एकांकी में देवरानी–जेठानी की बात आपसी खींचातानी को रामफल चहल ने इस प्रकार चित्रित किया है। "पतासो – जब तूं उसकी सन्दूक पै कब्जा करे बैठी उस म्हं होंगे पिसे करवा दे मनिआर्डर म्हारे ओगै के पचोल बांचै सै। भतेरी – तेरी तो सन्दूक पै नीत रहै सै सन्दूक मैं के झालरे धरे सैं। थोड़ी बहुत चांदी की टूम सैं उसी तै हम उसकी सेवा करां सां।"[6]

संवाद, एकांकी का अनिवार्य तत्व होता है। सवांद की सबसे बड़ी विशेषता होती है स्वाभाविकता, रोचकता, सोद्‌देश्यता। रामफल चहल की एकांकियों में संवाद, योजना पात्रानुसार व प्रसंगानुसार है। इनके संवाद रोचकता लिए हुए संक्षिप्त व चुस्त हैं। रामफल चहल के संवाद सरल व संप्रेषणीय हैं। इनकी भाषा पात्रों की मानसिकता, परिस्थिति के अनुरूप हैं। इनके संवाद न केवल कथा को आगे बढ़ाते हैं बल्कि पात्रों के चरि–चित्रण में भी योगदान देते हैं।

3. सामाजिक और सांस्कृतिक प्रामाणिकता

रामफल चहल की एकांकियों में हरियाणा के ग्रामीण जीवन, रीति–रिवाजों और लोकाचार का स्पष्ट चित्रण मिलता है। यह प्रामाणिकता अभिनेताओं को दर्शकों से जुड़ने में मदद करती है क्योंकि कथानक व पात्र दर्शकों के जीवन के करीब होते हैं। रामफल चहल की रचनाओं में हरियाणा की संस्कृति व समाज का यथार्थ चित्रण किया गया है। 'बंधी बुहारी' एकांकी में हरियाणा में विवाह के दौरान निभाई जाने वाली परंपराओं पर प्रकाश डाला गया है। इसमें विवाह समारोह में निभाई जाने वाली रीति–रिवाज एवं परंपराओं का चित्रण किया गया है। हरियाणा के विवाह समारोह में पूरा परिवार (कुनबा) एक साथ मिलकर कार्यक्रम में शामिल होते हैं तथा समारोह की शोभा बढ़ाते हैं।

4. मंचीयता और दृश्यात्मकता

रामफल चहल की एकांकियाँ मंच पर प्रस्तुति के लिए लिखी गई हैं। दृश्य परिवर्तन प्रकाश व्यवस्था और मंच पर होने वाली गतिविधियों का विवरण बहुत स्पष्ट और उपयोगी होता है। नाटकीय अभिव्यक्ति से एकांकियों में मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं को सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया जाता है।

इनकी एकांकियों में घटनाक्रम और स्थितियों का नाटकीय मंचन अत्यंत प्रभावशाली होता है। इनकी लेखनी ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करती हैं जो अभिनेता को अपने अभिनय में तनाव, उत्साह और गहराई दिखाने का अवसर देती है। अभिनय के द्वारा ही विभिन्न मनोभावों, मनोविकारों एवं अंतर्द्वन्द्वों का प्रस्तुतीकरण हो पाता है। एकांकी की रचना अभिनय को ध्यान में रखकर ही की जाती है। अतः रंग निर्देश के विधान में एकांकीकार को कुशल होना चाहिए। रंग निर्देश अभिनय में सहायक होते हैं। रंगमंचीय उपकरणों की व्यवस्था से भी संवादों को अच्छे से व्यक्त किया जा सकता है। इस संबंध में भागीरथ मिश्र लिखते हैं कि "अभिनय, नाटक, रूपक या दृश्य काव्य का प्रधान तत्व है। समस्त कथा वस्तु, चरित्र अर्थों और भावों का प्रकाशन अभिनय द्वारा ही किया जाता है। देशकाल और परिस्थिति के अनुसार अभिनय के साधनों और रूपों में परिवर्तन व विकास होता रहता है। आजकल वैज्ञानिक साधनों के उपलब्ध हो जाने से अनेक अर्थों और स्थितियों का दिग्दर्शन इनके द्वारा कराया जा सकता है और

उनका संकेतात्मक साधनों की अब आवश्यकता नहीं। उसी प्रकार अभिनय के रूपों और संकेतों में भी बहुत परिवर्तन हो गया है।''[7]

निष्कर्ष

रामफल चहल की एकांकियाँ न केवल हरियाणवी साहित्य का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है बल्कि वे रंगमंच के लिए भी उपयुक्त और सशक्त रचनाएँ हैं। उनकी अभिनेयता के कारण इनकी एकांकियाँ हरियाणवी रंगमंच पर प्रभावशाली प्रस्तुति के लिए आदर्श हैं। इनकी एकांकियों में न केवल मनोरंजन अपितु सामाजिक संदेश भी निहित होता है। इनकी संदेशात्मकता दर्शकों को सोचने पर मजबूर करती हैं और अभिनेताओं को अपनी प्रस्तुति में प्रभावशाली अभिव्यक्ति के लिए प्रेरित करती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. नगेन्द्र, आधुनिक हिंदी नाटक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, संस्करण 2021, पृ. 92
2. डॉ. रामकुमार वर्मा तथा त्रिलोकी नारायाण दीक्षित, रामनारायाण लाल, इलाहाबाद, संस्करण 1952, एकांकी कला, पृ. 4
3. रामफल सिंह चहल, बिघ्न की जड़, लक्ष्मण साहित्य प्रकाशन, रोहतक, संस्करण दिसम्बर 1998, पृ. 13
4. वही, पृ. 56
5. वही, पृ. 4
6. वही, पृ. 89
7. भगीरथ मिश्र, काव्यशास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 1999, पृ. 113

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 194-197
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

श्रद्धाराम फिल्लौरी के उपन्यास भाग्यवती में चित्रित शिक्षा की महत्ता

डॉ. सपना शर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिन्दी–विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर।

हिन्दी उपन्यास परम्परा आधुनिक युग की देन है। प्रेमचन्द उपन्यास को परिभाषित करते हुए लिखते है कि मैं उपन्यास को मानव–चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।[1]

उपन्यास आधुनिक जीवन का यथार्थ है जिसमें जीवन की जटिलताओं और अन्तर्विरोधों को समग्रता के साथ प्रस्तुत किया जाता है। न्यू इंगलिश डिक्शनरी में उपन्यास को परिभाषित करते हुए लिखा गया है कि वृहत् आकार गद्य आख्यान या वृत्तान्त जिसके अन्तर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले पात्रों और कार्यों को कथानक में चित्रित किया जाता है।''[2]

हिन्दी उपन्यास को अध्ययन की दृष्टि से मुख्य रूप से तीन भागों में बाँट कर देखा जा सकता है–

1. प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास
2. प्रेमचन्द युगीन उपन्यास
3. प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास

प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास को भी सुविधा की दृष्टि से स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास तथा साठोत्तर उपन्यास आदि में वर्गीकृत किया जा सकता है।

आधुनिक हिन्दी उपन्यास या प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास का समय सन् 1877 से 1918 ई. तक माना जा सकता है। सन् 1877 में श्रद्धाराम फिल्लौरी ने 'भाग्यवती' नामक उपन्यास लिखा जिसे विषय वस्तु की दृष्टि से प्रथम मौलिक उपन्यास माना गया।

पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी हिन्दी साहित्य के उज्ज्वल नक्षत्र है। हिन्दी उपन्यास में इनका नाम बहुत आदर से लिया जाता है। इनका जन्म 1837 ई. में जिला जालन्धर के फिल्लौर नामक नगर में हुआ था। इनके पिता का नाम जय दयालु तथा माँ का नाम श्रीमती विष्णु देवी था। स्वामी गयाराम इनके गुरु थे। पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी उच्चकोटि के कथावाचक थे। उन्हें यह गुण पैतृक संस्कारों से मिला था। इनकी वाणी में अद्भुत आकर्षण था तथा जबरदस्त भाषा का प्रयोग वह करते थे।

'संवत् 1910 के लगभग ही विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान श्रद्धाराम फुल्लौरी के व्याख्यानों और कथाओं की धूम पंजाब में आरम्भ हुई। पंजाब के सब छोटे–छोटे स्थानों पर घूमकर पं. श्रद्धाराम जी उपदेश और वक्तृताएँ देते तथा रामायण, महाभारत आदि की कथाएँ सुनाते। उनकी वाणी में अद्भुत आकर्षण था और उनकी भाषा बहुत जोरदार होती थी। पं. श्रद्धाराम जी कुछ पद्यरचना भी करते थे। हिन्दी गद्य में भी बहुत कुछ लिखा और हिन्दी भाषा के प्रचार में बराबर लगे रहे।''[3]

इन्होंने अपने जीवन में धर्म प्रचार का कार्य अधिक किया। इनके काव्य संग्रह हैं–'सत्य धर्म मुक्तावली', 'शतोपदेश', 'धर्मसंवाद', 'ओम जय जगदीश हरे' (आरती) 'नीति उपदेश के दोहे' आदि इनकी गद्य रचनाओं में–'भाग्यवती' (उपन्यास), सत्यामृत प्रवाह (सिद्धान्तों एवं आचार–विचार का दर्पण ग्रन्थ), पंजाबी की दो पुस्तकें'–'सिक्खां दे राज दी व्यथा' तथा 'पंजाबी बातचीत' इसके अतिरिक्त उर्दू की रचनाएँ– 'धर्म कसौटी', 'धर्म रक्षा', 'उपदेश संग्रह', 'असूले मजाहक' आदि। 'पंजाबी बातचीत' रचना पर इन्हें अंग्रेज सरकार द्वारा नगद पुरस्कार दिया गया था।

'भाग्यवती' उपन्यास की रचना सन् 1877 में हुई। यह उपन्यास स्त्रियों में जागृति के प्रयोजन से लिखा गया था। इस उपन्यास में स्त्री के प्रगतिशील रूप का वर्णन मिलता है।

श्रद्धाराम फिल्लौरी के उपन्यास 'भाग्यवती में शिक्षा के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। उपन्यास में बताया गया है कि कैसे शिक्षा प्राप्त नारी अर्थात् शिक्षित नारी अपना और अपने परिवार का भला करती है। बहुत पहले लड़कियों को शिक्षा देने की बात तो दूर की थी, उन्हें छोटी उम्र में ही ब्याह दिया जाता था जिसके कई नुकसान सामने आते थे। उपन्यास में पण्डित जी अपने पुत्र लालमणि और पुत्री भाग्यवती को शिक्षित करते है और सही समय आने पर उनका विवाह करते हैं। उपन्यास में एक स्थान पर पण्डित जी कहते है–

''ऐसे लोग बड़े मूर्ख है कि जो अपनी लड़की लड़के को विद्या से हीन रखते है।''[4]

पंडित जी ने अपनी संतानों को उचित शिक्षा दिलवायी है। उनका पुत्र लालमणि व्याकरण शास्त्र पढ़कर पाठशाला में पढ़ाता है तो पुत्री भाग्यवती ने गीता, व्याकरण, हितोपदेश आदि का अध्ययन किया है। इसके साथ–साथ वह घर के कामों सीना–परोना, खाना बनाना आदि में भी निपुण है। विवाह के बाद ससुराल में भाग्यवती के रूप, गुण, विद्या की हर कोई प्रंशसा करता है। वह ससुराल में सबसे छोटी थी पर दूर–दूर से स्त्रियां उसकी शिक्षा एवं व्यवहार के प्रभाव के कारण उससे सलाह लेने आया करती थी।

भाग्यवती का ससुराल साधन सम्पन्न था। किसी चीज की कोई कमी न थी पर कोई हिसाब–किताब नहीं रखता था जिससे धन जुड़ नहीं पाता था। नौकर हेरा फेरी किया करते थे। भाग्यवती यह बात कुछ ही दिन में जान गयी। उसने घर के काम अपने आप करने के लिए घर के लोगों को मनाया और खुद घर के कामों का हिसाब–किताब, चीजों का हिसाब–किताब रखना शुरू किया। भाग्यवती की सास ने कहा–

''बहू! और क्या चाहिए, यदि लेखे–जोखे की लिखा पढी तुम अपने हाथ में रखो तो हमारे बहुत काम सीधे हो जाएगें। भगवान ने तुम सरीखी चतुर बहुत घर भेज दी है, ईश्वर चाहे तो घर का रंग रूप कुछ अच्छा निकल आएगा।''[5]

घर के नौकर नंदा कहार घर के महाराज संत लाल ने जो भी ठगियां की थी, उसका बदला भाग्यवती ने सूद समेत लिया। उसने कानून की पोथी भी पढ़ रखी थी। अदालतों कचहरी का नाम सुनते ही अनपढ़ लोग कांप जाते थे।

भाग्यवती के गुणों के कारण घर के और सदस्य अन्य बहुएँ आदि उससे ईर्ष्या करने लगे उस पर झूठा चोरी का आरोप लगाकर उसे घर से अलग करवा दिया गया। भाग्यवती कुछ देर के लिए व्याकुल हुई फिर कहने लगी–''मैं बड़ी मूर्ख थी कि थोडी–सी विपत देखकर व्याकुल हो गई। हा! हा! मुझे विद्या पढ़ने का क्या फल हुआ? बुद्धिमान वही जो विपत काल में धैर्य को हाथ से न छोड़े।''[6]

भाग्यवती किसी के घर से बर्तन उधार लायी उस बर्तन को किसी के घर गहने रखा और पाँच आने से काम शुरू किया। जुराबें बनायी, चादर पर कढायी की उन्हें बेचा और धन इकट्ठा किया। सारी काशी उसका गुणगान करने लगी। भाई विद्या बड़ी अच्छी वस्तु है। इसके समान कोई और धन नहीं है।

इस दौरान उसके ससुराल वालों पर कई संकट आए सारा घर ठगों द्वारा लूट लिया गया। आस–पड़ोस वाले इसका कारण भाग्यवती को घर से निकालना बताते थे। भाग्यवती स्वयं पहल कर विपति के समय ससुराल वालो से मिलने गयी। सास–ससुर ने पश्चाताप किया। अपनी बुद्धि और विद्या के बल पर भाग्यवती ने हर कठिनाई का सामना किया। सभी लोग कहते–''वह सब विद्या का प्रताप है पुरुष हो चाहे स्त्री! विद्या सबको भाग्य लगा देती है।''[7]

भाग्यवती ने पुत्री को जन्म दिया तो उसका पति मनोहर लाल उदास हो गया। भाग्यवती ने तर्कों के बल पर पुत्र और पुत्री के अन्तर को बेमानी बताया। भाग्यवती का परिवार तीर्थ–यात्रा पर निकला तो उसने ठगों से परिवार की रक्षा की। यात्रा में वह अपने बेटे के साथ अपने परिवार से बिछड़ जाती है पर अपनी विद्या और बुद्धि से राजा उदय सिंह को प्रभावित करती है और राजा भी उसकी सहायता करते है।

भाग्यवती के मन में माता–पिता से मिलने की इच्छा होती है तो ससुराल वालों की आज्ञा से मायके आती है। वहा देखती है उसका भाई माता–पिता से अलग रह रहा है। वह अपने भाई को समझा–बुझा कर माता–पिता के पास वापिस ले आती है।

वह अपने भाई से कहती है कि ''माँ–बाप ने जो आपकी पालना की और लिखा पढ़ा के इतने बड़े बना दिया क्या उनका यही मनोरथ था कि स्याने होने पर तुम उनसे अलग होकर बैठो?......भाई, क्या तुम उस बात को कभी स्मरण नहीं करते कि हमारे छुटपन में माँ–बाप ने क्या–क्या क्लेश उठकर हमको पाला था, खाने–पीने सोने आदि व्यवहारों में आप दुखी रहे पर हमको दुःखी न किया। क्या उनका यही फल है। जब हम उनको सुख देने के योग्य और वे वृद्ध होकर हम कुछ टहल सेवा की इच्छा करें तो हम उनसे अलग हो बैठे......भाई! माता–पिता के उपकार के पलटे में यदि हम जन्म भर भी उनकी सेवा करते रहे तो पूरे नहीं उतर सकते।[8]

ससुर की मृत्यु के बाद भाग्यवती की सास अलग रहकर भक्ति में जीवन बिताने की बात करती है तो भाग्यवती उसे घर में रहकर ही भक्ति करने के लिए कहती है ताकि वह अपनी सास की सेवा कर सके। भाग्यवती कहती है–''मैं तो आपकी दासी हूँ। यह तुम्हारी दया है कि जो बुद्धि विद्या की बड़ाई मुझे देती हो पर अच्छा जो कुछ मैंने श्रुति स्मृति और उत्तम लोगों के मुख से सुना है वह आपके पास प्रकट कर देती है।''[9]

आज के युग के सन्दर्भ में यदि देखें तो श्रद्धाराम फिल्लौरी के उपन्यास 'भाग्यवती' की प्रासंगिकता स्वयं सिद्ध है क्योंकि स्त्री की शिक्षा का मुद्दा स्वतन्त्रता पूर्व जब यह उपन्यास लिखा गया तब भी उतना ही अहम् था और आज भी यह उतना ही महत्वपूर्ण है। कहा भी जाता है कि यदि घर में किसी लड़की को शिक्षित किया जाता है, तो वह आगे परिवार में भी अपनी शिक्षा का प्रचार–प्रसार करती है।

श्रद्धाराम फिल्लौरी ने अपने उपन्यास की भूमिका में भी लिखा है कि यह उपन्यास उन्होंने स्त्रियों को नैतिकता और आदर्श की शिक्षा देने के लिए लिखा है।

'भाग्यवती' शिक्षित स्त्री है जिस कारण वह अपने मायके एवं ससुराल पर आने वाली विपदाओं का धैर्य से सामना करती है और उन्हें उन विपदाओं से बाहर निकालती है। भाग्यवती के पिता उसे वह सभी शिक्षा दिलवाते है, जो उसके के लिए आवश्यक है। सांस्कृतिक दृष्टि से देखा जाए तो भाग्यवती संस्कारों से सम्पन्न स्त्री है। वह परिवार जोड़ने में विश्वास रखती है तोड़ने में नहीं। भाग्यवती सास–ससूर, पति एवं ननंद का पूरा सम्मान करती है और सभी के साथ ही रहना चाहती है। इसीलिए जब उसका भाई अपने माता–पिता के पास से अलग हो जाता है उसे भी मनाकर अपने माता–पिता के पास ले आती है। वह उपन्यास में स्त्री सशक्तिकरण का प्रतीक है। जब किसी कारणवश ईष्या या गलतफमी से उसके ससुराल वाले उसे अलग कर देते है तो बड़े धैर्य से इस विपदा का सामना करती है और धीरे–धीरे छोटे–मोटे काम करके अपने आपको आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न करती है। ससुराल पर विपदा आने पर वह सभी पुरानी बातें भूलकर उनसे मिलती है और उनकी मदद करती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आज से लगभग सौ–डेढ–सौ साल पहले इस उपन्यास की रचना की गई थी। भाषा की दृष्टि से भले ही यह उस समय के परिवेश को चित्रित करता है पर स्त्री शिक्षा के ज्वलन्त मुद्दे की प्रासंगिकता के रूप यह उपन्यास आज भी प्रयोजनीय है, यह स्त्री और पुरुष दोनों को ही शिक्षा देता है कि केवल पढ़ने लिखने की शिक्षा ही नहीं बल्कि व्यावहारिक ज्ञान होना भी आवश्यक है। शिक्षा के साथ–साथ घर के कामों में पाक कला में सिलाई बुनाई–कढ़ाई आदि की जानकारी एवं उनमें सक्षमता होना भी आवश्यक है। 'भाग्यवती' रूमाल एवं चादरों पर कढ़ाई कर अपने बुरे समय में धन कमाती है। उपन्यास में यह भी बताया गया है कि किसी भी काम की निपुणता कभी–न–कभी जीवन में काम आ ही जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में –''भाग्यवती नाम का सामाजिक उपन्यास उन्होंने श्रद्धाराम फिल्लौरी ने लिखा, जिसकी बड़ी प्रशंसा हुई। अपने समय के वे सच्चे हितैषी और सिद्धहस्त व्यक्ति थे।''[10]

सन्दर्भ सूची

1. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द, (नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2023), पृ–33
2. हिन्दी साहित्य कोश (भाग–1) धीरेन्द्र वर्मा (संपा) (वाराणसी : ज्ञानमण्डल लिमिटेड, 2021), पृ–121
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास (आगरा, साहित्य सरोवर, 1997, पृ–302
4. श्रद्धाराम फिल्लौरी, भाग्यवती (नई दिल्ली : ऋषभ चरण जैन सन्तति, 1988), पृ–16

5. वही पृ–43
6. वही पृ–53
7. वही पृ–71
8. वही पृ–104
9. वही पृ–120
10. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास (आगरा, साहित्य सरोवर, 1997), पृ–302

मोबाइल नः 9872580935 ई–मेल–dr.sapnasharma15@yahoo.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 198-204
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अनुराग कश्यप की फिल्मों में डार्क कॉमेडी

रवि कुमार (पीएच.डी.)
हिन्दी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय

शोध सारांश

यह शोधपत्र सिनेमा के विख्यात निर्देशक, अभिनेता और लेखक अनुराग कश्यप की सिनेमाई शैली को दर्शाता है। उनके द्वारा निर्देशित हिन्दी फिल्मों की कथा शैली रोचक और गंभीर दोनों भाव को प्रस्तुत करने में सफल होती हैं। उनकी कथा शैली के पात्र अपने संवादों के माध्यम से गंभीर स्थिति को भी हास्यास्पद बना देते हैं। जिससे उस सीन में रोचकता बढ़ जाती है। इस लेख में उनकी फिल्मों की वास्तविकता, कठिनाइयों व जमीनी हकीकत को दिखाने का प्रयास किया गया है। इस लेख में उनकी फिल्मों में तकनीकी, और विषय वस्तु का विश्लेषण भी किया जाएगा। साथ ही उनकी फिल्मों में डार्क कॉमेडी से संबंधित संवादों का संदर्भ भी दिया जाएगा।

कीवर्ड - सिनेमा, निर्देशक, कथाशैली, संवाद, अभिनय, डार्क कॉमेडी।

परिचय

डार्क कॉमेडी (Dark Comedy), जिसे ब्लैक कॉमेडी या गैलोज ह्यूमर (Gallows Humor) भी कहा जाता है, “एक ऐसी साहित्यिक या सिनेमाई शैली है, जिसमें गंभीर, संवेदनशील या सामाजिक रूप से जटिल मुद्दों को हास्यपूर्ण और व्यंग्यात्मक तरीके से प्रस्तुत किया जाता है। इसका उद्देश्य दर्शकों को असहज करते हुए हंसाना होता है और उन्हें उन कठिन सच्चाइयों पर सोचने के लिए मजबूर करना होता है, जिन्हें आमतौर पर हल्के में लिया जाता है”। अनुराग कश्यप भारतीय सिनेमा के उन गिने-चुने निर्देशकों में से हैं, जो अपनी कहानियों को गहराई और यथार्थ के साथ प्रस्तुत करते हैं। अनुराग कश्यप का सिनेमा भारतीय सिनेमा की पारंपरिक शैली से काफी अलग और अनूठा है। उनका सिनेमा यथार्थवादी, बोल्ड और समाज के गहरे मुद्दों को छूने वाला होता है। अनुराग कश्यप अपनी फिल्मों में वास्तविक जीवन की कठिनाइयों, संघर्षों और जमीनी हकीकत को दिखाने के लिए जाने जाते हैं। उनकी फिल्मों में किरदार, संवाद और कहानी इतनी स्वाभाविक लगती हैं कि दर्शकों को यह वास्तविकता का अनुभव कराती हैं। उनकी फिल्मों के पात्र साधारण नहीं होते; वे जटिल, धूमिल और कई बार विरोधाभासों से भरे होते हैं। ये पात्र समाज के हाशिए पर खड़े लोगों की कहानियां सुनाते हैं। उनकी फिल्मों

में डार्क कॉमेडी (Dark Comedy) का महत्वपूर्ण स्थान है। डार्क कॉमेडी वह शैली है, जो गंभीर मुद्दों को हास्य के माध्यम से पेश करती है, जिससे उन मुद्दों की गहराई और प्रभाव दोनों बढ़ जाते हैं। अनुराग कश्यप की फिल्मों में अक्सर हिंसा, अपराध, भ्रष्टाचार और समाज की काली सच्चाईयों को दिखाया जाता है। उनका सिनेमा कभी-कभी असहज करने वाला हो सकता है, लेकिन यह डार्क कॉमेडी की शैली फिल्म की कथा को दिलचस्प बनाती है। अनुराग कश्यप इस शैली का उपयोग समाज की कड़वी सच्चाइयों, मानवीय व्यवहार की जटिलताओं और नैतिकता के द्वंद्व को उजागर करने के लिए करते हैं।

डार्क कॉमेडी उनकी फिल्मों में गंभीरता और हास्य के बीच संतुलन बनाते हुए दर्शकों को गुदगुदाने के साथ सोचने पर भी मजबूर करती है। यहाँ उनकी प्रमुख फिल्मों में डार्क कॉमेडी के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है।

1. गैंग्स ऑफ वासेपुर (2012)

"गैंग्स ऑफ वासेपुर" अनुराग कश्यप की सबसे चर्चित फिल्मों में से एक है, जो डार्क कॉमेडी का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह फिल्म भारत के कोयला माफिया के संघर्षों और वासेपुर के क्राइम वर्ल्ड पर आधारित है। फिल्म में अपराधी चरित्रों की जिंदगी के सामान्य संघर्षों को मजाकिया तरीके से दिखाया गया है। उदाहरण के लिए, परिवार के झगड़े या पैसों को लेकर विवाद हास्य उत्पन्न करते हैं। ये पल फिल्म को ज़मीन से जोड़े रखते हैं और दर्शकों को एक पहचान का अहसास कराते हैं। फिल्म अपने हास्य के माध्यम से समाज, राजनीति और भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करती है। यह जाति व्यवस्था और सत्ता के खेल को मजाकिया अंदाज में दिखाती है, जिससे उनकी असलियत उजागर होती है। यह व्यंग्य कहानी को और गहराई प्रदान करता है।

फिल्म में बिहार और झारखंड की क्षेत्रीय बोली और गीतों का उपयोग करते हुए डार्क कॉमेडी को और अधिक प्रभावशाली बनाया गया है।

डार्क कॉमेडी के तत्व:

संवाद: सरदार खान का अपने बेटे फैज़ल से कहना, *"बेटा, तुमसे ना हो पाएगा,"* जैसे संवाद दर्शकों को हंसाते भी हैं और किरदार की हताशा को भी उजागर करते हैं।

हिंसा और हास्य का मेल: फिल्म में कई गंभीर और हिंसक घटनाओं को हास्य के साथ जोड़ा गया है। जैसे, एक गैंगवार के दौरान किरदारों का अजीबोगरीब तरीके से मरना या उनके विचित्र तर्क।

संवादों में व्यंग्य: जैसे कि सरदार खान का कहना, *"तुम्हारे घर में कोई गुंडा नहीं हुआ, इसीलिए हमको यह सब करना पड़ता है।"*

संवाद: "राजनीति में जो जीता वही सिकंदर, और जो हारा, वही चूतिया।" यह संवाद राजनीति और समाज के खेल को व्यंग्यात्मक तरीके से उजागर करता है, जिससे दर्शक हंसते भी हैं और सोचते भी हैं।

2. देव डी (2009)

"देव डी" क्लासिक उपन्यास "देवदास" का आधुनिक रूपांतरण है। इसमें अनुराग कश्यप ने शराब, नशे, और आत्म-विनाश जैसे गंभीर मुद्दों को डार्क कॉमेडी के साथ प्रस्तुत किया। यह फिल्म अपने काले और सच्चे पहलुओं को हास्य के साथ जोड़कर डार्क कॉमेडी का एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत करती है। फिल्म में डिप्रेशन, व्यसन, और रिश्तों की जटिलताओं जैसे गंभीर विषयों को विडंबनापूर्ण और मजाकिया तरीके से दिखाया गया है

डार्क कॉमेडी के तत्व:

देव का शराब के नशे में विचित्र हरकतें करना और अपनी समस्याओं से भागने के तरीके हास्यप्रद होते हैं, लेकिन वे उसके जीवन की त्रासदी को भी उजागर करते हैं। चंदा का पेशे से वेश्या होना और उसका देव के साथ व्यंग्यात्मक संवाद दर्शकों को सोचने और हंसने पर मजबूर करता है। देव की आत्म-विनाश की यात्रा को इस तरह दिखाया गया है कि दर्शक उसकी बेबसी पर हंस भी सकें और उसके प्रति सहानुभूति भी रख सकें।

देव डी की डार्क कॉमेडी उन दृश्यों में झलकती है, जहां गंभीर घटनाओं को मज़ाकिया और अजीब ढंग से दिखाया गया है।

दृश्य: देव अपने ब्रेकअप के बाद खुद को शराब और ड्रग्स में डुबो देता है, लेकिन उसका यह आत्म-विनाश इतना नाटकीय और बचकाना दिखाया गया है कि दर्शकों को उसकी हालत पर दया के साथ हंसी भी आती है।

संवाद: “पारो, सबकी होती है... बस मेरी नहीं।”

देव का यह खुद पर तरस खाने वाला बयान उसकी गंभीर हालत में हास्य का रंग भरता है। फिल्म अपने संवाद और स्थितियों के माध्यम से आधुनिक समाज पर कटाक्ष करती है।

दृश्य: "इंटरनेट लव" का मजाक उड़ाते हुए देव पारो से पूछता है कि वह अपने किसी और बॉयफ्रेंड से बात कर रही है या नहीं। यह दृश्य, जो मूल रूप से जलन और असुरक्षा का प्रतीक है, एक हास्यपूर्ण मूड सेट करता है।

संवाद: “कौन है वो जिससे तू रात भर चैट करती रहती है?”

3. ब्लैक फ्राइडे (2007)

अनुराग कश्यप की *ब्लैक फ्राइडे* 1993 के मुंबई बम धमाकों पर आधारित एक गंभीर और सटीक फिल्म है। हालांकि फिल्म एक संवेदनशील विषय पर है, फिर भी इसमें डार्क कॉमेडी के ऐसे तत्व मौजूद हैं, जो कहानी को और प्रभावी बनाते हैं। फिल्म में हास्य उन पलों में आता है, जहां इंसानी स्वभाव, परिस्थितियों और विडंबनाओं को दर्शाया गया है। यह दर्शकों को न केवल गहराई से सोचने पर मजबूर करता है, बल्कि तनावपूर्ण माहौल को हल्का करने का भी काम करता है।

डार्क कॉमेडी के तत्व:

फिल्म में पुलिस की कार्यप्रणाली और उनके अजीबोगरीब तरीके डार्क कॉमेडी के लिए मंच तैयार करते हैं।

संवाद: “साले आतंकवादी हैं, कोई छुट्टा जानवर नहीं जो भाग जाएंगे।”

यह संवाद पुलिस टीम के अंदर के गुस्से और निराशा को दिखाने के साथ ही स्थिति को हास्यपूर्ण बनाता है।

संवाद: “भाई, बम फोड़ने का प्लान कर रहे हो, पर चाय लाना मत भूलना।”

यह संवाद अपराधियों की गंभीर योजना के बीच उनकी सामान्य बातचीत की विडंबना को उजागर करता है। एक सीन में एक आरोपी बार-बार पुलिस से यह पूछता है कि "क्या मुझे चाय मिलेगी?" यह दर्शाता है कि कैसे छोटी-छोटी चीजें भी तनावपूर्ण माहौल में हास्य पैदा कर सकती हैं।

जांच के दौरान पुलिस और संदिग्धों के बीच की बातचीत में कई बार हास्य का पुट आता है।

संवाद: “इतना सच बोलोगे तो जेल में भी भगवान माफ नहीं करेगा।”

यह व्यंग्यात्मक बयान संदिग्ध को डराने के साथ-साथ एक हल्की हंसी पैदा करता है। जब पुलिस एक आरोपी से उसके नाम पूछती है और वह हर बार नया नाम बताता है, तो यह मजाकिया बन जाता है, भले ही स्थिति गंभीर हो।

4. रमन राघव 2.0 (2016)

यह फिल्म एक सीरियल किलर और पुलिस अधिकारी के बीच की कहानी है, जिसमें डार्क कॉमेडी का अद्भुत उपयोग किया गया है। रमन अपने अपराधों को लेकर आत्मविश्वास से भरा है, और वह अपनी विचित्र नैतिकता पर तर्क करता है। यह हास्य और डर दोनों उत्पन्न करता है। राघव, जो खुद ड्रग एडिक्ट है, अपराधी को पकड़ने की कोशिश करता है। दोनों पात्रों के बीच की बातचीत गंभीरता और हास्य का अद्भुत संतुलन बनाती है।

डार्क कॉमेडी के तत्व:

रमन (नवाजुद्दीन सिद्दीकी) का असामान्य और मनोरोगी स्वभाव ऐसे हास्यपूर्ण पलों को जन्म देता है जो असहज और चौंकाने वाले हैं।

संवाद- "तूने कभी किसी को मारा है? नहीं मारा, तो क्या खाक जिया?"

रमन का यह बयान उसके twisted दर्शन को सामने लाता है। उसकी गंभीर बातों में एक हास्य का पुट छुपा होता है, जो उसकी विक्षिप्तता को और भयानक बनाता है।

रमन जब एक लाश के पास बैठकर उसे "दोस्त" की तरह बातें करता है, तो यह पल एक साथ डरावना और अजीब हास्यपूर्ण बन जाता है।

5. गुलाल (2009)

"गुलाल" छात्र राजनीति, सत्ता संघर्ष और सामाजिक अन्याय पर आधारित है। इसमें डार्क कॉमेडी के कई तत्व हैं। अनुराग कश्यप की *गुलाल* राजनीति, सामाजिक असमानता, और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा पर आधारित एक गहन फिल्म है। हालांकि फिल्म का टोन गंभीर है, इसमें डार्क कॉमेडी के ऐसे क्षण मौजूद हैं जो हास्य और विडंबना के जरिए समाज और सत्ता के खेल पर कटाक्ष करते हैं।

डार्क कॉमेडी के तत्व:

फिल्म के किरदारों की अजीब आदतें और उनकी बातें डार्क कॉमेडी पैदा करती हैं।

रणंजय की सत्ता के प्रति भूख और आदर्शों का मजाक उड़ाने वाला तरीका डार्क कॉमेडी का बड़ा स्रोत है।

संवाद: “राजा बनने के लिए खून तो बहाना ही पड़ेगा। कौन सा खून, ये मत पूछो।”

यह संवाद उसकी हिंसा और महत्वाकांक्षा को व्यंग्यात्मक अंदाज में उजागर करता है।

कर्ण (आभिजीत): कर्ण, जो पूरे फिल्म में एक ‘गुप्त योद्धा’ की तरह व्यवहार करता है, उसकी कुछ हरकतें हास्यास्पद लगती हैं। जैसे, खुद को युद्ध का महानायक मानते हुए दूसरों को घूरना और बेवजह की बातें करना।

दृश्य: जब रणंजय सिंह सत्ता के लिए अपनी टीम के सदस्यों को “देशभक्ति” के नाम पर काम करने के लिए मनाता है, तो उसकी बातें और उनके पीछे की सच्चाई इतनी विरोधाभासी होती हैं कि हंसी आ जाती है।

संवाद: **रणंजय:** “देशभक्ति सिर्फ झंडा लहराने में नहीं, कुर्सी हथियाने में भी है।”

फिल्म में क्रांति की कोशिशें, जो खुद क्रांतिकारियों की मूर्खता और आपसी झगड़ों के कारण असफल होती हैं, डार्क कॉमेडी का एक प्रमुख स्रोत हैं।

संवाद: “तुम क्रांति लाना चाहते हो, लेकिन एक गुट बना के लड़ रहे हो। ये क्रांति है या मोहल्ले का झगड़ा?” यह संवाद दिखाता है कि कैसे बड़ी लड़ाइयां छोटे स्वार्थों में उलझ जाती हैं।

6. नो स्मोकिंग (2007)

अनुराग कश्यप की *नो स्मोकिंग* एक बेहद प्रतीकात्मक और अस्तित्ववादी फिल्म है, जो धूम्रपान की लत और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधारित है। फिल्म का डार्क कॉमेडी का पहलू गंभीर विषयों को हास्यास्पद और विडंबनापूर्ण रूप से प्रस्तुत करता है। यह हास्य तब उत्पन्न होता है जब किरदार और स्थितियां असामान्य रूप से तर्कहीन, अजीब या कटाक्षपूर्ण दिखाई देती हैं।

डार्क कॉमेडी के तत्व:

मुख्य किरदार को धूम्रपान छोड़ने के लिए अजीब और हास्यपूर्ण सजा दी जाती है। फिल्म का मुख्य किरदार 'के' (जॉन अब्राहम) अपनी धूम्रपान की लत से मुक्त होने के लिए अजीबोगरीब स्थितियों में फंसता है। उसकी खुद की जिद और समाज की अपेक्षाएं डार्क कॉमेडी का मुख्य स्रोत बनती हैं।

संवाद: “सिगरेट पीना मेरे लिए सांस लेने जैसा है, और तुम चाहते हो मैं सांस लेना छोड़ दूं?” यह संवाद दर्शकों को एक पल के लिए हंसाता है, लेकिन उसकी लत और आत्ममुग्धता पर गहरी टिप्पणी करता है। प्रयत्नालय, जहां 'के' को अपनी लत छोड़ने का उपाय बताया जाता है, डार्क कॉमेडी का एक बड़ा केंद्र है। यहां के नियम इतने अतार्किक और कठोर हैं कि वे हास्यास्पद हो जाते हैं।

संवाद: **घुंघराले बाबा (परेश रावल):** “जो सिगरेट जलाएगा, वो जल जाएगा। और जो जल जाएगा, वो सिर्फ धुआं छोड़ेगा।”

यह संवाद बाबा के कट्टर स्वभाव को मजाकिया तरीके से पेश करता है।

फिल्म में 'के' और उसकी पत्नी (आयशा टाकिया) के बीच के कुछ संवाद हल्के-फुल्के हास्य के साथ रिश्तों की जटिलता पर कटाक्ष करते हैं।

संवाद: **पत्नी:** “तुम्हारे लिए सिगरेट ज्यादा जरूरी है या मैं?”

के: “सिगरेट। क्योंकि वो सवाल नहीं पूछती।”

यह संवाद सुनने में हास्यजनक लगता है, लेकिन रिश्ते की गहराई और तनाव को भी दर्शाता है। 'के' का आत्ममुग्ध स्वभाव और अपनी आदतों को सही ठहराने की आदत डार्क कॉमेडी को और गहरा बनाती है।

संवाद: **के:** “मैं सिगरेट छोड़ना नहीं चाहता, लेकिन दुनिया मुझे छोड़ने पर मजबूर कर रही है।” यह बयान नशे की लत के पीछे की मनोवैज्ञानिक विडंबना को मजाकिया ढंग से प्रस्तुत करता है।

दृश्य: जब 'के' हर बार सिगरेट छोड़ने की कसम खाता है लेकिन कुछ ही समय बाद उसे फिर से पीता है, तो यह हरकत हास्य के साथ लत की सच्चाई को उजागर करती है।

निष्कर्ष

डार्क कॉमेडी केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज की गहरी सच्चाइयों को उजागर करने का एक माध्यम है। यह शैली अनुराग की कहानियों को रोचक, प्रभावी और यादगार बनाती है। उनकी डार्क कॉमेडी दर्शकों को हंसाने के साथ-साथ उन्हें सोचने और समाज को नए दृष्टिकोण से देखने पर मजबूर करती है। इनकी फिल्म अपने हास्य के माध्यम से समाज, राजनीति और भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%B2%E0%A5%88%E0%A4%95_%E0%A4%95%E0%A5%89%E0%A4%AE%E0%A5%87%E0%A4%A1%E0%A5%80
2. https://www.aajtak.in/entertainment/film-review/story/bad-cop-review-gulshan-devaiah-steal-the-show-but-story-is-poor-anurag-kashyap-tmovs-1970407-2024-06-22
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Gangs_of_Wasseypur
4. https://youtu.be/VZVn29oW9-k?si=QbsMhsGtaVda0WLD
5. https://youtu.be/CXfb0uFSXXU?si=RkSHql-usyiEYz9r
6. https://youtu.be/ftVv-5krWdU?si=VIRbhi1sUJ72z_XX
7. https://youtu.be/eCrNdS_M2UM?si=aiiONWto28Mr_2jk
8. https://youtu.be/C8hLk-Np1_o?si=y5qzSxCTNNGo4HhP
9. हिन्दी सिनेमा का इतिहास - श्री मनमोहन चड्ढा
10. साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबंध - नीरा जलक्षत्रि
11. समकालीन फिल्मों के आईने में समाज - सत्यदेव त्रिपाठी

12.प्रसाद, प्रो० कमला.(2010).फिल्म का सौंदर्यशास्त्र और भारतीय सिनेमा
13.टॉकीज सिनेमा का सफर - राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली
14.हिंदी सिनेमा का सच - (सं.) मृत्युंजय, समकालीन सृजन, कलकत्ता, अंक 17, 1997

ईमेल : ravi04161@gmail.com मोबाईल न. - 8802574856

www.bohalshodhmanjusha.com **Bohal Shodh Manjusha** **ISSN: 2395-7115**
Impact Factor: 8.642 **February 2025** **Page No. : 205-206**
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

‘अधिगम का एकमात्र आधार अभ्यास’ को उजागर करती संतराम वत्स्य की कहानी ‘अभ्यास का महत्त्व’

डॉ. हरप्रीत कौर,
56, सैंट्रल टाऊन, थरीके रोड़, लुधियाना–142022

मानव एक सामाजिक प्राणी है, जब उसका जन्म होता है तो वह बिल्कुल असहाय होता है। वह अपनी माँ या अन्य लोगों के सहयोग के बिना अपने कार्य को करने में असमर्थ होता है। लेकिन जैसे जैसे वह बड़ा होता है, तो वह अभ्यास के माध्यम से अपने वातावरण से बहुत सी बातों का अधिनम करता है। अधिगम प्रक्रिया मानव जीवन का मुख्य अंग है, क्योंकि बिना अधिगम के किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करना मुश्किल कार्य है। मानव को अधिगम करने के लिये किसी विशेष परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती है, बल्कि जब उसका मन करता है तब वह कहीं भी, किसी भी समय और किसी से भी कुछ भी सीख सकता है। बस बात सिर्फ इतनी होती है कि उसके जीवन की मांग है जी.डी. बोआज के अनुसार, ”सीखना या अधिगम एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा दृष्टिकोण अर्जित करता है जो कि सामान्य जीवन की मांगों को पूरा करने के लिये आवश्यक है।“[1] अधिगम के माध्यम से ही मानवी जीवन के साथ जुड़ी हुई प्रत्येक समस्या का समाधान संभव है।

अधिगम को आम भाषा में सीखना भी कहा जाता है, लेकिन सीखना या अधिगम को स्थाई करने के लिये अभ्यास आवश्यक है। खास तौर पर छात्रों के लिये। अभ्यास से छात्रों को विभिन्न विषयों में अपने कौशल और समझ को बेहतर बनाने में मदद मिलती है। जितना अधिक छात्र अभ्यास करते हैं वे समस्याओं को हल करने और अवधारणाओं को लागू करने में उतने ही बेहतर होते हैं। अधिगम के दौरान जब छात्र नियमित रूप से अभ्यास करते हैं तो उससे उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और साथ ही साथ सफलता के अवसर भी बढ़ जाते हैं। अधिगम के साथ जब अभ्यास आकर जुड़ जाता है, तो जो परिवर्तन हम अपने जीवन में लाना चाहते हैं, वो निश्चित आकर रहता है। सरटैन नार्थ स्ट्रेंज तथा चैपमैन के अनुसार, ”सीखना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा अनुभूति या अभ्यास के फलस्वरूप व्यवहार में अपेक्षाकृत स्थाई परिवर्तन होता है।“[2] अधिगम और अभ्यास करने की कोई आयु नहीं होती है, मानव किसी भी समय इनको अपनाकर किसी भी क्षेत्र में सफलता व निपुणता प्राप्त कर सकता है और वे अपने जीवन में एक बड़ा परिवर्तन लेकर आ सकता है।

कहानी का मुख्य पात्र वरदराज है, जो एक विद्वान ब्राह्मण की संतान है। पुराने समय में स्कूल नहीं होते थे, अकसर बालकों को गुरुकुल गुरु के पास पढ़ने भेज दिया जाता था। गुरुकुल में उनके देख–रेख गुरु द्वारा की जाती है। वरदराज खाने–पीने का शौकीन था, जिससे उसका भार तो बढ़ गया, लेकिन बुद्धि थोड़ी मोटी हो गई, जो गुरु जी कहते उसे दिमाग में बात जाती नहीं थी। अकसर हम देखते हैं कि ऐसे छात्रों का मज़ाक उनके खुद के सहपाठी उड़ाते हैं और उनका उल्टा नाम भी लिया जाता है जैसे वरदराज को उसके सहपाठी मज़ाक उड़ाते कहते हैं, ”कोई बुद्धु कहता, तो कोई मूर्खराज। कोई कहता कि इसका दिमाग पोला है। कोई कहता इसके दिमाग में तो भूसा भरा हुआ है। एक लड़के ने तो उसे बरधराज कहना शुरू कर दिया। बरधराज का अर्थ हैः बैलों का राजा।“[3] बैल शब्द का प्रयोग अकसर बुद्धु लोगों के लिये किया जाता है। गुरुकुल हो या स्कूल, अकसर एक कमज़ोर छात्र का मज़ाक उसके साथियों के द्वारा उड़ाया ही जाता है। अकसर इस तरह के बालकों का अपने आप पर कोई ज़ोर नहीं चलता, उनके साथी आगे बढ़ जाते हैं और वे लोग न चाहते हुए भी उसी कक्षा में ही रह जाते हैं।

इस तरह के बालकों की सबसे ज्यादा चिंता उनके गुरुओं को होती है। एक अध्यापक अपनी ओर से पूरी कोशिश करता है एक कमज़ोर छात्र को सुधारने की परन्तु अगर उसमें कोई बदलाव नज़र नहीं आता, तो अध्यापक अपने दिल पर पत्थर रखकर उन्हें पढ़ाई छोड़कर किसी काम धन्धे को सीखने की सलाह देते हैं, ताकि जीवन में उसे भूखा मरने की नौबत न आ जायें। एक दिन गुरु जी ने निराश होकर कहाः बेटा वरदराज ! मैं समझता हूँ पढ़ना–लिखना तुम्हारे वश का नहीं है। मैंने कितना प्रयत्न किया, तुम्हें कितना समझाया अलग से भी पढ़ाया.... घर जाओ और घर का काम काज़ करो।"[4]

वरदराज गुरु की बात सुनकर अपना समान लेकर घर को चलदिया। जब अध्याप हाथ खड़ा कर देते हैं तो छात्र निराश हो जाते हैं, क्योंकि छात्रों का जीवन तो घूमता ही अपने अध्यापकों के आस–पास है, लेकिन अगर अध्यापक ही कह दे कि सीखना–पढ़ना छात्र के वश की बात नहीं तो छात्रों को भी लगने लगता है कि वे जीवन में कुछ नहीं कर सकते, उनका मन टूट जाता है। "वह खिन्न और उदास था। अपना जीवन उसे अंधकारमय और व्यर्थ लग रहा था। उसने सोचाः "इस जीने में तो मर जाना ही अच्छा है।"[5]

छात्र जब भी अंधकार में जाता है तो या तो वे उसमें कहीं गुम हो जाता है या फिर अंधकार में गया छात्र अपनी गलतियों से सीखकर ऐसे उभरता है जैसे बादलों में से सूर्य। वे अपने वातावरण में चारों ओर जब नज़र दौड़ाते हैं, तो बहुत बार उन्हें अपनी समस्याओं का हल मिल जाता है। "यह देखते–भालते उसकी नज़र कुएं की जगत पर गई। जगत पर पानी खींचने की रस्सी की रगड़ से जगह–जगह पत्थर घिस गए थे और निशान पड़े हुए थे.... उसने सोचाः बार–बार की रगड़ से कोमल रेश से बनी रस्सी पत्थर को काट सकती है। मिट्टी के घड़े जो जरा सी चोट लगने से टूट जाते हैं, उनसे पक्के पत्थरों पर गड्डे बन सकते हैं फिर लगातार परिश्रम करने से क्या मुझे पढ़ना–लिखना नहीं आ सकता।"[6] बात सिर्फ समझ की होती है, वैसे भी कहा जाता है कि बिना लड़े तो अनुभव भी नहीं आता है, अगर कुछ पाना है तो अभ्यास तो करना ही होगा। इस पे ही तो सफलता खड़ी है।

सीखना मुश्किल नहीं तो; अगर उसके साथ अभ्यास आकर मिल जाये, तो बड़ी से बड़ी बात को हम ने सिर्फ सीखते हैं, बल्कि ताउम्र उसे याद भी रखते हैं। "वरदराज की पढ़ाई प्रारंभ हुई। अब उसकी भूख और नींद पता नहीं कहाँ भाग गई। .....दिन में एक क्षण भी बेकार नहीं गंवाता था।"[7] जब कभी छात्रों में ऐसे परिवर्तन आता है तो सबसे ज्यादा खुशी अध्यापक को ही होती है और सहपाठियों को भी। सहपाठी जो कभी एक कमज़ोर छात्र का मज़ाक उड़ाते हैं, वहीं उसकी मेहनत को देखकर उसके साथ दोस्ती करना चाहते हैं। अभ्यास कभी बेअर्थ नहीं जाता है। इन्सान जितना अभ्यास करता है, सफलता उतनी जल्दी उसकी झोली में आकर गिर जाती है। कुछ भी सीखना उसके लिए संभव हो जाता है। जब अभ्यास इतना हो तो बड़ी से बड़ी उपाधि भी सहज ही प्राप्त हो जाती है। बाद में यही वरदराज प्रसिद्ध विद्वान बना। देवगिरि के राजा महादेव की सभा में वह महापंडित के पद पर सुशोभित हुआ।

अंत में हम कह सकते हैं कि अभ्यास के माध्यम से हम कुछ भी अधिगम कर सकते हैं और भारी विद्वान बन सकते हैं। बस मन में चाहत होनी चाहिए किसी भी विषय के बारे में अधिगम प्राप्त करने की और अभ्यास करने की।

संदर्भ सूचीः

1. वालिया, जे.एस., 'शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया', लुधियानाः टंडन प्रकाशन, 2014, पृ. 60
2. भाटिया, के.एस., 'शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया', लुधियानाः कल्याणी प्रकाशन, 2016, पृ. 42
3. देवसरे, हरिकृष्ण, 'बच्चों की 100 कहानियां', दिल्लीः शकुन प्रकाशन, 2017, पृ. 166
4. देवसरे, हरिकृष्ण, वही, पृ. 167
5. देवसरे, हरिकृष्ण, वही
6. देवसरे, हरिकृष्ण, वही, पृ. 168
7. देवसरे, हरिकृष्ण, वही, पृ. 169

मोबाइल : 98725–05975 ई–मेल : harpreet05@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 February 2025 Page No. : 207-211
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कामायनी का दर्शन और आनंदवाद

डॉ. आर. के. वर्मा, सहा. प्राध्यापक (हिंदी विभाग),
शासकीय दाऊ कल्याण सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय बलौदा बाजार (छ0ग0)

सारांश :–

मनुष्य परमात्मा का ही व्यक्त रूप है। उसका जीवन ज्ञान, क्रिया और भावना पर आघृत है। ज्ञान का संबंध सत् से क्रिया का चित्त से और भावना का आनंद से है। इस प्रकार उसी सूक्ष्म सत्ता की भांति मानव में भी इन तत्वों को देखा जा सकता है। कामायनी दर्शन का मुख्य आधार आनंदवाद है तैतीरीयोपनिषद में आनंद के विषय में कहा गया है – आनंद ही ब्रम्हा है, इसी आनंदवाद से समस्त प्राणी उत्पन्न होते, इसी में जीते और अंत में इसी में मिल जाते हैं। आनंद को प्राप्त करना प्रत्येक दर्शन का ध्येय है। उसको पाने के पथ और रथ अलग–अलग हो सकते हैं। कामायनी का साध्य भी आनंद को प्राप्त करना है। प्रसाद ने इस ध्येय की प्राप्ति के लिए श्रद्धा और इड़ा के शुद्ध समन्वय को प्रधान साधन बताया है। श्रद्धा और इड़ा का समन्वय इच्छा, ज्ञान और कर्म का सामंजस्य है। जो आनंद का पथ बनता है। इसी का दूसरा नाम मन, वाणी और कर्म का संगम है। प्रसाद का जीवन दर्शन प्रेम मूलक है। वे मानवीय भावनाओं के कवि हैं। उनकी अनुभूति एकान्तिक है, पर अभिव्यक्ति जनान्तिक है। उन्होंने अतिबौद्धिक एवं अतिमानवीय जीवन में प्रेमवृत्ति का कलात्मक सामंजस्य उपस्थित करके अपने काव्योपजीवी एवं भावप्रवण व्यक्तित्व का परिचय दिया है। जीवन की सम्यक व्याख्या के लिए प्रसाद के पास शैव और बौद्ध दर्शन का आधार है। कामायनी का यह मानव दर्शन हमें उस भावभूमि पर ला खड़ा करता है जहाँ संघर्ष, विषमता, दुख दैन्य सब तिरोहित होकर अखण्ड आनंद की धारा जीवन को हरा–भरा कर देती है। प्रसाद जी सामान्य मनुष्य नहीं थे वे गहरे चिन्तक थे। इसलिए उन्होंने जीवन, जगत, सृष्टि, ईश्वर, प्रकृति आदि पर विचार करते हुए आनंदवाद की कल्पना की थी। इसी क्रम में वे बुद्धिवाद, दुखवाद, तपस्या और त्याग, नियतिवाद आदि पर भी विचार करने में सफल हुए हैं। कामायनी में इन सभी से संबंधित उनके विचारों को दार्शनिकता प्रदान करते हुए जीवनोपयोगी दृष्टि से देखा है प्रसाद के जीवन–दर्शन विशेषकर कामायनी में व्यक्त जीवन दर्शन के स्पष्टीकरण के लिए कतिपय बिन्दुओं पर विचार आवश्यक है।

शोध आलेख :–

छायावादी कवियों में प्रसाद जी ऐसे कवि हैं जो ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, उसमें आस्था रखते हैं। यही कारण है कि चित्राधार से लेकर कामायनी तक यह धारणा क्रमशः इसी रूप में विकसित होती हुई दिखाई देती है। कामायनी में तो इस बिंदु तक पहुँच गए हैं कि वे किसी अदृष्ट सत्ता का आभास पाते रहते है। इतना ही नहीं वे यहाँ तक कह गए हैं कि –

"सिर नीचा कर किसकी सत्ता, सब करते स्वीकार यहाँ, सदा मौन हो प्रवचन करते, जिसका वह अस्तित्व कहाँ।"

प्रसाद अदृष्ट सत्ता का आभास तो पाते हैं, किन्तु वे यह नहीं समझ पाते कि वह सत्ता कैसी है और कहाँ है ? इसलिए कामायनी में कहते हैं –

"हे अनंत रमणीय कौन तुम ? यह मैं कैसे कह सकता कैसे हो ? क्या हो ? इसका तो भार–विचार न सह सकता" इस स्थिति में आकर प्रसाद जी यह भी सोचते हैं कि जब उस अन्नत सत्ता का कोई स्वरूप सामने नहीं आता, तब भी यह लगता है कि उसके शासन में ही सारा जगत क्रियाशील हो रहा है। प्रसाद जी कामायनी में शैव भावना से प्रभावित होकर प्रत्यभिज्ञा दर्शन के सिद्धांत के अनुसार ब्रम्हा

को विश्व व्यापक एवं विश्वोतीर्ण दोनों रूपों में स्वीकार किया है। इसी कारण उन्होंने ब्रम्हा को मंगल चेतन आलोक पुरुष के रूप में अभिव्यक्त किया है। ब्रम्हा को उन्होंने सर्जक भी माना और संहारक भी। 'संहार–सृजन से युगल पाद गतिशील अनाहत हुआ नाद।' कहने का अभिप्राय यह है कि प्रसाद जी ने कामायनी में ब्रम्हा को स्वीकार किया है और उसके प्रति जिज्ञासा भी व्यक्त की है और अन्ततः उसे सर्वोपरि मानते हुए सृष्टी का नियामक भी स्वीकार किया है। 1

कामायनी में आनंद को अपने युग के सन्दर्भ में नए सिरे से परिभाषित और पुनराविष्कृत करने का यत्न किया गया है। इस युग के खतरे प्रसाद की दृष्टि में है, अति भौतिकता और अति वैज्ञानिकता ये प्रवृत्तियाँ किसी देश विशेष की न होकर सम्पूर्ण नयी मानवीय संस्कृति की है जिसका केंद्र वर्तमान युग में यूरोप रहा है। प्रसाद ने इन अतिवादी प्रवृत्तियों से जूझने का रचनात्मक उपक्रम किया है, जो कामायनी की विशिष्ट प्रक्रिया और उपलब्धि है। इसे आनंदवाद कह देना भाषा के स्तर पर और इसलिए संवेदना और चिंतन के स्तर पर भी मानो इस सारी प्रक्रिया को अपने मन में अवरुद्ध कर लेना है। अतः समरसता और आनंद को प्रसाद के रचना अनुभव के केंद्र में तो हम माने पर उन्हें वाद के रूप में सिमित न कर दे। 2

पन्द्रह सर्गो वाली कामायनी में काश्मीरीय शैवाद्वैत दर्शन पुरुष–प्रकृति–शिव की त्रयी वाले कथा चक्र में इनका बंधान हुआ है। निजी विश्वास तथा आस्था की दृष्टि से स्वयं प्रसाद भी शैवागम धारा के आत्मवाद–आनंदवाद–सामरस्य के अनुयायी थे। शैवाद्वैत में जीव, ब्रम्हा तथा जगत तीनों अभेद तथा सत्य हैं। इसलिए यह दर्शन अभेदता तथा अद्वैतता पर आश्रित है। दर्शन चक्र में यह भी सही है कि कामायनी में कवि ने धर्म और नैतिकता की कोई भी साम्प्रदायिक अथवा निकायगत अवधारणा न तो स्वीकार की और न ही प्रसारित आत्मवाद–अद्वैतवाद–आनंदवाद के त्रिकोण में उन्होंने एक ऐसी भाववादी जीवन–प्रणाली का प्रतिपादन किया जो भौतिक जगत तथा जीवन समाज का नियमन करे जो सभी मनुष्यों के शांति पूर्ण परस्पर अभेदपूर्ण सहयोग पर आधारित हो। प्रसाद ने नियति का दार्शनिक उपयोग करने के बावजूद भी कर्म सिद्धांत को नहीं माना। उन्होंने महाकाव्य में निरंतर यही प्रतिपादन किया कि शक्ति से ही स्वतंत्रता प्राप्त होती है, दुर्बलता से नहीं। अलबत्ता वह शक्ति आध्यात्मिक भी हो सकती है। राष्ट्रीयता के सन्दर्भ में प्रसाद ने भी आनंद कला की धुरी पर लोकमंगल की साधना तथा सिद्धि दोनों का समाहार किया है। 3

कामायनी दर्शन की पृष्ठभूमि पर लिखी गई है। दर्शन का संबंध हृदय से न होकर मस्तिस्क से होता है। परन्तु वह गुढ़ होने के कारण सामान्य पाठक की पकड़ से बाहर होता है। उसके विचारों को उत्तेजना देने वाली सामग्री भी उपेक्षित है। प्रसन्नता की बात है कि यह काव्य इस दृष्टि से भी पाठकों को निराश नहीं करता। कवि ने स्थान–स्थान पर ऐसे विचार प्रकट किये हैं जो समाज को प्रेरणा देने वाले हैं। विविध दर्शनों को अनुशीलन करने एवं अपने वैयक्तिक अनुभव के आधार पर जीवन सत्य के विषय में सामाजिक व्यवस्था के संबंध में कवि की कुछ धारणा बन गई थी उसे जहाँ–तहाँ प्रकट किया गया है सर्वप्रथम चिंता सर्ग में ही कवि अतिशय सुख का परिणाम दुखमय होता है इस सत्य को प्रस्तुत करता है। प्राणियों पर क्रूरता उचित नहीं है। सृष्टि पर सभी जीवों को जीने का अधिकार है। मृगया का बलि के रूप में प्राण लेने का अधिकार किसी को नहीं है। यज्ञों में अतिमात्रा में पशुबलि देखकर ही नियति ने देवों को प्रलय के रूप में दण्ड दिया है।

प्रसाद जी के विचारो में जीवात्माएँ लहरों की भांति ही परमतत्व से निकली हुई है, इतने पर भी उनके निजी वैयक्तिकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता वे यह मानकर चले हैं कि प्रत्येक जीवात्मा की अपनी विशेषता होती है प्रसाद की ये पंक्तियाँ इसका प्रमाण है –

चेतन समुद्र में जीवन लहरों – सा बिखर पड़ा है
कुछ छाप व्यक्तिगत अपना निर्मित आकार खड़ा है।

परमात्मा समुद्र है और जीव बुदबुद है। यदि परमात्मा अनंत प्रकाशपुंज है, तो जीवात्मा टिमटिमाता हुआ तारा मात्र है –

इस ज्योत्सना के जलनिधि में बुदबुद सा रूप बनाये
नक्षत्र दिखाई देते, अपनी आभा चमकाये।

प्रसाद की प्रकृति विषयक दृष्टिकोण में यह माना है कि प्रकृति न तो जगत की उत्पत्ति का कारण बनती है और न ही नर्तकी के समान है। प्रसाद यह भी नहीं मानते कि वह आनंद शून्य है। प्रसाद जी ने तो यह स्वीकार किया है कि प्राकृत चेतन है और आनंद व प्रसन्न आभासित होती है। प्रसाद ने प्रकृ

ति को स्वतंत्र सत्ता भले ही न माना हो, किन्तु उसके आनंद रूप से इन्कार नहीं किया है। प्रसाद जी ने यह भी स्वीकार किया है कि प्रकृति मनुष्य की भांति किसी अदृष्ट सत्ता से नियंत्रित और शासित है उसे भी उसी परम सत्ता के कठोर शासन और विधान में बंधकर चलना पड़ता है। वास्तव में प्रसाद ने प्रकृति के सौंदर्यमय स्वरुप उसके आनंद युक्त आकार को स्वीकार करते हुए एक प्रकार से उसे आकर्षण का केंद्र माना है।

प्रसाद जी सभी मत–मतान्तरों को देखा, समझा और अपने ढंग से निष्कर्ष प्रस्तुत किये। यही कारण है कि उन्होंने जगत को न तो शंकर मत के अनुसार मिथ्या माना न सांख्य दर्शन एवं बौद्ध दर्शन की तरह दुखमय माना। उन्होंने जगत को आनंद–मूर्ति शिव का विग्रह माना और इसी कारण उसे आनंदमय स्वीकार किया है। वे स्पष्ट स्वीकार करके चले हैं कि जगत में जो दुख, विषमता एवं संघर्ष है वह दृष्टिदोष के कारण दिखलाई देता है अन्यथा तो जगत शुभ एवं मंगलमय है –

काम मंगल से मण्डित श्रेय, सर्ग इच्छा का परिणाम
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल, बनाते हो असफल भवधाम।

इतना ही नहीं प्रसाद ने यह भी स्वीकार किया है कि इस जगत में वही व्यक्ति ठहर पाता है जिसमें शक्ति होती है अथवा कहें कि बल होता है –

यह नीड़ मनोहर कृतियों का, यह विश्व कर्म–रंगस्थल है,
है परम्परा लग रही यहाँ, ठहरा जिसमें जितना बल है।

प्रसाद की कामायनी में जीवन के प्रति भी दृष्टिकोण व्यक्त हुआ है। कामायनी में इसके विषय में अपना मत व्यक्त किया है। जीवन में जो शाप, ताप और पाप दिखाई देता है वह हमारी भेद–बुद्धि के कारण है हम जीवन को सही दृष्टि से देखते ही नहीं हैं। यदि हम इसे सही दृष्टि से देखे तो जीवन रूपी वसुधा समतल भी है और समरस भी –

शापित न यहाँ है कोई, तापित पापी न यहाँ है,
जीवन वसुधा समतल है, समरस जो कि जहाँ है।

प्रसाद के साहित्य की अन्तश्चेतना में उल्लेखनीय है – उनकी आनंद भावना जीवन पर्यंत वे आनंद के उपासक तथा उद्‌गायक रहे हैं। यह कवि की अनुभव सिद्ध जीवन साधना का परिणाम है। प्रारम्भ में प्रसाद प्रेम और सौन्दर्य के चितेरे रहे हैं। सौन्दर्य के प्रति जिज्ञासा और तीव्र रिझान के कारण उनमें एक अद्‌भुत रागात्मिकता वृत्ति जग गई जो सुदृढ़ दार्शनिक चिंतन के आधार पर आंतरिक उल्लास के रूप में प्रकट हुई। जीवन के प्रौढ़काल में उन्होंने इसे प्रेमानुभूति का रूप दिया। वस्तुतः उनके कैशोर एवं यौवन काल की प्रेम–सौंदर्य तथा मस्ती की खुमारी ने ही दार्शनिक भाव–भूमि पर पहुँचकर समरसता मूलक आनंदवाद को जन्म दिया है। 4

वैदिक आनंदवाद का यही रूप है। वह मनुष्य के जीवन में प्रवृत्त और निवृत्ति का समन्वय चाहता है। मानवता के विकास और आनंद की प्राप्ती के लिए त्यागमय भोग की आवश्यकता है जीवन से दूर भागकर एकांत में तप–साधना यथार्थ जीवन नहीं है। जीवन की विषमता को दूर करने के लिए ज्ञान और कर्म का समन्वय आवश्यक है इसका समन्वय कर मन में समरसता उत्पन्न कर मानव को अखण्ड आनंद में लीन कर देता है। 5

शैव दर्शन का मूल तत्व भी आनंद है बौद्ध दर्शन की ब्रजयान शाखा के अंतर्गत इसी आनंदवाद को महासुखपद की संज्ञा दी गई है वास्तव में यह आनंद स्वरुप स्थिति ईश्वरत्व की ही स्थिति है तैत्तिरीय उपनिषद में आया यह वाक्य 'अयमात्मा परानन्दः' आत्मा को ही आनंद स्वरुप मानने के पक्ष में है। प्रसाद जी ने कामायनी के रहस्य सर्ग में समरसता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। उन्होंने इस सिद्धांत को प्रत्यभिज्ञा दर्शन से लिया है। समरसता सिद्धांत के बारे में स्वच्छंद तंत्र में उल्लेख आया है कि जिस प्रकार एक नदी समुद्र में मिलकर समरसता को प्राप्त होती है और समुद्र व उस नदी में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं रह जाती है उसी प्रकार जब आत्मा परमात्मा को प्राप्त होकर एकरूप हो जाती है तो उसी को सामरस्य या समान रस की भावना कहते हैं। प्रसाद जी ने प्रत्यभिज्ञा दर्शन के आधार पर समरसता का उल्लेख करते हुए बतलाया है कि प्रत्येक मनुष्य समरसता का अधिकारी है – "नित्य समरसता का अधिकार उमड़ता, कारण जलधि समान।" कारण यह है कि जहाँ विषमता है वहां समरसता नहीं है और जहाँ समरसता है वहां विषमता का कोई अस्तित्व नहीं है। विषमता से मुक्ति पाने के लिए प्रसाद जी ने कामायनी में जो समाधान प्रस्तुत किया है, वह न केवल दर्शन का विषय है, अपितु व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत होने के कारण अत्यन्त उपयोगी बन पड़ा है। प्रसाद जी ने सभी क्षेत्रों में समरसता स्थापित करने

पर जोर दिया है। उन्होंने समरसता के लिए अनेक क्षेत्रों में प्रयत्न किया है। इसके लिए उन्होंने बुद्धि, हृदय की समरसता, इच्छा, ज्ञान और क्रिया का शासक और शासित का नर और नारी का व्यष्टि और समष्टि का समन्वय चित्रित करते हुए व्यक्ति की समरसता पर भी जोर दिया है।

बौद्ध दर्शन की मान्यता है कि संसार दुखमय है। इस संसार में प्रत्येक प्राणी दुःख भोगने के लिए विवश हैं। अतः बौद्ध दर्शन यह बतलाता है कि हमें सम्पूर्ण सुख की इच्छा का त्याग कर देना चाहिए। हमें अहिंसा को ग्रहण कर दुख को वरण कर लेना चाहिए। जब हम दुख को वरण कर लेंगे तो सुख की इच्छा ही नहीं रहेगी और दुख आने पर भी दुखानुभूति नहीं होगी। अतः त्याग का अपना महत्त्व है। कामायनी के अंतर्गत हमें संसार के प्रति दुःख और निराशा जनित भावधारा कई स्थानों पर देखने को मिलती है –

जीवन निशीथ के अंधकार।
तू घूम रहा अभिलाषा के नव ज्वलन धूम सा दुर्निवार।
श्रद्धा सर्ग में प्रसाद जी ने लिखा है –
नित्य समरसता का अधिकार, उमड़ता कारण जलधि समान
व्यथा से नीली लहरों बीच, बिखरते सुख–मणि–गण धुतिमान।

कहने का अभिप्राय यह है कि कामायनी के अंतर्गत बौद्धों के दुखवाद के संकेत अनेक स्थानों पर मिलते हैं परन्तु कामायनीकार का लक्ष्य दुखवाद का प्रचार–प्रसार करना नहीं है कामायनी के प्रारम्भिक चिन्ता सर्ग में बौद्ध दर्शन का दुखवाद किंचित रूप–स्वरुप देखने को मिलता है, किन्तु अन्त में प्रत्यभिज्ञा दर्शन के समरसता सिद्धांत का निरूपण किया है। कामायनी में जहाँ प्रत्यभिज्ञा दर्शन बौद्ध दर्शन की रेखाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं वही नियतिवाद दर्शन भी स्पष्ट दिखाई देता है –

नियति चलाती कर्म चक्र यह, तृष्णा जनित ममत्व वासना,
पाणि पादमय पंचभूत सी यहाँ हो रही है उपासना।
कर्म चक्र सा घूम रहा है, यह गोलक, बन नियति प्रेरणा,
सबके पीछे लगी हुई है, कोई व्याकुल नई ऐषणा।

निष्कर्ष :–

समग्र विवेचनोपरांत यह कहा जा सकता है कि कामायनी का मूल दर्शन प्रत्यभिज्ञा दर्शन पर आधारित है। कवि की धारणा आनंदवाद की स्थापना के पक्ष में रही है और उसके विविध भावों क्रियाओं और ज्ञान–चेतनाओं में सामंजस्य दिखाकर समरस स्थिति में जीने की प्रेरणा दी है। वे भले ही बौद्ध दर्शन आदि से प्रभावित रहे हो, किन्तु उनकी कामायनी अंततः आनंदवाद की भूमिका पर खड़ी दिखाई देती है। सृष्टि के विकास की प्रक्रिया कामायनी में चित्रित हुई है, वह भी एक क्रमिक धारा के रूप में प्रसाद के मूल दर्शन और चिन्तन को सामने लाती है। कामायनी में जीवन वैराग्य, कर्म , अहिंसा, करुणा आदि कितने ही मनोभावों पर प्रसाद ने अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया है, किन्तु उनका मूल सन्देश यही प्रतीत होता है कि हृदय और बुद्धि में ज्ञान और कर्म में सामंजस्य बिठाये बिना जीवन को सार्थक नहीं बनाया जा सकता है। सार्थकता तप में नहीं कर्म करते हुए जीवन को जीने में है और उनका यह दर्शन निष्काम कर्म से भी आगे जाकर जिस भूमिका पर खड़ा है वह आज भी प्रासंगिक है। कामायनी में जो दर्शन अभिव्यक्त हुआ है वह आरोपित नहीं लगता है, वह कवि की काव्य प्रतिभा से निःसृत तरंगों से ऐसे घुल–मिल गया है कि कविता और दर्शन के बीच अद्वैत स्थापित हो गया है। 6 कामायनी का दर्शन हमें यह बताता है कि आनंद की सृष्टि अन्तस और बाह्य की मिली–जुली सृष्टि है। जीवन में कर्मयोगी बनना ही जीवन और जगत में सुख और आनंद को प्राप्त करना है।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

(1) शर्मा हरिचरण : कामायनी विमर्श, प्रकाशन मलिक एण्ड कम्पनी, प्रथम संस्करण 2005 पृष्ठ – 103
(2) चतुर्वेदी रामस्वरुप : कामायनी का पुनर्मूल्यांकन, लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद छठा संस्करण 2003 पृष्ठ 32–33
(3) रमेश कुंतल मेघ : कामायनी पर नयी किताब, अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहबाद संस्करण 1995 पृष्ठ 85–86

(4) दिक्षित डॉ. सूर्य प्रसाद, सिंह डॉ. योगेन्द्र प्रताप, आधुनिक – अत्याधुनिक हिंदी कवि, भारत बुक सेण्टर लखनऊ प्रथम संस्करण वर्ष 2006 पृष्ठ – 25

(5) भारती सुशीला, कामायनी इतिहास और रूपक, विश्वभारती प्रकाशन नागपुर, द्वितीय संस्करण 2003 पृष्ठ – 91

(6) शर्मा हरिचरण : कामायनी विमर्श पृष्ठ 113–114

मो.नं. – 9406019833, मेल आईडी – dr.rajverma@yahoo.com

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा
Bohal Shodh Manjusha
AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh
SANGAM
A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिंटर्स,
भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115